प्रस्तावना

जब जापान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री तथा इंटरएक्शन परिषद (InterAction Coucil) के संस्थापक स्वर्गीय ताकेओ फुकुदा ने, अस्सी के दशक के आरंभ में, मुझसे परामर्श किया कि वे राज्यों तथा सरकारों के भूतपूर्व प्रमुखों को शामिल करते हुए एक संस्था की स्थापना करना चाहते हैं ताकि दीर्घकालीन वैश्विक समस्याओं पर विचार किया जा सके, तो मैं निःसंकोच उनसे सहमत हो गया। तब तक हम दोनों, अपनी–अपनी सरकारों के लिए विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए, परस्पर विचार–विमर्शों व समझौतों के दौरान आत्मीय मित्र बन चुके थे और मैं जानता था कि हम दोनों ही संसार के विविध मसलों पर अपने विचार बाँट सकते थे क्योंकि हम दोनों ही उनके प्रति चिंतित थे। *इंटरएक्शन* की स्थापना सन् 1983 में की गई। पिछले तीन दशकों के दौरान, लगभग तीस भूतपूर्व नेताओं ने, पाँचों महाद्वीपों की विविध राजधानियों व नगरों में परस्पर भेंट की ताकि राजनीतिक/ भूराजनैतिक, आर्थिक/ वित्तीय व पर्यावरणीय/ विकास से जुड़े क्षेत्रों में दीर्घकालीन वैश्विक समस्याओं को संबोधित किया जा सके।

परंतु ताकेओ फुकुदा केवल राजनीतिक नेताओं द्वारा किए विचार–विमर्श से ही संतुष्ट नहीं थे। वे चाहते थे कि धार्मिक नेताओं व राजनीतिक नेताओं के बीच संवाद होना चाहिए, क्योंकि उन्हें इस विषय में जानकारी थी कि अधिकतर वैश्विक समस्याएँ मानव–जनित ही थीं। उन्हें लगा कि राजनीतिक नेताओं को उन धार्मिक नेताओं से सीख लेनी चाहिए, जो हज़ारों वर्षों से प्राचीन प्रज्ञा व परंपराओं का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। मैंने सोचा कि उनके लिए ऐसा विचार करना उपयुक्त ही था क्योंकि 'हार्दिक संप्रेषण' ही तो उनकी राजनीतिक निष्ठा का सार रहा था। उनके लिए इसका अर्थ था कि वे जिनके साथ संपर्क रख रहे थे, उनके प्रति गंभीरता, ईमानदारी, आपसी समझ, सहिष्णुता व स्वीकृति का भाव रखना, फिर भले ही वे संपर्क औपचारिक हों अथवा व्यक्तिगत। हो सकता है कि इसे राजनीतिक रूप से सरलमति माना जाए परंतु वे इस संसार को और अधिक न्यायी व शांतिपूर्ण बनाने के लिए अपना योगदान देना चाहते थे।

धार्मिक नेताओं व राजनीतिक नेताओं के बीच परस्पर विभिन्न विश्वासों व धर्मों से जुड़ी पहली भेंट, सन् 1987 में रोम में इटली के सिविल्टा कैथोलिका नामक स्थान पर हुई। इतिहास में पहली बार, वहाँ धार्मिक पक्ष से बौद्ध, कैथोलिक, हिंदू, इस्लाम, यहूदी, प्रोटेस्टेंट व यहाँ तक

कि नास्तिक तथा राजनीतिक पक्ष से रूढ़िवाद, सामाजिक प्रजातंत्र, उदारवाद, साम्यवाद, तानाशाही तथा प्रजातंत्र में विश्वास रखने वाले नेतागण एकत्र हुए।

शीतयुद्ध के चरम के दौरान, अभी धर्म से जुड़े मसले सीमित ही थे। सभी इस बात से सहमत थे कि मनुष्य जाति ऐसी परिस्थितियों के बीच थी कि यदि दीर्घकालीन समस्याओं का सामना न किया जाता तो भविष्य बहुत कठिन हो सकता था, और इसके साथ ही यह भी अनिवार्य था कि राजनीतिक नेता व धार्मिक नेता, आपस में मिल कर संभावित समाधानों पर चर्चा करें। मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि यहाँ तक कि परिवार नियोजन जैसे विषय पर भी आम सहमति पाई गई। इसी विस्तृत आम सहमति ने हमें प्रेरित किया कि हम अंतःविश्वासों से जुड़े इस संवाद को बनाए रखें। परिषद ने स्वयं ही ऐसे दस अंतः विश्वासों से जुड़े संवादों का आयोजन किया, जो कि सौभाग्यवश *ग्लोबल एथिक फाउंडेशन* के संस्थापक तथा टुबिन्जेन विश्वविद्यालय के भूतपूर्व प्रोफ़ेसर हान्स कुंग के मार्गदर्शन में संपन्न हुए। तब से पूरे विश्व में ऐसी ही अनेक पहलों को भी प्रोत्साहन मिला।

चूँकि मेरे जीवन का अंत अब निकट है, और पूरे विश्व में सभी धर्मों तथा विश्वासों से जुड़े संघर्षों तथा युद्धों को देखते हुए, मेरी यह हार्दिक अभिलाषा है कि मुझे एक बार फिर ऐसे ही संवाद का हिस्सा बनने का अवसर मिले। विएना, ऑस्ट्रिया में, मार्च 2014 में मेरी यह इच्छा पूरी होने से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई, यही वह स्थान था, जहाँ परिषद का जन्म हुआ और मैं परिषद का कृतज्ञ था कि उन्होंने इस अवसर को मेरे पचानवें जन्मदिवस के समारोह में बदल दिया। मुझे यह जान कर और भी हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि इसके सभी विमर्शों को एक पुस्तक का आकार दिया जा रहा है।

मेरे व ताकेओ फुकुदा के मन में, लंबे समय से यह विचार चलता आ रहा था कि जनसंख्या तेज़ी से बढ़ रही है और हमारे पास प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा सीमित है। वर्ष 1900 में, इस मानचित्र में 1.6 बिलियन मनुष्य थे। पिछली बीसवीं सदी के दौरान यह संख्या चार गुना से अधिक हो गई और आज हमारी संख्या 7 बिलियन से अधिक है। केवल एक ही सदी में जनसंख्या का चार गुना हो जाना, मनुष्य के इतिहास की पहली घटना है। प्रायः यह अनुमान लगाया जाता है कि इक्कीसवीं सदी के मध्य तक, हमारी जनसंख्या स्थिर होने से पूर्व, 9 बिलियन से अधिक होगी, जिसमें से अधिकतर को विवश हो कर शहरों में जीवन व्यतीत करना होगा।

हो सकता है कि इक्कीसवीं सदी में प्राकृतिक आपादओं के बढ़ते आकार व बारंबारता इसका ही प्रकटीकरण हो। वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या हम वास्तव में इस मानचित्र पर 9 बिलियन मनुष्यों को संभाल सकते हैं? जिस संसार में अरबों लोगों को उनकी बुनियादी ज़रूरतों तक से वंचित रखा जाएगा, जिनमें यहाँ तक कि भोजन और पानी भी शामिल है, हम

एक न्यायी व शांतिपूर्ण समाज की आकांक्षा कैसे रख सकते हैं? मेरे अनुसार, यह एक बहुत ही गहन और भारी प्रश्न है, जिसके लिए मेरे पास कोई उत्तर नहीं है।

यद्यपि विएना में हुए वार्तालाप के दौरान, इस प्रश्न पर या अन्य ऐसे ही अनेक प्रश्नों पर कोई स्पष्ट सर्वसम्मति नहीं मिली, परंतु मैंने धार्मिक गुरूओं के मुख से एक बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश की प्रतिध्वनि सुनी। उनके अनुसार, जो व्यक्ति एक अधिक न्यायी व शांतिपूर्ण जगत के लिए उत्तरदायी व अथक संघर्ष के माध्यम से सुधार को स्वीकार करते हैं, वे दूसरों में सुधार की अपेक्षा भी रख सकते हैं। विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के बीच समान रूप से पाई जाने वाली वैश्विक नीतियों का समर्थन करते हुए, दिन–प्रतिदिन, छोटे–छोटे चरणों में अपने लक्ष्य के निकट जा सकते हैं।

यह संदेश मुझे विएना में जन्मे कॉर्ल पॉपर के निम्नलिखित शब्दों का स्मरण दिलाता है, जो उन्होंने 'इंटलैक्चुअल आटोबायोग्राफ़ी' में लिखे हैं, "हमारे बच्चों, हमारे सिद्धांतों व अंततः हमारे द्वारा किए जाने वाले कार्य के साथ, हमारे उत्पाद कुल मिला कर, अपने निर्माता से स्वतंत्र हो रहे हैं।" हम अपने बच्चों व सिद्धांतों के माध्यम से कहीं अधिक ज्ञान अर्जित कर सकते हैं, जितना कि हमने कभी उन्हें दिया है। इस तरह हम स्वयं को, अपने अज्ञान के दलदल से बाहर ला सकते हैं।

दिसंबर 2014

हेल्मुट श्मिट्

हैमबर्ग, जर्मनी

परिचय

इंटरएक्शन परिषद (देशों व सरकारों के भूतपूर्व प्रमुख सहित), की स्थापना 1983 में, विएना, ऑस्ट्रिया में हुई। इसे उन दीर्घकालीन वैश्विक समस्याओं का हल खोजने के लिए बनाया गया था, जिन्हें प्रायः वर्तमान सरकारें उपेक्षित कर देती हैं। पिछले तीन दशकों से, हमने भूतपूर्व नेताओं सहित संबंधित विशेषज्ञों को अपने साथ जोड़ा ताकि वर्तमान नेताओं तथा विश्व के लिए नीति संबंधी अनुशंसाएँ विकसित की जा सकें। प्रायः ऐसा सामूहिक चिंतन, वर्तमान पारंपरिक चिंतन से हट कर होता है, परंतु बाद में इसे सबके द्वारा स्वीकृत कर लिया जाता है।

इन महत्वपूर्ण पहलों में से एक थी, राजनीतिक व धार्मिक नेताओं के बीच अंतःविश्वास संवाद स्थापित करना। शीतयुद्ध के चरम के दौरान, परिषद के नेतृत्व ने, स्वर्गीय संस्थापक ताकेओ फुकुदा की पहल के साथ, 1987 में, इटली, रोम में पहला इंटरफेथ डायलॉग सम्मेलन आयोजित किया। रोम में काफ़ी अच्छा व प्रभाशाली समझौता सामने आया, जैसा कि हेल्मुट श्मिट् ने प्रस्तावना में कहा।

इंटरफेथ डायलॉग हमारे विचार–विमर्श का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बना, क्योंकि विभिन्न धर्मों के आपसी मतभेद और संघर्ष ही आपसी कलह–क्लेश तथा घृणा व हत्याओं के कारण बनते हैं। हम इसे धर्म का प्रतिकूल रूप मानते हैं, हमें आपसी संवाद के माध्यम से अतिवादिता और विभाजन का सामना करना होगा। हमारा यह मानना है कि संसार के सभी प्रमुख धर्मों तथा दर्शनों के बीच सामान्य आचार नीति व नियम पाए जाते हैं। हम उन्हीं सामान्य रूप से पाई जाने वाली आचार नीतियों को जानना चाहते थे, जो विभिन्न धर्मों के आपसी विभाजन को घटाते हुए, एक सुरक्षित जगत के निर्माण के लिए अनिवार्य होती जा रही थीं। इस तरह यह बड़े विमर्श का हिस्सा बना। आचार संबंधी मापदंडों की अवहेलना के साथ व्यापार, वाणिज्य तथा राजनीति का वैश्वीकरण बढ़ा है। अगर विश्व के सभी प्रमुख धर्मों से हमें एक सामान्य व सर्ममान्य आचार संहिता मिल जाती तो यह विश्व शांति का उपयोग साधन हो सकती थी, यह व्यापार तथा वाणिज्य के अलावा अन्य क्षेत्रों पर भी यथेष्ट प्रभाव डाल सकती थी। परिषद ने 1996 और 1997 में, विएना, ऑस्ट्रिया में, धर्मशास्त्री प्रोफ़ेसर हान्स कुंग के नेतृत्व में दो इंटरफेथ डायलॉग आयोजित किए, वे एक लंबे समय से वैश्विक आचार व नीति के समर्थन में कार्य करते आए हैं।

आपस में बहुत लंबी और गहन परिचर्चा के बाद, 1997 में सबकी सहमति से एक वैश्विक आचार व नीति के मापदंड बनाए गए, इस प्रालेख का शीर्षक रखा गया, 'मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा'। इसके मूल में वही सुनहरा नियम छिपा था – जो आप अपने साथ नहीं चाहते, दूसरों के साथ वैसा व्यवहार मत करो।' हमें आशा थी कि

संयुक्त राष्ट्र इसे 'मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा' के दूसरे स्तंभ के रूप में स्वीकार लेगा। यह दुर्भाग्यपूर्ण रहा कि इस विचार को इतना समर्थन नहीं मिल सका कि संयुक्त राष्ट्र इस पर अपनी कारवाई करता। मानव के दायित्व, उसके अधिकारों के सिक्के का दूसरा पहलू हैं। अगर कोई मानव अधिकारों का आनंद लेना चाहता है तो उसे पूरी गंभीरता के साथ व्यवहार करना होगा। ज़िम्मेदार रवैए के बिना, मानव अधिकार कोई महत्व नहीं रखते। हालाँकि हमारे इस प्रालेख को दक्षिण, दक्षिणपूर्व, पूर्वी एशिया तथा तीसरी दुनिया के बीच बहुत समर्थन मिला और लोकप्रियता हासिल हुई।

9/11 के बाद, दूसरे इराक युद्ध का सामना करते हुए, यह चिंता गहराने लगी कि कहीं आतंक का यह युद्ध हमारे लिए भारी अस्थिरता का कारण न बन जाए और इसके प्रभाव से पूरे संसार में होने वाली अव्यवस्था के बारे में विचार करते हुए, इंडोनेशिया के जकार्ता में एक और इंटरफेथ डायलॉग आयोजित किया गया। दल में सभी धार्मिक नेताओं को बुलाया गया ताकि वे हिंसा और आतंकवाद की धार्मिक वैद्यता को अस्वीकृत कर सकें, विश्व के नेताओं से अपील कर सकें कि वे विभिन्न धर्मों व जातियों से आए लोगों के बीच विभाजन की खाई को सकारात्मक क़दमों से पाटने की चेष्टा करें। सहिष्णुता की अपील हो, सत्यता और समान अधिकारों व स्त्री–पुरुषों के बीच समान साझेदारी के साथ जीवन जीया जाए, सार्वभौम मानव अधिकारों तथा बुनियादी वैश्विक नीति संबंधी स्तरों को मान मिल सके; और जीवन के प्रति सम्मान तथा अहिंसा, एकता व न्यायपरक आर्थिक व्यवस्था की संस्कृति विकसित हो। इनमें से अनेक मूल्यों को इंडोनेशिया में पूरी कड़ाई से जारी रखा गया है, जिसे विश्व के सबसे बड़े इस्लामिक देश के संचालन को संयम तथा विवेक के साथ चलाने के लिए, पर्याप्त श्रेय नहीं दिया गया।

2007 में, हमने वाणिज्यिक, वित्तीय और व्यावसायिक समुदाय में नीति संबंधी स्तरों पर गहरी गिरावट को देखा, हमने जर्मनी के टुबिन्जेन में एक और इंटरफेथ संवाद आयोजित किया, विषय यही था कि विश्व के धर्मों को शांति, न्याय व नीति की स्थापना के लिए पुनः जीवित कैसे किया जाए। तब भी यही निष्कर्ष निकला कि विश्व के सभी प्रमुख धर्मों को शामिल करते हुए एक सामान्य नीति व आचार विकसित होना चाहिए जिसका सभी पालन कर सकें। धर्म को आतंक और आपसी कलह का साधन होने की बजाए, बचाव के बल और एकता के तौर पर सामने आना चाहिए। दुर्भाग्यवश, अक्सर कट्टरपंथी इसे विभाजन करने के लिए प्रयोग में लाते हैं। यह घोषणा की गई कि धार्मिक नेता, लोगों को वैश्विक समस्याओं का हल निकालने की दिशा में सहायक हो सकते हैं। शांति व एकता के उपाय तलाशने की प्रक्रिया में, अनुशंसाएँ तय की गईं और साथ ही यह भी ध्यान रखा गया कि सांस्कृतिक विविधता तथा समुदायों की मान्यताओं पर प्रहार न हो – ताकि यह पहचान कायम की जा सके कि सभी धर्मों के साधारण नीति संबंधी नियम ही वैश्विक नागरिकता

की बुनियाद हैं। हमें राजनीतिक नेताओं द्वारा धर्म के दुरूपयोग पर रोक लगानी होगी और धार्मिक नेताओं से आग्रह करना होगा कि वे अपने धर्म को राजनेताओं के हाथों का मुहरा न बनने दें। हमें धार्मिक आंदोलनों की शक्ति को निखारना होगा ताकि जीवन और पृथ्वी की रक्षा से जुड़ी पर्यावरणीय चुनौतियों को हल किया जा सके और भावी पीढ़ियों के हितों की रक्षा हो सके। इन अनुशंसाओं में एक सामान्य नीतिशास्त्र की माँग अनिवार्य तौर पर सामने आई।

इस प्रकार, हम लंबे समय से यह मानते आए हैं कि विश्व के प्रमुख धर्मों से मिले नीतिशास्त्र से हमें शांति का दीर्घकालीन आधार मिल सकता है और हम एक न्यायी और मानवोचित विश्व की कल्पना को साकार कर सकते हैं। हम निश्चित रूप से यह भी जानते थे कि इस नीतिशास्त्र को तोराह, गॉस्पल, कुरान, भगवद् गीता, बुद्ध या कंफ्यूशियस की शिक्षाओं का विकल्प नहीं मान सकते। यह कम से हमें कुछ ऐसे मूल्य और नैतिक प्रवृत्तियाँ देने में सफल होगा, जिन्हें सभी धर्म आपसी मतभेदों के बावजूद स्वीकार कर सकते हों। इसका यह रूप उन लोगों द्वारा भी स्वीकृत हो जो अनीश्वरवादी हैं और धार्मिक मान्यताओं को माने बिना जीते हैं।

यह सामान्य नीतिशास्त्र दो नियमों पर आधारित है, जो प्रत्येक व्यक्ति, सामाजिक व राजनीतिक सत्ता के लिए महत्व रखता है : 1. हर मनुष्य के साथ मानवता से पेश आना चाहिए 2. जो आप अपने साथ नहीं चाहते, दूसरों के साथ वैसा व्यवहार मत करो।' हमने ऐसी चार वचनबद्धताओं को खोज निकाला, जिन पर सभी धर्मों ने अपनी सहमति प्रकट की। वे हैं –

–अहिंसा के प्रति वचनबद्धता और जीवन के प्रति सम्मान का भाव

–एकता और न्यायी आर्थिक व्यवस्था के प्रति वचनबद्धता

– सहिष्णुता तथा सत्यता से पूर्ण जीवन के प्रति वचनबद्धता

–स्त्री और पुरुषों के बीच समान अधिकारों और साझेदारी की वचनबद्धता

21 वीं सदी में प्रवेश के साथ, विश्व की इन समस्याओं के लिए एक आम वचनबद्धता का होना आवश्यक होता जा रहा है। हमने अपनी इस मान्यता और विश्वास को भी निखारा है कि सामान्य नीति की स्वीकृति से विश्व के लोगों के बीच शांति तथा सामंजस्य की नींव रखी जा सकेगी। परंतु प्रमुख सरकारों के बीच, नीति निर्माण को ले कर, दुविधा दिखाई देती है। वे नीति संबंधी मूल्यों को अपनाना ही नहीं चाहते। हमारे सामने इस समय सबसे बड़ा प्रश्न ही यही है कि सभी क्षेत्रों में, नीति संबंधी व्यवहार के महत्व को पुनः कैसे रेखांकित किया जाए?

कौंसिल के सभापति इंटरएक्शन कौंसिल के अधीन एक और संवाद देखने के इच्छुक थे, इसलिए हमने तय किया कि एक बार फिर विएना, ऑस्ट्रिया में इस प्रक्रिया को दोहराया जाए, जहाँ इंटर एक्शन का जन्म हुआ था। हम इस अवसर पर चांसलर श्मिट् के बौद्धिक नेतृत्व को भी सराहना चाहते हैं और उन्हें उनके पचानवें जन्मदिवस की शुभकामनाएँ देते हैं। आदरणीय डॉ. फ्रांज़ वरानतिज़्की, ऑस्ट्रिया के भूतपूर्व चांसलर, ,सह–सभापति, इंटरएक्शन परिषद तथा विएना इंटरफेथ डायलॉग के व्यवस्थापक सभापति ने 2014 में 26–27 मार्च को इसे आयोजित किया। संवाद का प्रमुख प्रश्न यही था कि 'राजनीति में इन नीति संबंधी मूल्यों का क्या महत्व है?' हम नेताओं के लिए यह कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि वे अपनी रोज़मर्रा की पहल में, केवल नीति की बातें करने की बजाए, उसे अपने व्यवहार में उतारें? हमने निम्नलिखित प्रश्नों पर अध्ययन किया :

– हमने बीसवीं सदी के इतिहास से क्या सीखा? हमने किन पाठों की उपेक्षा की और किन्हें भुला दिया?

– क्या हम अपने धर्म, संस्कृति तथा सभ्यता से जुड़ी पहचान की रक्षा करते हुए दूसरे देशों तथा लोगों की पहचान को आदर–मान दे सकते हैं?

–क्या राष्ट्रीय, संस्थागत या व्यक्तिगत हित, सदा नैतिक मूल्यों पर हावी रहेंगे, सत्य और न्याय के बल को झुकाते रहेंगे?

– क्या नीति सम्मत मानवीय व्यवहार वास्तव में शांति और न्यायपरक जगत की ओर ले जा सकता है, यह प्रश्न आगे आने वाली 9 बिलियन जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए किया गया है।

जैसा कि हेल्मुट श्मिट् ने प्रस्तावना में कहा, कुछ प्रश्नों पर कोई ठोस और सुनिश्चित उत्तर नहीं दिए गए। हालाँकि, सभा में लाए गए प्रपत्र तथा विविध विचार–विमर्श इतने मूल्यवान थे कि हमने कारवाई की प्रक्रिया को पुस्तक के रूप में लाने का विचार किया।

जब हम मार्च 2014 में, विएना में मिले, तो अभी आईएसआईएस इस रूप में सामने नहीं आया था और बोको हरम भी वैश्विक रूप से इतना प्रसिद्ध नहीं था। ताज़ा हालात ने विविध संस्कृतियों और धर्मों के अंतर को और भी उजागर कर दिया है। वाणी की स्वतंत्रता तथा इसकी सीमा व दुरूपयोग, किसी एक संस्कृति में धर्मनिरपेक्ष मूल्यों की अभिव्यक्ति का अनिवार्य साधन माना जाता है जबकि कुछ खास धर्म व संस्कृतियों में इसकी अनुमति नहीं दी जाती। यह प्रश्न बारंबार पूछा जाता रहा है कि क्या वाणी की स्वतंत्रता के साथ धर्मों का समाधान संभव है। यह उस विशाल समस्या का एक पहलू भर है, जिसका आज हम सामना कर रहे हैं।

यही कारण है कि विएना मीटिंग बहुत महत्वपूर्ण थी क्योंकि इसने मतभेदों को रेखांकित करते हुए, यह देखने का प्रयास किया कि क्या कोई सामान्य आधार तलाशा जा सकता था? सत्र में यह भी बताया गया कि धर्मों के बीच आपसी मतभेद भी कम नहीं हैं। सत्र में प्रमुख तौर पर नीति संबंधी, राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक मसलों पर चर्चा हुई, जो लोगों को आपस में विभाजित करते हैं और यह निष्कर्ष निकाला गया कि केवल संप्रेषण और आपस संवाद के माध्यम से ही, हम उन सभी लक्ष्यों को पा सकते हैं, जिन्हें हम पाना चाहते हैं।

हममें से अधिकतर जानते हैं कि स्वतंत्रता अंतिम नहीं होती। सभ्य समाज को अपने लिए नियम और कानून चाहिए ; एक काननू व्यवस्था चाहिए ताकि हम सभी शांति और सुरक्षा के बीच जी सकें। जिस प्रकार किसी की मानहानि करने पर कानूनी नियम है। उसी प्रकार का नियम लिखित शब्दों के लिए भी है। हम चाहते हैं कि जिन बातों के लिए कानून में कोई प्रावधान नहीं, उनके लिए मनुष्य के भीतर संयम होना चाहिए ताकि समाज में आपसी तालमेल और सामंजस्य बना रह सके। पोप ने कुछ समय पूर्व ही फिलीपींस यात्रा के दौरान यह बात कही थी। हमें दूसरों के प्रति सम्मान का भाव प्रदर्शित करना चाहिए, विशेष रूप से उनके लिए, जो दूसरों के धर्म और मान्यताओं को प्रिय मानते हैं।

इस पुस्तक को पाँच हिस्सों में विभाजित किया गया है। पहले भाग में विएना संवाद के उद्घाटन समारोह के भाषण शामिल हैं तथा दूसरे भाग में संवाद में आए पत्र तथा संक्षिप्त परिचर्चा शामिल है। तीसरे भाग में टुबिन्जेन सभा में आए पत्र तथा भाषण शामिल किए गए हैं। प्रोफ़ेसर हान्स कुंग बीमारी के कारण सभा में नहीं आ सके, हमने पिछली मीटिंग से उनके सारे कार्य को शामिल करने का निर्णय लिया है, यह हमारी ओर से उनके प्रयासों के लिए एक श्रद्धांजलि होगी। इसमें हेल्मुट श्मिट् की टुबिन्जेन भाषण तथा प्रोफ़ेसर तू वीमिंग के एक पत्र को भी शामिल किया गया है, उन्हें भी रोग के कारण यह दौरा स्थगित करना पड़ा। चौथे भाग में हमारे आरंभिक इंटरफेथ संवादों के कुछ वक्तव्य तथा उद्धोषणाएँ शामिल की गई हैं। जैसा कि विएना में बार–बार दोहराया गया, हमारे इन प्रयासों पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिए।

हम बहुत सौभाग्यशाली हैं कि उल्लेखनीय सहभागियों में से एक ब्रिटिश नेशनल, रब्बी डॉ. जर्मी रोसेन ने अपनी व्यस्त दिनचर्या के बावजूद, स्वेच्छा से पुस्तक के संपादन का कार्यभार संभाला है। हम उनके प्रति, सारे सहभागियों के प्रति तथा इस ग्रंथ के प्रकाशन से जुड़े सभी व्यक्तियों के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष सहयोग के लिए आभार प्रकट करते हैं और उनकी सराहना करते हैं।

यदि हम विविध सरकारों के प्रति अपना आभार नहीं प्रकट करते तो यह हमारी भूल होगी – जापान सरकार का आभार जो पिछले तीन दशकों से इंटरएक्शन कौंसिल को अपना सहयोग देती आ रही है; इसके अतिरिक्त ऑस्ट्रेलिया, ऑस्ट्रिया, कनाडा,जर्मनी, सउदी अरेबिया और स्वीडन की सरकार भी धन्यवाद की पात्र हैं। हम अन्य सरकारों, राष्ट्रीय व प्रांतीय संस्थाओं तथा व्यक्तियों को भी उनके सहयोग के प्रति आभार प्रकट करते हैं।

हमारा मानना है कि हमारे सामूहिक प्रयासों के बल पर सह–अस्तित्व और मानव जाति के प्रति न्याय के कुछ समाधान तलाशे जा सकते हैं। हम वैश्विक आचार नीति के बुनियादी नियमों पर एक बार फिर से बल देना चाहेंगे : हर मनुष्य के साथ मानवता से पेश आया जाना चाहिए और सुनहरा नियम, जो आप अपने साथ नहीं चाहते, दूसरों के साथ वैसा व्यवहार मत करो।'

जनवरी 2015

मेल्कम फ्रेज़र, ऑस्ट्रेलिया के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

विएना सभा के सह–सभापति

यासुओ फुकुदा, जापान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री,

विएना सभा के सह–सभापति

,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,

भाग – एक

राजनीतिज्ञों द्वारा दिए गए व्याख्यान

26 मार्च 2014

स्वागत कथन

एच.इ.डॉ. हेंज़ फ़िशर

रिपब्लिक ऑफ़ ऑस्ट्रिया के फेडरल प्रेजीडेंट

एक्सीलेंसीज़

इस इंटरफेथ डायलॉग के विशिष्ट सदस्यगण!

प्रिय मित्रो

मुझे यहाँ विएना में, आप सबका स्वागत करते हुए हार्दिक प्रसन्नता हो रही है और मैं व्यवस्थापक सभापति डॉ. फ्रांज़ वरानतिज़्की का आभार प्रकट करना चाहता हूँ कि उन्होंने ऐसा करने के लिए मुझे निमंत्रित किया।

मुझे जर्मनी के भूतपूर्व फेडरल चांसलर हेल्मुट श्मिट्, इंटरएक्शन परिषद के मानद सभापति का स्वागत करने में बहुत हर्ष का अनुभव हो रहा है और मैं उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ कि उन्होंने यह सभा विएना में आयोजित करने का प्रस्ताव रखा। चांसलर, हम अनुगृहीत हैं कि आप इस सभा में भाग लेने के लिए विएना आए।

मैं इस सभा में उपस्थित सभी विशिष्ट अतिथिगण तथा सदस्यों का भी स्वागत करता हूँ, जो कि संवाद के लिए समर्पित है।

देवियो और सज्जनो!

विभिन्न धर्मों व संस्कृतियों के बीच आपसी संवाद स्थापित करना व उसका प्रचार करना, अनेक वर्षों से ऑस्ट्रियाई प्राथमिकता रहा है।

ऑस्ट्रियाई समाज अनेक भाषाओं, धर्मों, संस्कृतियों व समाजों के मेल से बना है। 19वीं से 20वीं सदी में आने के दौरान, विएना एक ऐसे साम्राज्य की राजधानी था, जिसमें उत्तरी इटली से ले कर पश्चिमी यूक्रेन तथा चेक गणराज्य से ले कर, वर्तमान रोमानिया तक के भाग शामिल थे। वर्ष 1914 के संसद सदस्य, वे व्यक्ति थे जो चार देशों के प्रमुख बने; इटली में डि गैस्पेरी, चेक गणराज्य में मज़ारिक, पोलैंड में पिल्सुडस्की और ऑस्ट्रिया में कार्ल रीनर। कई तरह के देशों और धर्मों के बीच रहना और काम करना दैनिक जीवन का अंग था – वातावरण हमेशा तनावरहित तो नहीं रहता था परंतु सब कुछ चलायमान था और काम कर रहा था। जैसे 1912 में, ऑस्ट्रिया पहला देश था जिसने इस्लाम को हमारे प्रमुख धर्मों के बीच कानूनी मान्यता प्रदान की – यह अपने–आप में एक प्रगतिशील चरण था।

वर्तमान में, सौ वर्ष बाद, वैश्वीकरण और प्रवास के कारण जनांकिक में गहरा परिवर्तन आया है।

हाल ही के वर्षों में, विश्व में संस्कृतियों तथा धर्मों के बीच आपसी तनाव बढ़ा है। ऐसी प्रवृत्तियों पर रोक लगाने के लिए ऑस्ट्रिया ने सदा संवाद और संप्रेषण पर बल दिया है और सह–अस्तित्व को संभव और सशक्त बनाने की दिशा में महती प्रयत्न करने में सफल रहा है।

अंतः सांस्कृतिक संबंधों तथा सहयोग से जुड़ी चुनौतियों को वश में करने के लिए, हमने सक्रिय भाव से द्विमुखी और बहुमुखी पहलों के लिए प्रत्युत्तर दिया है। अन्य लक्ष्यों के अतिरिक्त, ये पहलें प्रमुख तौर से शांति, सम्मान तथा विभिन्न समूहों के बीच सहिष्णुता जैसे मुद्दों को संबोधित करती हैं।

इन वचनबद्धताओं को निम्न उदाहरणों से वर्णित किया जा सकता हैः

पहले–पहल, यूनाइटेड नेशंस एलायंस ऑफ़ सिवीलाइज़ेशंस (यूनेको) ने एक ऐसी पहल आरंभ की, जिसके अनुसार अंतःसांस्कृति आदान–प्रदान को प्रोत्साहन मिलता था। यूनेको का समर्थक होने के नाते, ऑस्ट्रिया ने पाँचवें ग्लोबल फोरम का आतिथ्य निभाया, जो फरवरी 2013 में, विएना में आयोजित हुआ, इसकी थीम थी, 'विविधता तथा संवाद के बीच उत्तरदायी नेतृत्व'; इस प्रकार संवाद और विविधता के मुद्दों के बीच उत्तरदायी नेतृत्व को पहचान दी गई।

दूसरे, संस्थापक सदस्य होने के नाते, ऑस्ट्रिया ने अंतःधार्मिक और अंतःसांस्कृतिक संवाद केंद्र किंग अब्दुला बिन अब्दुला अजीज़ इंटरनेशनल सेंटर, को भी अपना सहयोग दिया, जिसने 2012 के अंत में, विएना में ही अपना मुख्यालय स्थापित किया।

मैं आपको वर्तमान ऑस्ट्रिया के विषय में थोड़ी जानकारी देना चाहूँगा :

हमारी वर्तमान सरकार, 9 सितंबर 2013 में हुए चुनावों की देन है। यह अभी भी सोशल और क्रिस्टियन डेमोक्रेट्स के बीच गठबंधन की देन है, परंतु ब्रूनो क्रीस्की के समय से, दोनों ही दल अपने तकरीबन आधे वोट गँवा चुके थे। 1975 में, सोशल डेमोक्रेट्स और कंजरवेटिव के पास 183 में से 123 सीटें थीं और उस समय संसद में केवल तीन ही दल थे। आज सोशल और क्रिस्टियन डेमोक्रेट्स वोट के 52 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करते हैं और हमारे पास संसद में छह दल हैं।

यूरोपियन चुनाव के लिए भविष्यवाणी के अनुसार हमारे तीन दल, सोशल और क्रिस्टियन डेमोक्रेट्स और फ्रीडम पार्टी भी 23 से 25 प्रतिशत तक वोट पाने की संभावना रखती हैं।

ऑस्ट्रिया के आर्थिक आँकड़े भी उल्लेखनीय रहे हैं। 2014 में विकास दर 1.5 प्रतिशत होगी और यूरोपियन यूनियन में बेरोजगारी दर केवल 5 प्रतिशत तक रहेगी।

हाल ही के आँकड़ों के अनुसार, 2014 में, ऑस्ट्रिया में मुद्रा स्फीति दर दो प्रतिशत से कम होगी। ऑस्ट्रिया में, 2013 में प्रति व्यक्ति जीडीपी 37,007 यूरो थी। हमारे निर्यात की वृद्धि दर 5 प्रतिशत है। 100 में से 56 यूरो निर्यात से कमाए जाते हैं। हमारा एक तिहाई निर्यात जर्मनी के लिए है। उससे थोड़ा सा अधिक, 38 प्रतिशत, यूरोपियन यूनियन के सभी सदस्य देशों को, 10 प्रतिशत एशिया को और 10 प्रतिशत उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका को जाता है।

आदरणीय अतिथिगण, मैं आपका और अधिक कीमती समय नहीं लेना चाहता किंतु इस सभा के सम्मुख एक बात पुनः सशक्त रूप से कहना चाहता हूँ कि अंतः सांस्कृतिक व अंतः धार्मिक संवादों के लिए किए गए प्रयास चुनावी चक्रों और व्यक्तिगत प्रशासकों से परे जाने चाहिए। हमारे इन निरंतर किए जाने वाले प्रयासों को नीति निर्माण की मूल प्राथमिकता के रूप में लिया जाना चाहिए। तभी हम एक–दूसरे के प्रति समझ–बूझ का वातावरण विकसित कर सकेंगे और सही मायनों में एक बहुवादी समाज की ओर बढ़ सकेंगे।

आप सबने इतने स्नेह से सुना, एक बार फिर से आप सबका स्वागत है।

,,

चांसलर श्मिट् की प्रशंसा में कहे गए कुछ शब्द

एच.इ. वेलरी गिस्कार्ड डि एस्टेईंग

फ्रांस के भूतपूर्व प्रधानमंत्री, सिटी हॉल ऑफ़ विएना

विएना के प्रिय मेयर और गवर्नर

प्रिय मंत्रियों, आईएसी सदस्यों,

प्रिय धार्मिक व धर्मशास्त्री नेताओं,

एक्सीलेंसीज़

मैं आज इस अद्भुत सिटी हॉल में उपस्थित हो कर बहुत प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ और इस निमंत्रण के लिए विएना के प्रिय मेयर और गवर्नर को अपनी ओर से धन्यवाद देता हूँ।

आज हमने निर्णय–निर्धारण में नीति शास्त्र के विषय पर विचार किया और विद्वान प्रोफ़सरों तथा विशेषज्ञों ने इस विषय को एक समृद्ध और सार्थक परिचर्चा में बदल दिया।

परंतु आज, हम एक दूसरे ही विषय में बात करेंगे : हेल्मुट श्मिट् । और मुझे प्रसन्नता है कि हम सबमें से, मुझे अपने प्रिय मित्र हेल्मुट के विषय में दो शब्द कहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

नीति संबंधी क्षेत्र से होने के कारण, हम इस विषय में साधिकार चर्चा कर सकते हैं और मैं अपनी बात रखते हुए, उनके जीवन के इस पहलू पर भी प्रकाश डालना चाहता हूँ।

निःसंदेह वे हम सबके सम्मान के पात्र हैं। उन्होंने सदा जर्मनी के प्रमुख के रूप में अपने साहस और अदम्य निष्ठा का परिचय दिया है।

जब वे जर्मनी के चांसलर थे तो देश अपनी खोई हुई छवि को पाने में सफल रहा, जो निरंतर चलते युद्धों तथा अपराधों के कारण धूमिल हो गई थी और फिर यह देश एक बार

फिर से महान राष्ट्रों की गिनती में, आने में सफल रहा। बेशक जर्मनी की यह कामयाबी चांसलर एडेनॉर के प्रजातांत्रिक प्रबंधन और कड़े परिश्रम से आरंभ हुई, जो स्वेच्छा से मॉडेस्ट थे; यह सब जर्मनवासियों के साहसी प्रयासों के बल पर जारी रहा परंतु हेल्मुट श्मिट् ने इस प्रक्रिया को निष्कर्ष तक लाने का नेतृत्व किया। इसके लिए उनकी क्षमता, सादगी तथा न्याय की परख़ को धन्यवाद दिया जाना चाहिए। जर्मन अपने देश की इस नई परिभाषा के साथ खुशहाली की ओर लौट आए।

और उस समय अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य भी अनुकूल था।

पोलिश संकट के दौरान, सोवियत तंत्र में पहली दरार आनी आरंभ हुई और संकोच के कारण ब्रेज़नेव और उनका दल तय नही कर सके कि वे क्या रवैया अपनाएँ। हेल्मुट ने सैन्य हस्तक्षेप के विकल्प को रोकने में सहायता की। इसके साथ ही, उन्होंने सोवियत बलों के उस रोमांचवाद की भी निंदा की, जो अफगानिस्तान में हस्तक्षेप कर रहा था, जो अंततः एक ऐसे युद्ध में बदला, जिसके कोई सकारात्मक नतीजे सामने नहीं आए।

उन्होंने जो भी पहल अपनाई, उसके कारण वे यू.एस.ए. द्वारा निभाई जा रही भूमिका के लिए एक नई राय बना सके। तब तक अमेरिकन नेताओं का जर्मनी के प्रति दख़ल या क़ब्ज़े की प्रवृत्ति थी, अब भी वही तय करते थे कि जर्मनवासियों को क्या करना चाहिए। हेल्मुट ने बहुत ही धैर्य के साथ अपने देश को इससे आजाद करवाया। कार्टर प्रशासन के अनिर्णय के कारण उन्हें विवश हो कर ऐसा करना पड़ा, जो कि न्यूट्रॉन बम के निर्माण या मास्को के ओलंपिक में भाग न लेने आदि संवेदनशील मामलों में जर्मनी का समर्थन चाहते थे परंतु अचानक एक भी शब्द कहे बिना या अपनी सफ़ाई में कुछ कहे बिना अपने उद्देश्यों का त्याग कर दिया।

इस घटना के साथ ही हेल्मुट को विश्वास हो गया कि यूरोप के लिए – उस समय के नौ या दस सदस्य वाले यूरोप के लिए एक मजबूत राजनीतिक ढाँचा रखना बहुत आवश्यक था।

इस क्षेत्र में निरंतरता यानी विरोधाभास के अभाव ने भी हमेशा उनका पथप्रदर्शन किया। वे सही मायनों में एक विश्वस्त यूरोपियन थे।

क्या यह इसके विपरीत भी हो सकता था?

हम साठ के दशक के अंत में, किसी ख़ास जगह मिले थे ; संभवतः जीन मोनेट के घर भेंट हुई थी, जिन्होंने 'कमेटी फॉर द यूनाईटेड स्टेट्स ऑफ़ यूरोप' के सदस्यों के साथ एक मीटिंग रखी थी। पहली बार, कक्ष में प्रवेश करते हुए धुएँ का गुबार दिखा और फिर हेल्मुट दिखाई दिए।

फिर मुझे याद है, 1972 में हम मंत्रियों के एक सत्र में मिले, हमने अपने नेमकार्ड पास–पास रख लिए थे ताकि एक साथ बैठ कर, कारवाई के बारे में अपनी राय व्यक्त कर सकें।

हम दोनों के बीच सदा एक सहज खिंचाव रहा, जो एक समान विज़न और निष्ठा की देन था। वे अपने काम में सादगी की प्रतिमूर्ति थे। वे जहाँ भी जाते, भीड़ उनके प्रति सम्मान प्रकट करता, जिसे मैं उनकी 'प्रामाणिकता' कहता था।

1972 की बात है, उन्होंने आर्थिक मामलों के विद्वान मंत्री कार्ल शिलर से पद लिया था, वे फ्लोटिंग करेंसी के समर्थक थे और चाहते थे कि जर्मन कंपनियों के हितों के लिए आर्थिक सीमाओं को विस्तृत कर दिया जाए। उनके कार्य की असाधारण क्षमता और व्यावहारिक बुद्धिमता को धन्यवाद देना होगा, हेल्मुट विस्तृत बौद्धिक परिचर्चा में एक प्रमुख खिलाड़ी बन कर सामने आए, जो 1971 से 1974 तक चली। इसमें एक नए प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक संगठन के बारे में विचार हो रहा था। मुझे लगता है कि ठीक इसी समय, उन्हें लगा कि यूरोपियन मुद्राओं के बीच एकता होनी चाहिए, जो कि फ्लोटिंग एक्सचेंज दर के कारण अस्त–व्यस्त थीं।

हम इस नई एकता की अवधारणा पर काम करने के लिए अपने सहकर्मियों के साथ जुट गए। कई विकास प्रवृत्तियों के दबाव के चलते, 'मोनेटरी स्नेक' का पतन हो गया था। हमने एक और अधिक सशक्त प्रक्रिया आरंभ करने की चेष्टा की। अंततः 1978–1979 में हमारे प्रयासों के फलस्वरूप यूरोपियन मुद्रा संबंधी तंत्र सामने आया और ईकू को बाज़ार में उतारा गया, जो कि यूरो का अग्रदूत था।

हेल्मुट श्मिट् को सबसे अधिक श्रेय इसलिए दिया जाना चाहिए क्योंकि उन्हें अपने देशवासियों को मनाना था, जबकि उनका मत बंडसबैंक के मत से विपरीत था, वे ड्यूश बैंक को अन्य दुर्बल यूरोपियन करेंसियों से जोड़ना चाहते थे। जैसा कि आप जानते हैं, जर्मन मतानुसार, ड्यूश बैंक देश के आर्थिक सुधार तथा सुरक्षा व मान का प्रतीक था। उन्होंने जर्मन इकनोमिक वर्ग को इस निर्णय के लिए मनाया और तर्क दिए कि वे यूरोपियन मोनेटरी सिस्टम यानी यूरोपियन मुद्रा संबंधी तंत्र को बनाने के लिए अपना समर्थन दें।

मैं किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में नहीं सोच सकता, जिसने ऐसे नतीजे प्राप्त किए हों। यही कारण है कि मैं उनके साथ नहीं हूँ, जो यूरोपियन करेंसी को बनाने का अनुचित श्रेय लेना चाहते हैं, जबकि इस काम के लिए हेल्मुट श्मिट् को महत्वपूर्ण श्रेय दिया जाना चाहिए।

जब 1986 में, हमने 'कमेटी फॉर मोनेटरी यूनियन ऑफ यूरोप' बनाई तो उसकी प्रस्तावना रिपोर्ट में यूरो की स्थापना के बारे में लिखा था, उन्होंने सत्ता में बैठे नेताओं की विस्मृति से पूर्व, यूरोप के लिए वचनबद्धता को प्रकट किया।

आजकल, सभी यूरोपवासियों को इस तथ्य के प्रति सचेत रहना चाहिए कि वर्तमान संकट में, यूरो के अभाव में, हम प्रतियोगी अवमूल्यन में उलझ जाते जिससे हमारे तंत्र को गहरे झटके लग सकते थे। इस सारे प्रकरण में यूरो हमारे लिए एक मजबूत बचाव तंत्र के तौर पर सामने आया है।

उस समय यूरोप में और भी कई प्रकार से प्रगति हुई, जिसके लिए हमारी उस समय की उल्लेखनीय साझेदारी का आभार प्रकट करना होगाः इसके बिना, हम 1974 में, यूरोपियन कौंसिल की स्थापना नहीं कर सकते थे और यूरोपियन संसद के सदस्य, प्रत्यक्ष तौर पर पर यूरोप के नागरिकों द्वारा न चुने गए होते, जैसा कि अब पिछले पैंतीस वर्षों से होता आ रहा है।

परंतु मेरे अनुसार, द इनर जर्मन ऑटम को हेल्मुट श्मिट् के राजनीतिक जीवन कैरियर का सबसे प्रभावशाली दौर कहा जा सकता है।

हेल्मुट श्मिट को उस समय अतिवादियों के भयंकर आतंकियों के आतंकी कारनामों से निबटना पड़ा जो मौत से भी नहीं डरते थे। जब नियोजक व उद्योग प्रतिनिधि मार्टिन शेलर का अपहरण किया गया, तो उस समय चांसलर की अनुकूलता की जाँच थी : उन्हें जीवन और राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच किसी को चुनना था, एक नागरिक के प्राण तथा अमूर्त देश हित में से किसी एक का चुनाव करना था।

अनेक वर्षों बाद, हेल्मुट ने कहा कि यह उनके लिए सबसे कठोर चुनावो में से एक था। और हम केवल उनके साहसी रवैए के प्रति अपना आदर प्रकट कर सकते हैं।

इन्हीं क्षणों में मनुष्य के सद्गुणों का परिचय मिलता है।

जैसा कि एक बार कंफ्यूशियस ने कहा था, "सद्गुणी व्यक्ति को अपने पहले व्यवसाय की बाधाओं से पार पाने में कठिनाई होती है और कुछ समय बाद ही सफलता सामने आती है।"

हेल्मुट! आपने भी अपने आजीवन लंबे कैरियर के दौरान यही सब पाया। और यही गुण आपको एक सच्चा राजनेता और मेरा एक विशेष प्रिय मित्र बनाता है।

जन्मदिन की बहुत–बहुत शुभकामनाएँ!

,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,

निर्णय–निर्धारण में नीति

सेवानिवृत्त आदरणीय मेल्कम फ्रेज़र

ऑस्ट्रेलिया के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

विएना इंटरफेथ डायलॉग के सह–सभापति

यह विशेष सभा, चांसलर श्मिट् के पचानवें जन्मदिवस के अवसर पर तथा इंटर एक्शन परिषद के संस्थापकों में से एक, भूतपूर्व प्रधानमंत्री ताकेओ फुकुदा के सम्मान में रखी गई है, जिनका विज़न और प्रेरणा ही कौसिल की स्थापना के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तर दायी रहे। हेल्मुट श्मिट् आजीवन अनेक परिवर्तनों के साक्षी रहे। उन्हें एक युवा लेफ्टिनेंट के तौर पर, 1941 में रशियन मोर्चे पर नियुक्त किया गया। उन्होंने मास्को की रोशनी देखी किंतु शुक्र है कि उनकी यूनिट स्टालिनगार्ड में शामिल नहीं थी। अगर ऐसा होता तो संभवतः यूरोप ने अपना एक महान राजनेता खो दिया होता।

चांसलर श्मिट् ने यूरोप की एकता के लिए अथक प्रयास किए, यह ध्यान दिया कि पुराने बैर को एक किनारे कर दिया जाए। उन्होंने प्रेजीडेंट गिस्कार्ड के साथ काम किया, मुझे यह देख कर हर्ष हो रहा है कि आज वे भी इस सभा में उपस्थित हैं। इन दो महान व्यक्तियों ने जो किया, वह दूसरों के लिए सबक़ और मॉडल से कम नहीं था, यह न केवल इस परिषद बल्कि दुनिया के लिए एक मिसाल थी। फ्रांस और जर्मनी लंबे अरसे से बैर और कटुता के बीच थे। संभवतः ये दोनों सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति रहे, जिन्होंने यह तय किया कि आपस में सहयोग और योगदान देने का एक नया संबंध विकसित किया जाना चाहिए। मैं सौभाग्यशाली रहा कि मैंने अपने कार्यकाल में ऐसा होते हुए देखा।

मैं परिषद के सदस्यों का भी स्वागत करना चाहूँगा। सभी धार्मिक नेताओं का विशेष स्वागत, आशा करता हूँ कि वे इस सभा में एक सक्रिय सहभागिता रखेंगे। आपमें से अनेक

तो पहले ही बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान देते आए हैं और हमारे विचार–विमर्श के लिए प्रलेख तैयार किए हैं। आप सबका धन्यवाद! मैं अपने विशिष्ट अतिथियों का भी स्वागत करता हूँ।

सोवियत यूनियन द्वारा अफगानिस्तान पर हमले के कुछ समय बाद ही, 1983 में इंटरएक्शन परिषद की स्थापना की गई। इसका उद्देश्य था कि दीर्घकालीन समस्याओं पर ध्यान दिया जाए, तेजी से बढ़ रही विश्व जनसंख्या, पर्यावरणीय संकट बनने वाली चुनौतियों का निराकरण आदि। एक शांति पूर्ण व समृद्ध राज्य की नींव कैसे रखी जाए? उन दीर्घकालीन मसलों के क्या हल निकाले जाएँ जिन्हें सरकार प्रायः उपेक्षित कर देती है? प्रधानमंत्री ताकेओ फुकुदा इन्हीं सब समस्याओं पर विचार–विमर्श चाहते थे।

चांसलर श्मिट् और प्रधानमंत्री ताकेओ फुकुदा, सभी प्रमुख धर्मों मूल में छिपी नीति पर आधारित मूल्य तैयार करना चाहते थे। पहले इंटरफेथ डायलॉग का आयोजन 1987 में हुआ, जिसके दस वर्ष बाद मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा का प्रलेख तैयार किया गया, जो संभवतः सभी प्रमुख धर्मों द्वारा स्वीकृत सामान्य नीतियों को परिभाषित कर रहा था।

बहुत से कारक हैं, जिन्होंने इन दीर्घकाली मसलों को पहले से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। विश्व की तेज़ी से बढ़ती जनसंख्या इनमें से एक है। पहले विश्व युद्ध के दौरान, विश्व की जनसंख्या 1.7 बिलियन थी। दूसरे विश्व युद्ध के अंत में यह 2.3 बिलियन थी, आज, यह 7.2 बिलियन तक आ गई है और बहुत तेज़ी से बढ़ती जा रही है। इससे संसाधनों पर दबाव बढ़ा है। हमें अपने ग्रह के इन ससांधनों का बहुत ही विवेकपूर्ण उपयोग करना होगा और पर्यावरण से जुड़े मसलों पर पूरा ध्यान देना होगा।

केवल इन कारकों ने दीर्घकालीन समस्याओं को आवश्यक नहीं बनाया है। शीत युद्ध के दौरान, विश्व अधिक स्थिर था। उस समय सशस्त्र संघर्ष का इतना भय नहीं था। उस समय दो महाशक्तियाँ थीं जो एक भयंकर संतुलन साधे हुए थीं। दोनों ही जानते थे कि उनमें से एक भी, दूसरे पर अतिरिक्त दबाव नहीं डाल सकती और उनमें से कोई भी परमाणु युद्ध नहीं चाहता था। 1991 में सोवियत यूनियन के पतन के बाद ही वह संतुलन समाप्त हो गया।

तभी से परमाणु प्रसार निरोधी संधि के बावजूद, अनेक देश, वर्तमान में नौ, परमाणु हथियारों से संपन्न हैं। जबकि अब भय है कि ये परमाणु हथियार आतंकियों के हाथ लग सकते हैं। प्रांतीय परमाणु युद्ध की संभावना को कभी टाला नहीं जा सकता। बहुत से लोग हैं जो यह नहीं समझते कि यह प्रांतीय परमाणु युद्ध वैश्विक तौर पर जलवायु के

लिए संकट बन सकता है। पर्यावरण और भावी सुरक्षा के लिए संकट बन सकता है, जिसमें लाखों–करोड़ों लोग अकाल की चपेट में होंगे।

1990 में पहले खाड़ी युद्ध के बाद, प्रेजीडेंट जॉर्ज एच डब्लयू बुश ने, 6 मार्च 1991 को, कांग्रेस में एक भाषण दिया, जिसे मैं महान भाषणों की श्रेणी में रखता हूँ। उन्होंने कहा, " इस छोटे से देश कुवैत के लिए उत्तरी अमेरिका व यूरोप, एशिया व दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका तथा अरब जगत से मदद आई, सभी आक्रामकता के लिए एकजुट हुए। अब हमारे इस गठबंधन को एक सामान्य उद्देश्य के लिए काम करना चाहिए : एक ऐसे भविष्य का निर्माण करना चाहिए जिसे मानवीय स्वभाव के अंधकारमयी पक्ष द्वारा पुनः बंधक न बनाया जा सके।" हम यही स्वर यू.एस से सुनना चाहते थे।

प्रेजीडेंट जॉर्ज एच डब्लयू बुश ने एक नई दुनिया की बात की। एक नई वैश्विक व्यवस्था, विंस्टन चर्चिल के शब्दों में, जहाँ न्याय और निष्पक्षता के सिद्धांत, ताकतवर के आगे दुर्बल की रक्षा करेंगे...।

वह आशावाद का दौर था। साम्यवाद और फ्री वर्ल्ड की प्रमुख शत्रुता का अंत हो गया था। स्वतंत्रता का कोई शत्रु नहीं बचा था। देशों के पास एक साथ मिल कर काम करने, मानवता और विश्व की सेवा करने का अवसर था।

यह मेरे जीवनकाल में, दूसरा मौका था जब मैंने सारे संसार को एक आशावाद से घिरा पाया। दूसरे विश्व युद्ध के बाद, जब सभ्यता लगभग मिट सी गई थी। तब विजेताओं, नेताओं और पराजितों को पता था कि अब उन्हें कुछ बेहतर करना होगा। यह समानुभूति का दौर था, यूनाईटेड नेशंस के आदर्श और स्वतंत्रता की भावना व समानता का पूरे जगत में प्रचार हो रहा था। देश मानवजाति की बेहतरी के लिए काम करना चाहते थे परंतु दुर्भाग्यवश यह दौर जल्द ही बीत गया।

शीत युद्ध लगभग चालीस साल रहा। सत्ता के पुराने शासनों ने, देशों के बीच संबंधों पर शासन किया। आपस में ख़तरनाक बैर और शत्रुताएँ थीं। विभिन्न देशों के बीच सही मायनों में एक सहयोगी संसार बनाने की सारे अवसर और संभावनाएँ नष्ट हो गए थे।

सोवियत यूनियन के पतन के बाद, आशावाद का दौर जल्द ही बीत गया और देशों के बीच फिर से भय और संदेह के संबंध पनपने लगे, जिनमें आतंकी युद्ध भी शामिल था, जिसे हमेशा ग़लत नाम दिया क्योंकि कट्टरपंथियों के लिए इसे इस्लामी युद्ध का नाम देना बहुत आसान था।

जब देशों के बीच आपसी भरोसा टूटे, तो हमें समझना चाहिए कि ऐसा क्यों हुआ। हमें मामले को पूरी सूझ–बूझ और आपसी विश्वास के साथ देखना चाहिए। मिसाल के लिए,

नाटो ने अपना उद्देश्य पा लिया था। पश्चिमी यूरोप की आजादी सुरक्षित कर ली गई थी। एक भी गोली चलाए बिना लड़ाई जीती जा चुकी थी। स्वतंत्रता को सुरक्षित किया गया, इनमें ऐसे अनेक देश भी शामिल थे, जो पहले सोवियत साम्राज्यों के अधीन थे। अब उदारता दिखाने का समय था, यह दूरदर्शिता दिखाने का समय था, परंतु संकीर्ण मानसिकता हावी हो गई।

नाटो को रशिया की सीमाओं की ओर धकेल दिया गया, जबकि प्रेजीडेंट गोर्बाचोव का मानना था कि नाटो अपने अनुबंध के अनुसार पूर्व की ओर नहीं आएगा। रशिया ने इसे एक अमैत्रीपूर्ण कदम माना। इसका साम्राज्य छिन्न–भिन्न हो गया। पूर्वी यूरोप के देशों की स्वतंत्रता की सुरक्षा और आश्वासन के लिए दूसरे उपाय अपनाए जा सकते थे परंतु नाटो ने उस तरह से नहीं देखा। संभवतः यह एक भारी भूल थी। अनेक व्यक्तियों के अनुसार यही यूक्रेन ओर क्रीमिया की मौजूदा समस्याओं का कारण है।

नीति को लागू किया जाना चाहिए था ताकि रशिया यकीन करती कि दूसरे उसे सही मायनों में, एक नई दुनिया में सहयोग साथी के तौर पर चाहते हैं। एक ऐसा जगत जहाँ रशिया को भी अपनी बात कहने का अवसर मिलता। जहाँ उसकी बातों पर भी गौर किया जाता। नाटो ने हमले के साथ उस संभावना को ही समाप्त कर दिया। पूर्वी यूरोप में नए शस्त्र तंत्रों के विकास ने रशियन चिंता को बढ़ावा दिया।

ऐसा क्यों हुआ कि प्रेजीडेंट बुश ने 1991 में जो उसूल सामने रखे थे, उन्हें इतनी जल्दी परे धकेल दिया गया? खाड़ी युद्ध के बाद जो आशा की किरण दिखी थी, वह इतनी जल्दी कहाँ छिप गई? नतीजन, आज हम इस संसार में स्वयं को और अधिक ख़तरनाक परिस्थितियों से घिरा पा रहे हैं।

अमेरिकी एक्सेपशनलिज़्म की अवधारणा आरंभ में ही यूएस की ओर से दी गई थी परंतु हाल ही के समय में, अमेरिका महाशक्ति के तौर पर उभरा है इसलिए अमेरिकी एक्सेपशनलिज़्म की वह धारणा, संसार से जुड़े मसलों और मामलों पर अपना यथेष्ट प्रभाव दिखा रही है।

तुर्की व थाईलैंड के लिए यूएस राजदूत तथा इंटरनेशनल क्राइसिस ग्रुप के संस्थापकों में से एक, मोर्टन अब्रामोविट्ज़ ने, 2012 में नेशनल इंटरेस्ट में लिखा, ' अमेरिकी एक्सेपशनलिज़्म किस तरह यूएस की विदेश नीति के लिए अभिशाप रहा है?'। इसमें वे एक स्थान पर लिखते हैं, अपने विशिष्ट गुणों पर विश्वास होने के कारण हम यह मानने लगे हैं कि हमारे पास ऐसा काम करने की योग्यता और शक्ति है, जिसे दूसरे देश नहीं कर सकते....हमारा प्रयोजन स्थिर भाव से निष्पक्ष है, जब हम ख़ासतौर पर बल का प्रयोग

करते हैं। हम अनिवार्य जानें तो अपने ही बनाए कानून तोड़ सकते हैं....।' यह अमेरिकी मामलों पर बहुत ही ईमानदार और सार्थक व सटीक टिप्पणी है।

यहाँ तक कि प्रेजीडेंट ओबामा भी अमेरिकी एक्सेपशनलिज़्म में अपना विश्वास जताते हैं, 'जब हम बच्चों को गैस के माध्यम से, मौत के घाट उतारना रोक सकते हैं ओर इस तरह अपने बच्चों को भी आने वाले समय के लिए सुरक्षा दे सकते हैं तो मेरा मानना है कि हमें निश्चित रूप इस पर काम करना चाहिए।' यही बात अमेरिका को अलग बनाती है। यही हमें विशिष्ट बनाती है।' पर क्या अमेरिका ही केवल ऐसा देश है जो बच्चों को गैस द्वारा मौत के घाट उतारे जाने से रोकना चाहेगा? अमेरिका के पास हम सबसे कहीं अधिक ताकत है, परंतु वह शांति की अपील में साथ नहीं है। प्रेजीडेंट व्लादीमीर पुतिन ने एक न्यू यॉर्क टाइम्स पत्र में ग़लत नहीं कहा था, 'लोगों को यह प्रोत्साहित करना कि वे अपवादित हैं, यह अपने–आप में बहुत ही ख़तरनाक है।' ऐसा इसलिए करना ख़तरनाक है क्योंकि इस देश को एक अपनी तरह की निष्ठा मिलती है परंतु दूसरी ओर, वह दूसरों के दृष्टिकोण को समझने की योग्यता खो देता है। इनमें से कोई भी पक्ष, शांति के लिए कारगर नहीं हो सकता।

दूसरा देश या व्यक्ति जो देख रहा है, उसे देखने की अयोग्यता अक्सर अनुबंध और शांति के राह मे बाधा खड़े कर सकते हैं।

किसी भी कूटनीतिक पहल में, दोनों ही पक्षों के तर्कों पर ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि उसके बाद ही किसी विवेकपूर्ण निर्णय पर आया जा सके। एक सफल सौदबाज़ी में, यही होना चाहिए कि जब दोनों पक्ष उठें तो उन्हें यह एहसास हो कि उन्हें कोई सार्थक उपलब्धि हुई है।

यह देशों की आपसी समस्या तो है ही, इसके साथ ही धर्मों की आपसी समस्या भी है। इस समय कैथोलिक–प्रोटेस्टेंट विभाजन ने आयरलैंड को दोनों ओर से आतंकवाद की ओर धकेल दिया है। कई दशकों की आपसी सौदेबाज़ी और पीड़ा के बाद, आयरलैंड के लिए एक शांतिपूर्ण भविष्य का अवसर सामने आया। दोनों ही पक्षों ने परस्पर अशोभनीय भाषा का प्रयोग किया और जब ऐसे शब्द कहे जाते हैं तो उन्हें वापिस लेना कठिन होता है। धार्मिक घृणा से उबरना वास्तव में कठिन होता है।

मेरा तो यही मानना है कि विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के बीच कुछ सामान्य आचार नीतियाँ पाई जाती हैं। एक शांतिपूर्ण समाज के लिए बुनियादी मूल्य तथा आचार व नीति संबंधी मापदंड बाँटे जाते हैं। लंबी चर्चाओं के बीच 'मानव उत्तरदायित्व की सार्वभौम घोषणा' का प्रालेख सामने आया। आचार व नीति पर आधारित शब्दों को लिखना और उन्हें लोगों के जीवन में उतारने के लिए प्रेरित करना, दोनों ही अलग बाते हैं। यह परिणाम ही अब तक इस परिषद और संसार को छलता आया है।

अब पश्चिम में ऐसे बहुत से स्वर होंगे जो इस्लामी कट्टरवाद और जिहादियों की ओर संकेत कर कहेंगे कि उनके साथ समझौते कैसे हो सकते हैं। वे यह भूल गए हैं कि सारी दुनिया के मुसलमान भी इस्लाम की इस अति की निंदा कर रहे हैं।

क्या हम पश्चिम वालों के पास यह स्वीकार करने की ईमानदारी है कि ईसाई धर्म की चर्चो में भी क्रिश्चयन कट्टरपंथी उपस्थित हैं? हम केवल इस्लाम को, एक शांतिपूर्ण जगत के लिए ख़तरे के रूप में दर्शा रहे हैं। यह बिंदु स्पष्ट किया जाना चाहिए। ऐसी कट्टरपंथी प्रवृत्ति तो लगभग सभी धर्मों में है। हम एक ऐसे संसार की रचना कैसे कर सकते हैं जिसमें धर्मों द्वारा अतीत में की गई ज़्यादतियों को छिपाया जा सके और नई पीढ़ी को उसकी ओर आकर्षित होने से बचाया ज सके। यह हमारे लिए एक बड़ी चुनौती है। यह पश्चिम में बैठे लोगों के लिए चुनौती है कि कहीं उनके कार्य, कट्टरवादियों द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली आड़ या बहाना न बन जाए।

मिडिल ईस्ट में, संभवतः कई लोगों की धारणा है कि पश्चिमी हस्तक्षेप जैसे 1953 में प्रधानमंत्री मोसाद्देग को हटाने का कार्य, इराक पर हमला आदि घटनाओं के कारण ही, उनके प्रांत में तकरीबन समस्याओं ने सिर उठाया है। निश्चित रूप से यह देखना कठिन रहा कि पश्चिमी नीतियाँ कहाँ सफल रहीं और उन्होंने प्रांत में शांति और सकारात्मकता की स्थापना के लिए अपनी ओर से क्या योगदान दिया। पहला खाड़ी युद्ध एक उल्लेखनीय अपवाद था परंतु वह केवल पश्चिमी नीति नहीं था। यूएस ने तीस देशों का गठबंधन रखा था, जो कि 2003 में इराक के हमले के बिल्कुल विपरीत था।

सारे प्रांत में मची हुई उथल'—पुथल एक महामारी बन गई है और वह शांतिपूर्ण प्रगति की राह की सबसे बड़ी बाधा है। इस्लाम के वर्गों में आपसी द्वेष, घृणा तथा विभाजन ने अनेक देशों पर असाधारण प्रभाव डाला है। अल कायदा के नतीजे, अपने आप में इस्लाम की विश्व व्यापी चिंता और भय को बढ़ाने का प्रमुख कारक रहा है। जैसा कि मैंने दिखाया, धर्म के ये विभाजन केवल मुसलमानों के बीच ही नहीं हैं। उन्हें ईसाई देशों में बहुत ही भयंकर कीमत के साथ पेश किया गया है।

हाल ही के वर्षो में, मिडिल ईस्ट सबका केंद्र बिंदु रहा, परंतु पश्चिमी पैसीफिक भी तनाव और द्वेष का नया गढ़ बनता दिखाई दे रहा है। मार्च 1991 में प्रेजीडेंट बुश के भाषण मे दिए गए नियमों व सिद्धांतों को अपनाने की बजाए, शीत युद्ध की देन; सत्ता, सैन्य शत्रुता तथा द्वेष को ही बढ़ावा दिया जा रहा है।

सारे प्रांत में शांतिपूर्ण और प्रभावी प्रगति के कुछ उदाहरण भी रहे हैं। एएसईएएन के विकास को ही लें, दस सदस्य देशों के साथ, ऐसे देशों को भी आपस में सदस्य बनाया गया है जो पहले आपस में दुश्मन थे। यह सब थाईलैंड और इंडोनेशिया की पहल पर

पाया गया, जिसमें कोई पश्चिमी जुड़ाव शामिल नहीं था। एशियाई देशों ने इसे अपने तरीके से किया और सफल रहे। अब भी कई समस्याएँ हैं, अब भी दक्षिण चीनी सागर पर कुछ मतभेद हैं किंतु एएसईएएन के बीच समस्याओं को वश में कर लिया गया है। उन्होंने पहचान लिया है कि महान उद्देश्य की पूर्ति शांति और आपसी सहयोग से हो सकती है। हमें यह ध्यान देना चाहिए कि सभी सदस्य प्रजातंत्र हैं परंतु इससे अनिवार्य सहयोग में बाधा नहीं आई। इसकी बजाए, एएसईएएन इस हद तक विकसित हुआ है कि एसोसिएशन सदस्यों के आपसी मतभेद दूर करने में भी सफल रहा है। एएसईएएन का रूपांतरण हम सबके लिए एक मिसाल है। ऐसा कोई लक्षण दिखाई नहीं देता कि पश्चिमी देशों ने वह पाठ पढ़ा है।

संसार के कई हिस्सों में आने वाले तेज़ बदलाव भी हमारे सामने चुनौती की तरह खड़े हैं। मिसाल के लिए, कुछ लोग चीन की बढ़ती शक्ति व आर्थिक ताकत के साथ सामंजस्य नहीं बिठा पा रहे। चीन को पश्चिम में सही तरह से समझा नहीं गया। चीन की घटनाओं की विपरीत रिपोर्टिंग की जाती है और उसके इतिहास, संस्कृति या प्रयोजन को समझने का प्रयत्न नहीं किया जाता। चीन यूरोप और अमेरिका से अलग चलता है परंतु वे अभी तक अपना संतुलन बनाए रखने में कामयाब रहे हैं और अपने आर्थिक विकास और वृद्धि के साथ संतुष्ट हैं। चीन में जीवन के मापदंडों की प्रगति के लिए बनी योजनाओं के लिए भी ये बहुत महत्व रखते हैं।

हमें इस रूपांतरण को समझना चाहिए। आज के कई नेताओं के जीवनकाल में, चीन सबसे निरपेक्ष, अपने ही आंतरिक मामलों में व्यस्त रहा, बाहरी जगत के साथ बहुत तालमेल नहीं रखा, केवल अनिवार्य बातों पर ही गौर किया गया।

चीन अब इतिहास में उस दौर से बाहर आया है और पश्चिमी पैसीफिक में एक प्रमुख साझेदार की तरह उभरा है, उसकी अर्थव्यवस्था प्रतिवर्ष सात प्रतिशत तक बढ़ रही है। यह अपेक्षा की जाती है कि एक प्राचीन और गर्वीले देश के रूप में, चीन के दृष्टिकोण को आदर दिया जाना चाहिए और एशिया पैसीफिक रीजन के आचार संबंधी मामलों में स्थान दिया जाना चाहिए। इसे आक्रामकता या सत्ता का नए रूप में नहीं लिया जाना चाहिए, इसे चीन के पारंपरिक व ऐतिहासिक हितों के पुनरारंभ के तौर पर लिया जाना चाहिए। कई बार इससे उत्पन्न परेशानियों को अतिरंजित करके पेश किया जाता है। चीन एक शाही सत्ता नहीं, जैसे कि अमेरिका और जापान रहे। पश्चिमी पैसीफिक में इस नए संतुनल को कैसे साधा जाएगा, यह कैसे उभरेगा, यह न केवल चीन के अपने रवैए पर निर्भर करता है, बल्कि अमेरिका और जापान द्वारा उसके प्रति रखे गए व्यवहार पर भी निर्भर करता है। हाल ही के वर्षों में, इन देशों में कोई बहुत अच्छी प्रगति नहीं हुई। चीन और जापान के बीच अविश्वास का भाव है और अमेरिका में अनिश्चितता की स्थिति बनी

हुई कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। अमेरिका इसी अनिश्चितता के बीच, भूल से सैन्य विकल्पों को मजबूत बनाना चाहता है।

मैंने ये बिंदु इसलिए उठाए क्योंकि यूरोप व अमेरिका का अधिकतर ध्यान मिडिल ईस्ट पर लगा है, उस प्रांत में शांति और प्रगति कैसे बहाल की जाए। इसके अलावा वे पोस्ट–सोवियत युग की समस्याओं को हल कर रहे हैं। परंतु संसार जिन समस्याओं का सामना कर रहा है, वे इससे कहीं बड़ी हैं। पश्चिमी पैसीफिक पर और ध्यान दिया जाना चाहिए।

अब तक मैंने तनाव और कठिनाईयों की बात की, पर क्या करें, यह कौंसिल क्या कह सकती है? क्या हम आचारपरक व्यवहार वाली सरकार की माँग को बल दे सकते हैं? इस कक्ष में उपस्थित अधिकतर लोग उसी श्रेणी से हैं, जो बहुत समय से सत्ता का अंग नहीं है। जो लोग सत्ता में हैं, वे पिछले लोगों की सुनने को राजी नहीं हैं। मुझे लगता है कि हम एक दोराहे पर खड़े हैं। या तो हम आचार और नीति पर आधारित निर्णय लेने वाली सरकार बनाएँ ताकि प्रगति और शांति को सुनिश्चित किया जा सके या हम बैठ कर, तीसरे विश्व युद्ध की प्रतीक्षा कर सकते हैं, जिसमें परमाणु बमों का प्रयोग होगा। भले ही वह मिडिल ईस्ट के किसी विवाद से आरंभ हो या फिर मसला पूर्वी चीनी सागर का हो, नतीजे निश्चित तौर पर भयंकर होंगे।

ये समस्याएँ पिछले समय की तुलना में और अधिक महत्वपूर्ण हो गई हैं, क्योंकि अब मानवजाति के पास इस ग्रह पर जीवन को नष्ट करने के दो बलशाली साधन उपस्थित हैं। परमाणु प्रसार निरोधी संधि के अधूरा होने के कारण, परमाणु शस्त्रों से लैस राष्ट्रों का निशस्त्रीकरण नहीं कराया जा सका और परमाणु हथिार बनाने की प्रक्रिया जारी है। इस तरह दिन ब दिन परमाणु युद्ध होने की संभावना बढ़ती ही जा रही है। यहाँ तक कि एक सीमित परमाणु युद्ध भी सब कुछ तहस–नहस कर देगा। दूसरे, पर्यावरणीय मसलों पर कोई काम नहीं हो पा रहा, मनुष्य पर्यावरण को प्रदूषित कर रहा है, जिससे ग्रह नष्ट हो सकता है। जो लोग आरामदेह जीवन जी रहे हैं, हो सकता है कि वे हमारी ओर से इसे समझें, परंतु किसी प्रभावी कारवाई के अभाव में यह समस्याएँ बढ़ती ही जा रही ह।

हमें अब निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए :

1. परमाणु प्रसार निरोधी संधि असमान रूप से लागू की गई है। जिन्हें मित्र माना जाता है, उनके लिए कारवाई की अनुमति है। जिन्हें मित्र नहीं माना जाता, उन्हें कारवाई की अनुमति नहीं दी गई। परमाणु प्रसार निरोधी संधि में तत्काल नवीकरण की आवश्यकता

है। जॉर्ज श्कल्ट्ज़, भूतपूर्व स्टेट सैक्रेट्री, हेनरी किसिंजर, भूतपूर्व स्टेट सैक्रेट्री, बिल पैरी, भूतपूर्व रक्षा सचिव, सैन नुन, सीनेट आमर्ड सर्विस कमेटी के भूतपूर्व सभापति आदि सभी भूतपूर्व सैन्य तथा रक्षा सचिवों ने सर्वसम्मति से माना है कि किसी भी देश की रक्षा के लिए परमाणु हथियारों की आवश्यकता नहीं है, ये सभी के लिए एक बड़ा संकट हैं। इस प्रकार, इनका बहिष्कार किया जाना चाहिए। उनके विचार अनेक देशों में प्रसारित किए गए, जिनमें वे देश भी शामिल हैं, जो परमाणु शक्ति से संपन्न हैं।

यह स्थिति आपातकालीन है क्योंकि चालीस से अधिक देशों के पास परमाणु बम बनाने की योग्यता है। ऐसे कुछ देश भी हैं जो कुछ ही माह में, अपने लिए ऐसे हथियार व मिसाइलें तैयार कर लेंगे। इससे परमाणु युद्ध का संकट मँडरा रहा है और अगर ये सब आतंकवादियों के हाथ लग गया तो विनाश की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

एक अंतर्राष्ट्रीय समझौते का सामने आना आवश्यक है ताकि सारे देश परमाणु बमों के बारे में कोई निर्णय ले सकें और इस मसले को तत्काल हल करने से जुड़ा उत्तरदायित्व ग्रहण करें।

2. हम वैश्विक भूतापन अर्थात ग्लोबल वार्मिंग और उच्च उपभोक्तावाद की पश्चिमी जीवनशैली के अनुकरण से भी ग्रह को नष्ट कर रहे हैं। यह मानव जाति के इतिहास में एक नया अध्याय है।

   हम आगे बढ़ने की राह कैसे पा सकते हैं? हम उचित और अनिवार्य निर्णय लेने की संकल्प शक्ति कैसे उत्पन्न कर सकते हैं? जब तक रवैए में बदलाव नहीं आता, इन मामलों को भी सुलझाना कठिन होगा, जब अपने हितों को परे धकेलते हुए, सरकार नीति संबंधी निर्णय निर्धारण क्षमता पर ध्यान दिया जाएगा, तभी कोई हल सामने आने की संभावना है।

3. ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जो एक ऐसा ढाँचा दे सकते हैं जिसका पालन किया जा सकता है। ऐसा ही एक उदाहरण प्रेजीडेंट गिस्कार्ड तथा चांसलर श्मिट् के संदर्भ में दिया जा सकता है, जो उन्होंने युद्ध से पूर्व के वर्षों में, दो भूतपूर्व शत्रु राष्ट्रों के आपसी सहयोग के साथ प्रस्तुत किया। ऑस्कर एरियस, कई वर्षों तक इस परिषद के सदस्य रहे, वे एक नोबेल पुरस्कार विजेता हैं, जो उन्हें मध्य अमेरिका में किए गए काम के लिए मिला था। उन्होंने शांतिपूर्ण अभियानों को सफल बनाने के लिए अथक प्रयास किए हैं।

4. हम दक्षिणी अफ्रीका के सबक़ भी ले सकते हैं। वहाँ अनेक लोगों का यही मानना था कि यदि अश्वेतों को बहुमत मिला तो वे अपने लिए प्रतिकार चाहेंगे। नेल्सन मंडेला ने

पूरी स्पष्टता के साथ इस तथ्य को समझा कि दक्षिणी अफ्रीका को एक इंद्रधनुषी राष्ट्र बनाना होगा, जहाँ सभी व्यक्तियों को समान भाव से आदर–मान दिया जाएगा। ट्रुथ और रिकंसीलेशन कमीशन ने एक ऐसा ढाँचा प्रस्तुत किया है, जो विभिन्न धर्मों तथा देशों की कठिनाईयों के लिए प्रासंगिक हो सकता है।

5. सभी देशों को, संयुक्त राष्ट्र को गंभीरता से लेना चाहिए। हम इस संगठन के नियमों और आदर्शों को जानते हैं। प्रायः संयुक्त राष्ट्र की ओर से आलोचना के स्वर मुखर होते हैं जो इसके सदस्यों के प्रति होने चाहिए। सभी सरकारें मिल कर संयुक्त राष्ट्र के कार्यों को अंज़ाम दे सकती हैं।

   भले ही वर्तमान ढाँचे में सुधार की संभावना है किंतु इसके बावजूद बहुत प्रगति की जा सकती है। केवल एक बदलाव, रवैए में आने वाला परिवर्तन ही संसार में महापरिवर्तन लाने का उत्तरदायी हो सकता है। अगर महान और शक्तिशाली देश भी संयुक्त राष्ट्र के नियमों के अधीन हो जाएँ और अपनी इच्छानुसार उन नियमों का उल्लंघन न करें, तो ऐसे परिवर्तन के साथ प्रगति होना संभव है।

6. संयुक्त राष्ट्र के नियमों के साथ–साथ हमें एएसईएएन द्वारा की गई प्रगति पर भी ध्यान देना चाहिए, जैसा कि मैंने पहले भी कहा।

   यह सभा समस्याओं को हल नहीं कर सकती, क्योंकि यह हमारा उद्देश्य नहीं, परंतु हम प्रक्रिया की ओर संकेत कर सकते हैं, क्या आपकी सामूहिक प्रज्ञा कोई ऐसे सुझाव दे सकती है कि सरकारों को काम करने के लिए प्रेरित कैसे कर सकते हैं, ऐसे कौन से उपाय अपनाए जा सकते हैं कि यह विश्व जीने के लिए एक सुरक्षित स्थान बन सके? हम उन सभी समस्याओं को रेखांकित कर सकते हैं, जिनके लिए तत्काल कोई उपाय करने होंगे। हम प्रभावी कारवाई के महत्व पर बल दे सकते हैं। हम उन सभी संकटों की ओर इंगित कर सकते हैं, जिन्होंने इस समय हमें घेर रखा है।

   अगर हमारे पास सामान्य रूप से स्वीकृत आचार व नीति होगी तो एक न्यायी और शांतिपूर्ण विश्व की कल्पना की जा सकती है।

   मैं आशा करता हूँ, आगामी दो दिवसीय विचार–विमर्श में, आपके अमूल्य सहयोग से, हम कुछ ऐसे ही उपाय तलाश सकेंगे जो स्वार्थ से परे, आचारपरक सरकारों को प्रेरित करने की दिशा में सहायक होंगे। अगर हम इसे प्राप्त कर सके, तो हम वह सब प्राप्त कर सकेंगे, जो ताकेओ फुकुदा और हेल्मुट श्मिट् परिषद के आरंभिक दिनों में प्राप्त कर सके थे।

,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,

स्वागत संबोधन

आदरणीय डॉ. फ्रांज़ वरानतिज़्की

ऑस्ट्रिया के भूतपूर्व चांसलर

सह–सभापति, इंटरएक्शन परिषद

विएना इंटरफेथ डायलॉग के व्यवस्थापक सभापति

एक्सीलेंसीज़, विशिष्ट अतिथिगण, देवियो और सज्जनो!

मुझे विएना की इस अद्भुत नगरी में आप सबका स्वागत करते हुए, हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है परंतु इंटरफेथ डायलॉग का यह संवाद मेरे लिए बहुत महत्व रखता है।

लगभग तीस वर्ष पूर्व, प्रधानमंत्री ताकेओ फुकुदा, देशों तथा राष्ट्रों के भतपूर्व प्रमुख नेताओं के साथ यहीं मिले थे, जिनमें से केवल मैल्कम फ्रेज़र और प्रेजीडेंट ओबसांजो ही आज उपस्थित हैं। मैं सोचता हूँ कि अगर उन लोगों से उस समय यह पूछा होता कि उनका यह समूह कब तक अस्तित्व में बना रहेगा तो उनके उत्तर क्या होते। वैसे तो सबसे पहले, इस बात के लिए जापानी सरकार को धन्यवाद देना होगा, जिसने काफ़ी हद तक, अन्य सरकारों के साथ मिल कर, इसे वित्तीय सहायता प्रदान की। इसके अतरिक्त अपने सदस्यों की बौद्धिकता तथा विश्लेषण क्षमताओं व योग्यताओं के लिए भी आभार प्रकट करता हूँ – हम आज भी एक समूह के तौर पर जीवित हैं और आज हमारी उपस्थिति ने इसे सिद्ध कर दिया है।

मेरा मानना है और मेरा विश्वास है कि हम संसार को यह संदेश देने में सफल होंगे कि आपस में विचारों का आदान–प्रदान कितना महत्व रखता है और कैसे इसके माध्यम से विवादित विषयों पर भी सर्वसम्मत निर्णय किए जा सकते हैं।

दो साल पहले, 1814 में, प्रमुख यूरोपियन राजनीतिक शक्तियाँ तथा डिप्लोमेसी विएना में एकत्र हुईं ताकि नेपोलियन के बाद वाले युग में, महाद्वीप के लिए एक नई राजनीतिक व्यवस्था व तंत्र सुनिश्चित किया जा सके। शांति की स्थापना तो हुई किंतु यह अधिक समय तक नहीं चली।

इस अनुभव ने हमें सिखाया कि शांति स्थापित करना और उसे बनाए रखना – ये दोनों ही स्थायी चुनौती के रूप में बने रहेंगे। तभी से इंटर एक्शन परिषद इस चुनौती को पूरा करने के लिए आगे आती रही है।

जब 1996 में, हमारे मानद सभापति हेल्मुट श्मिट् के नेतृत्व में उच्चस्तरीय विशेषज्ञ दल ने, विएना में भेंट की, तो इसके कुछ निष्कर्ष थे, जैसा कि अरस्तू ने हमें सिखाया है, 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। क्योंकि हमें समाज में रहना है – क्योंकि हमें आपस में मिल–जुल कर रहना चाहिए – मनुष्यों को अपने लिए नियमों व सीमाओं की आवश्यकता होती है।' आचार नीति वे मापदंड हैं जिनके साथ एक सामूहिक जीवन संभव हो सकता है। इनके अभाव में मानवजाति को एक दिन फिर से वनों में लौट जाना होगा। आइए, इसी भावना को अंगीकार करते हुए, अपने विचार–विमर्श का आरंभ करें।

<u>उद्घाटन समारोह के वक्तव्य</u>

सेवानिवृत्त आदरणीय जीन क्रेटियन

कनाडा के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

सह–सभापति, इंटर एक्शन परिषद

श्री फेडरल प्रेजीडेंट

मैडम प्रेजीडेंट

एक्सीलेंसीज़, विशिष्ट अतिथिगण, देवियो और सज्जनो!

मुझे विएना में आ कर बहुत अच्छा लग रहा है, यह एक समृद्ध विरासत वाला सुंदर शहर है।

हेल्मुट श्मिट् की तरह, मैंने भी हाल में ही अपना बड़ा जन्मदिवस मनाया, मेरी आयु अस्सी वर्ष की हो गई। और मैं भी उनके और हमारे जैसे अन्य व्यक्तियों की तरह अपनी सक्रियता के साथ कार्यरत हूँ। आप जानते हैं, कनाडा में हमारी छह बड़ी शहरों की मेयर अंततः इस साल रिटायर हुईं, वे 93 वर्ष की हैं।

मैंने यह सब इसलिए कहा क्योंकि देशों तथा सरकारों के भूतपूर्व प्रमुख होने के नाते, हमें अभी अपनी ओर से बहुत योगदान देना है। हमारे पास उपाय हैं। हम अब भी वैश्विक उपायों के

प्रति चिंतित हैं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि, अब हम किसी एक देश का प्रतिनिधित्व नहीं कर रहे बल्कि कैरियर के इस मोड़ पर आने के बाद, हमें सभी राष्ट्रों के प्रतिनिधित्व का अवसर मिल रहा है। हालाँकि मैं अभी कौंसिल का बहुत पुराना सदस्य नहीं हूँ, परंतु मैं अपने संस्थापक सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने एक ऐसे फोरम की स्थापना की, जहाँ भूतपूर्व नेतागण अपनी सामूहिक चेतना और विवेक के बल पर संसार की जटिल समस्याओं का विश्लेषण करते हुए, उनके हल निकाल सकते हैं।

विएना में कौंसिल की पहली सभा के दौरान, संस्थापक सदस्यों ने पहचाना कि विश्व शांति को दो मोर्चों से ख़तरा था – राजनीतिक–सैन्य तथा आर्थिक – वे उन उच्च प्राथमिकता वाले विषयों को सूची में पहले स्थान पर लाने के लिए एकमत हुए और वही हमारे काम का मूल भाग रहा है : निशस्त्रीकरण तथा शांति का प्रचार तथा विश्व अर्थव्यवस्था का पुनः उत्थान। इन इंटरफेथ संवादों को आरंभ करते हुए, हम इस तथ्य के प्रति सजग हैं कि युद्ध ने पूर्वी यूरोप में शांति व सुरक्षा के लिए ख़तरा बनते हुए, पूरे संसार में धनी तथा निर्धन वर्ग की खाई को गहरा किया है और व्यक्तियों तथा देशों के परस्पर संबंधों को भी कटुता प्रदान की है।

1987 में, कौंसिल ने रोम में धार्मिक नेताओं का एक सम्मेलन किया, जो इतिहास में अपनी तरह का पहला सवांद था, और इस तरह हमने सार्वभौम नीति संबंधी मापदंडों पर कार्य आरंभ किया, जो आज भी उतना ही महत्व रखता था, जितना कि आज से तीस वर्ष पूर्व था। आज विएना में हमारे साथ बहुत सारे विशेषज्ञ उपस्थित हैं, परंतु कौंसिल विशेष रूप से महान धर्मशास्त्री हान्स कुंग के प्रति आभारी है, जो सदा से हमारे पथप्रदर्शक रहे हैं और जिनकी अनुपस्थिति इस सप्ताह विशेष रूप से अनुभव की जाएगी।

,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,

3. सहनशीलता का गुण (13,193 शब्द)

नाईजीरिया के भूतपूर्व राष्ट्रपति महामहिम ओलुसेगुन ओबासांजों की अध्यक्षता में सत्र – क्या सहनशीलता का गुण सिखाया जा सकता है– जहां सहनशीलता का अर्थ घ्रणा एवं ईर्ष्या के मुकाबले सकारात्मक सम्मान है? क्या हम अपने खुद के धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सभ्यता की पहचान पर ध्यान देकर समस्याओं का निदान कर सकते हैं एवं उसी समय दूसरे देशों एवं लोगों भी सम्मान दे सकते हैं? सत्र।।।, जिसमें तीन परिचयकर्ता थे, ने इन प्रश्नों का जबाव दिया। पहले रब्बी डॉ. जेरेमी रोसेन ने सत्र का परिचय दिया। वियना के महान विचारकों को श्रृद्धांजलि देते हुए उन्होंने बताया कि शब्दों के विभिन्न अर्थ हुआ करते हैं और वो समय के साथ बदलते रहते हैं। 'सहनशीलता' शब्द का अर्थ इसका एक श्रेष्ठ उदाहरण है। यह अक्सर शक्तिशाली के द्वारा कमजोर लोगों को दिया गया उपहार है। यदि कोई व्यक्ति एक अन्य धर्म

का सम्मान करता है, लेकिन उसे एक हीन स्थान देता है, आज 'सहनशीलता' का यही अर्थ हो गया है। दुख की बात यह है कि दुनिया के कई हिस्सों में एक ही धर्म श्रेष्ठ होने का दावा करता है। धार्मिक परंपराओं के अंदर भी अन्य धर्मों एवं संप्रदायों को दबाया जाना भी हमारे युग की सबसे गंभीर समस्या है। यदि ''सहनशीलता'' शब्द सार्थकता में प्रयोग किया जाता है, तो इसमें दूसरे धर्मों या धार्मिक परंपराओं के लिए समानता एवं सम्मान का भाव होना चाहिए। धार्मिक एवं राजनैतिक परिदृश्य में सहनशीलता की कमी आज दुनिया में नफरत और टकराव का मुख्य कारण बन गई है। दूसरे परिचयकर्ता, डॉ. आरिफ जमहारी ने इस्लामिक दृष्टि से सहनशीलता का अर्थ पेश कियाः यह एक मौलिक सिद्धांत है, जो धार्मिक रूप से जुड़ा नैतिक दायित्व है। कुरान में कहा गया है कि किसी खास मत में विश्वास किसी का भी व्यक्तिगत विषय है एवं इसमें दूसरे मत का तिरस्कार करने या उसे अपमानित करने की निंदा की गई है। सभी धर्मों में सहनशीलता के गुण का पाठ पढ़ाया गया है, इस संदर्भ में उन्होंने बताया कि इसे दूसरे देशों और लोगों का सम्मान करने के लिए नैतिक आधार के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए। दुर्भाग्य से कई मानवीय समस्याएं उन लोगों की वजह से पैदा होती हैं, जो अपने मत को गलत समझते हैं, जिससे न केवल उनके अनुयायी प्रभावित होते हैं, बल्कि पूरा समाज भी प्रभावित होता है एवं विभिन्न देशों या राज्यों के बीच टकराव हो सकता है। अक्सर गैर धार्मिक विषयों को धार्मिक विषय का रूप दे दिया जाता है। तीसरे परिचयकर्ता, प्रोफेसर डॉ. पॉल एम. जुलेनर ने बिना पूर्व तैयारी के अपनी प्रस्तुति दी और अपने पेपर पेश किए। मौखिक प्रस्तुति में उन्होंने विश्लेषण किया कि धर्मों के कुछ सदस्य हिंसा का सहारा क्यों ले लेते हैं, जबकि अधिकांश धर्म शांति, न्याय, दया एवं उदारता की शिक्षा देते हैं। यह कुछ व्यक्तियों के कारण होता है, न कि धर्म के, कि कुछ धर्म हिंसा का सहारा लेते हैं, एवं कुछ अन्य धर्म शांति का। यूरोप में अधिनायकवाद का मूल्यांकन करते हुए डॉ. जुलेनर ने निष्कर्ष निकाला कि इसकी जड़ें चिंता में जमी हैं। नीति का असली लक्ष्य अन्य लोगों को पीड़ा से मुक्त करना है, एवं विश्व के प्रमुख धर्म उदारता के आधार पर एक दूसरे के साथ सहयोग करके शांतिपूर्ण विश्व का निर्माण कर सकते हैं। उनके कागजातों में यूरोप में 15–16 शताब्दी के शांति समझौतों एवं उसके बाद ऐतेहासिक विकासों की व्याख्या की गई। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि आधुनिक यूरोप धर्मनिरपेक्ष नहीं बल्कि बहुलतावादी है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री यासुओ फुकुडा के पेपर में एशिया के अनेक ईश्वरवादी समाजों की चर्चा की गई एवं बताया गया कि उनका बहुलतावादी नैतिक मान्यताओं वाला समाज अन्य मतों एवं नैतिक मान्यताओं के प्रति अधिक सहनशीलतावादी है। उन्होंने उदारता, अन्य लोगों के प्रति सांस्कृतिक भावनाशीलता एवं आत्मविश्वास के निर्माण को नैतिकता का आम तत्व बताया। प्रो. थॉमस एक्सवर्दी ने अपने पेपर ''सहनशीलताः हमारे संप्रदायवादी युग में कम सराहा गया गुण'' (टॉलरेंसः एन अंडरएप्रिशिएटेड वर्च्यु इन अवर सेक्टेरियन एज़) में बताया कि सहनशीलता विनम्रता में समाहित एक व्यक्तिगत दृष्टिकोण या गुण है एवं सहिष्णु रहना उन अभ्यासों या व्यवस्थाओं का संग्रह है जो अन्य लोगों की संस्कृति के साथ हस्तक्षेप न करने के विकल्प संभव बनाता है। इस बात पर हर कोई सहमत था कि विश्व को अधिक न्यायवादी एवं शांतिपूर्ण बनाने के लिए केवल सहनशीलता पर्याप्त नहीं है। जो लोग हमसे अलग हैं, उनकी स्वीकार्यता, आपसी सद्भाव एवं पारस्परिक सम्मान भी उतना ही आवश्यक है। कुछ ने कहा कि बहुलतावाद, आपसी व्यवहार एवं समझ भी आवश्यक हैं, जबकि अन्य लोगों ने प्रजातंत्र, स्वतंत्रता, सम्मान

एवं विश्वास को आवश्यक माना। एक रूढ़िवादी ईसाई ने कहा कि प्रेम के प्रसार पर जोर क्यों न दिया जाए, क्योंकि इसमें स्वीकार्यता, एकजुटता, सम्मान, स्वतंत्रता एवं आपसी सद्भाव समाहित है। दुर्भाग्य से अभ्यास में ये मूल्य मुश्किल से ही दिखाई देते हैं। क्या धर्म असफल हो गए हैं? धर्म अध्यात्म के बिना सहनशीलता का विकास नहीं कर सकता, एवं मनुष्य केवल हमारे व्यक्तिगत दृष्टिकोणों में ही सहनशीलता के मूल्य के विकास की उम्मीद कर सकते हैं। लेकिन यह सब नैतिक एवं अनुकरणीय नेतृत्व पर निर्भर करता है, फिर वो चाहे राजनैतिक हो, धार्मिक हो या सामुदायिक।

शब्दों का बदलता अर्थ

परिचयकर्ता

1. मनहट्टन के फारसी यहूदी समुदाय के रब्बी डॉ. जेरेमी रोसेन रब्बी, कार्मेल कॉलेज, ऑक्सफोर्ड के भूतपूर्व प्राचार्य

यहां इस शहर में होना सम्मान की बात है, जहां मेरे बौद्धिक शिक्षक लुडविग विटगेंस्टीन की जन्म हुआ था। विटगेंस्टीन एक दार्शनिक थे, जिन्होंने हमें शब्दों के अर्थ के बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बताया कि हम किस प्रकार शब्दों को उनके विशेष अर्थों से परे प्रयोग करना सीख सकते हैं। शब्द का अर्थ इसका प्रयोग होता है। हो सकता है कि हमें शब्द ''खेल'' का सही प्रयोग करने की जानकारी देने सार्वभौम परिभाषा न मिल सके। क्या चेस एक खेल है, या बॉक्सिंग या नाव चलाना एक खेल है? क्या पहेलियां खेल हैं? लेकिन हम अनुभव से और परीक्षण एवं त्रुटि की विधि से इस शब्द का सही प्रयोग सीखते हैं। असल में हम विभिन्न तरीकों से शब्द का प्रयोग करते हैं एवं यदि हम अपनी बात सही तरह से समझाना चाहते हैं, तो हमें यह सुनिश्चित करना होता है कि हम उसी तरह से शब्द का प्रयोग करें। सहनशीलता एक श्रेष्ठ उदाहरण है। अनुदानदाता अक्सर सोचता है कि वह भला हर रहा है। ग्राही उसमें पैदा हुई उच्चता की भावना को नापसंद करता है। एक अन्य वियनीज़ रिचर्ड कोएबनर ने 'साम्राज्यवाद' के बारे में लिखा; किस प्रकार एक महान शब्द ''साम्राज्यवाद'' का अर्थ बदल गया और एक महान साम्राज्य की कानून व्यवस्था प्रदर्शित करने वाला यह शब्द धीरे धीरे घ्रणित शब्द में तब्दील हो गया। अब इसका अर्थ भावनाहीन, शोषण करने वाले शासक बन गया है, जो लोगों की इच्छा के विपरीत उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करते हैं। इसकी प्रकार मानवतावद का मौलिक अर्थ ईश्वर को अस्वीकार करना था। लेकिन उसके बाद यह इस विचार का द्योतक बन गया कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माण कर सकता है। हम मानते हैं कि इसका अर्थ देखभाल, मानवता एवं अन्य मनुष्यों के प्रति चिंता है। लेकिन अब धर्मनिरपेक्ष सामाजिक पद्धति से ख्याल रखने एवं ईश्वर के द्वारा ख्याल रखने के बीच विरोधाभस एवं दो विभिन्न विचार हैं। जैसा डेनियल सी. डेनेट ने ''ईश्वर के विचार'' के बारे में लिखा है, यदि आप लोगों के समूह से कहेंगे कि वो अपने भगवान को परिभाषित करें, तो वो आपको विभिन्न प्रकार की वैकल्पिक परिभाषाएं बताएंगे। लेकिन मानवतावाद एवं ईश्वर के विचार में एक समान बात यह है कि दोनों ही इस बात पर सहमत हैं कि सबसे बड़ी अच्छाई के लिए हमें सबसे अधिक भावनाशील एवं विचारशील मनुष्य होने की जरूरत है, हम किसी और प्रकार के मनुष्य नहीं हो सकते हैं; यह कि सर्वश्रेष्ठ हासिल करने की इच्छा, चाहे वह बुद्ध हो, ईश्वर हो या बिल्कुल धर्मनिरपेक्ष विचार हमें बताती है कि हम सभी ईश्वर की रचना

हैं। और यदि हम यह मान भी लें कि हम विकास की नतीजा हैं, तब भी हम इस आम मानवता को बांटते हैं। ऐसा व्यवहार करना, जो इस मानवता को अस्वीकार करता हो, मनुष्यों के रूप में किया जाने वाला सबसे बड़ा अपराध है। एक मशहूर जर्मन यहूदी दार्शनिक हुआ है, जिसका नाम मार्टिन बुबर था। अपनी किताब ''मैं और तू'' (आई एण्ड दाउ) में उसने व्यक्तिगत प्रथम पुरुष 'मैं' एवं द्वितीय पुरुष 'तू' (दाउ) के बीच का अंतर समझाया है। आप यह अंतर अधिकांश यूरोपियन भाषाओं में पाते हैं, लेकिन इंग्लिश में यह प्रयोग से बाहर हो गया है एवं हम हमेशा तुम (यू) का प्रयोग करते हैं। बुबेर ने भगवान के साथ आदर्श संबंध का वर्णन ''आई दाउ'' के रूप में किया है, न कि अवैयक्तिक ''आई दी'' के रूप में। इसी प्रकार अंर्तमानवीय संबंध ''दाउ'' या ''ये'' से हो सकते हैं, जो अवैयक्तिक के विपरीत व्यक्तिगत व्यवहार है। दूसरे शब्दों में विकसित होते संबंध मानवता एवं अंततः धर्म के मूल हैं, फिर चाहे वो भगवान के साथ संबंध हो, अल्लाह के साथ, बुद्ध के साथ या किसी अन्य मनुष्य के साथ संबंध हो। हमारा सौभाग्य एवं उसके बाद भी भार है कि हम तेजी से बदलते समाज में रह रहे हैं। हमेशा से चक्र होते रहे हैं एवं इन चक्रों में समय लगा है। फ्रांस की क्रांति में 100 साल का समय लगा, जिसके बाद यहां स्थिरता आई (कुछ कहते हैं कि यहां इसके बाद भी स्थिरता नहीं आई)। आप प्रश्न उठा सकते हैं कि अमेरिकन क्रांति अपने मौलिक उद्देश्य से आज भी विकसित हो रही है। ब्रिटेन के अलिखित संविधान का स्थान यूरोप के कानून ने ले लिया। हम काफी तेजी से और काफी नाटकीय रुप में होने वाली घटनाएं दिख रही हैं। हमें नहीं पता है कि आगे कैसे जाना है। हम राजनेताओं के लिए अपनी मानवता छोड़ते जा रहे हैं। यह सत्य है कि कई श्रेष्ठ राजनेता भी हैं, वो हमें इस कमरे में बैठे दिखाई दे रहे हैं। इसलिए मुझे सावधान रहना होगा कि मैं सभी राजनेताओं की बुराई न करूं। लेकिन जब हम देखते हैं, और जैसा आज हम सुनते हैं, पूरी दुनिया में राजनीति की स्थिति से हमें निराशा होती है। इसलिए मैं भी पूरी तरह निराश हूं, जब मैं मध्यपूर्व की ओर देखता हूं और मैं देखता हूं कि हर क्षेत्र में राजनेता कितनी उलझन पैदा कर रहे हैं, और हम देख रहे हैं कि यह कितनी मुश्किल एवं अनपेक्षित होती जा रही है। यह हमारे वर्तमान भ्रम की ओर इशारा करती है। 19 वीं सदी में, पूर्वी यूरोप में, जहां अधिकांश यहूदी रहते थे, एक व्यक्ति रब्बी इसरायल सालांतेर को एक प्रेरणा जगी कि लोग धार्मिक हो रहे थे, लेकिन इसके बारे में सोच नहीं रहे थे। वो आवश्यक कर्मकांड तो कर रहे थे, लेकिन धार्मिक जीवन में कूप–मंडूक बनकर रह गए थे। वो एक दूसरे से संपर्क भी नहीं कर रहे थे, वास्तव में वो इसी भ्रम में थे कि उन्हें अन्य लोगों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। मैं यह कहना चाहूंगा कि यह मेरी धार्मिक आस्थाओं की सबसे बड़ी चुनौती थी। यह कोई धर्मशास्त्र नहीं है। यह धार्मिक नेतृत्व का व्यवहार एवं मानवीय स्थिति की जगह स्थापित स्थितियों में उनकी व्यस्तता है। इसरायल सैलेंटर ने एक अभियान ''मुसार'' प्रारंभ किया, जिसका अर्थ है ''नैतिक शिक्षा'', लेकिन यह नैतिक अनुशासन की ओर इशारा करता है। इसका लक्ष्य मानवता के प्रति जागरुकता पैदा करना एवं धार्मिक जीवन में अधिक जिम्मेदारी का समावेश करना है। अपने प्राथमिक लेख के रूप में उन्होंने इटली में रहने वाले 18 वीं सदी के सूफी मोज़ेज़ लुजाट्टो द्वारा लिखी गई किताब चुनी। इस प्रतिभाशाली फकीर का धार्मिक प्रतिष्ठानों के द्वारा बहिष्कार कर दिया गया था, क्योंकि उसकी शिक्षाएं काफी गूढ़ थीं। उन्होंने अच्छा मनुष्य कैसे बना जाए, इस विषय में एक छोटी सी किताब ''सच्चे मनुष्य के मार्ग'' (द पाथ्स ऑफ द राईटियस) लिखी। अपनी

प्रस्तावना में उन्होंने कहा, ''मैं कुछ भी नया नहीं कह रहा हूं। मैं कुछ भी ऐसा नहीं बता रहा हूं, जो आप पहले से नहीं जानते हैं। लेकिन मैं आपको बता दूं, आप रोज अपने दिन की शुरुआत एक अध्याय पढ़कर करें। इन सरल अध्यायों को दोहराएं, जो हम जानते तो हैं कि हमें करना चाहिए, लेकिन हममें से अधिकांश लोग करने में मुश्किल महसूस करते हैं।'' यह सत्र सहनशीलता के बारे में है। और हम इस बात की चर्चा कर चुके हैं कि इसका वास्तविक अर्थ क्या है और इसका दुरुपयोग कैसे किया जा सकता है। सहनशीलता, मेरी इच्छा है कि उस रूप में प्रयोग न की जाए, जिसमें इसका प्रयोग किया जा रहा है। ''मैं, जिसके पास सत्ता और अधिकार है, आपको अपने देश में दूसरे दर्जे का नागरिक बनकर रहने का अधिकार देता हूं।'' या ''मैं तुम्हें प्रवासी बनने और हर गंदा काम करने का अधिकार देता हूं, लेकिन समानता की उम्मीद मत करो।'' इसका अर्थ हर तरह की भिन्नता की सराहना करना और उसे सम्मान देना है। इसका अर्थ अपनी हर विविधता में मानवता के लिए प्रेम और सराहना है। इसका अर्थ, ''जियो और जीने दो'' है। हम जो शब्द कहते हैं, हमें उनका और उनके प्रयोग के तरीके का विश्लेषण करके सोचने की जरूरत है। हमें खुद से यह पूछने की जरूरत है कि क्या हमारा अर्थ वही था और उनके द्वारा हमारा अर्थ क्या था। यही आधार है, जिस पर हम भविष्य और विचारविमर्श की प्रक्रिया का निर्माण कर सकते हैं।
रब्बी डॉ. जेरेमी रोसेन द्वारा प्रस्तुत लक्ष्य एवं आशय पेपर से एक कथन, न्यूयार्क, जनवरी, 2014

अक्सर कहा जाता है कि पड़ोसी को प्रेम करने की जगह मानवता को प्रेम करना आसान है। पिछले तीन हजार सालों में सभी महान धर्म और मानवता अभियानों ने प्रेम और सौहार्द्र का पाठ पढ़ाया है। लेकिन व्यवहार में यह आदर्श से काफी पीछे रह गया है। शायद अत्यधिक विशाल लक्ष्य के कारण इसके प्रति जोश कम हो गया। अन्य बाहरी 'प्रतिस्पर्धात्मक' सिद्धांतों के प्रति दृष्टिकोण मानवता के महान आदर्शों को प्रतिबिंबित करने में असफल हो गए। अंदर भी भले ही बाहरी टकराव जितना रक्तपात न हुआ हो, पर विघटन एवं मजहबी फूट कम नहीं हुई है। वो क्या है, जो हममें से अधिकांश लोगों को भेदभाव खत्म करने से रोक रहा है और जिनसे हम सहमत नहीं हैं, उनके प्रति हिंसा अपनाने के लिए प्रेरित करता है? क्या हमारे निर्माण में यह एक गंभीर कमी है? क्या यह संस्कृति में बदलाव करने का परिणाम है। दूसरे विश्वयुद्ध की त्रासदी के बाद हम इकट्ठा हुए और निर्णय लिया कि ऐसा इसके बाद कभी भी नहीं होगा। लेकिन उसके बाद भी हम एक दूसरे पर हमला करते रहे– कंबोडिया, युगोस्लाविया, रवांडा इसके उदाहरण हैं। आंतरिक लड़ाई ईराक, लेबनॉन, सीरिया, सूडान, काश्मीर और मध्य अफ्रीका आदि में मनुष्यों पर त्रासदी ढ़ा रही हैं। कई टकरावों में विश्वशक्तियां अलग अलग पक्षों के साथ मिल जाती हैं, जिससे यह संकट और अधिक लंबा हो जाता है। यूनाईटेड नेशंस का गठन बड़ी उम्मीदों के साथ किया गया था। लेकिन यह अपना वायदा पूरा करने में असफल रहा। यहां पर नैतिकता की बजाए राजनैतिक स्वार्थों का प्रभुत्व है। क्या इस स्थिति को बदलने के लिए हम कुछ कर सकते हैं? यह हमारे सामने आज का सबसे बड़ा नैतिक प्रश्न है। हम उपदेश देने, बड़े बड़े नैतिक बयान देने में बहुत अच्छे हैं। लेकिन हम इन बातों का क्रियान्वयन करने में बहुत खराब हैं। यह सभा इन समस्याओं का सामना करना चाहती है। मेरी खुद की परंपरा ''अपने ईश्वर को प्रेम करो'' का सिद्धांत देने

वाली पहली थी (ड्यूटेरोनोमी 6.5)। इस बात से बेहतर लक्ष्य और क्या हो सकता है कि हम ईश्वर के समान कार्य करने का प्रयास करें; हम प्रेमपूर्ण संबंधों को मानवीय लक्ष्यों का शिखर बनाएं। लेकिन ईश्वर को प्रेम करना अन्य मनुष्यों को प्रेम करने के मुकाबले सरल है। किसी पति से पूछिए कि गलत काम करने वाली पत्नी को माफ करना कितना कठिन है। लगभग 2500 साल पहले सबसे पहले यहूदी धर्म ने यह संदेश दिया, कि 'अपने पड़ोसी से प्रेम करो' (लेविटिकस 19.18)। यद्यपि अधिकांश धर्मों ने ये विचार अपना लिए हैं, लेकिन हम ये लक्ष्य प्राप्त करने के लिए पहले से भी अधिक दूर हो गए हैं। क्या हम यह कहें कि अब उन्हें कोई दैवीय हस्तक्षेप ही प्राप्त कर सकता है? या हमें यह कहना चाहिए कि प्रयास करते रहना हमारा कर्तव्य है? मौलिक कथनों के बाद हुई बहसों में ये प्रश्न उठे कि व्यक्ति को किसे प्राथमिकता देनी चाहिए, भगवान को या मनुष्य को? ये समस्याएं वही हैं, जो दो हजार साल पहले तालमुदिक रब्बी के सामने उठी थीं। सैद्धांतिक रूप से यह स्पष्ट है कि ईश्वर मनुष्य के मुकाबले महान है। लेकिन बाईबल में बताया गया कि अब्राहम ने ईश्वर को इंतजार कराया, जब वो यात्रियों की जरूरतों को पूरा कर रहा था (जेनेसिस 18.3)। रोमन काल में मिडरैश (रब्बा जेन 24.7) में बहस दस्तावेजबद्ध की गई थी, कि क्या प्राथमिक है, व्यक्ति का समुदाय या मानवता। रब्बी अकीवा ने बताया कि आपके पड़ोसी को प्रेम करना बाईबल के समस्त नियमों का आधार है और इसे प्राथमिकता से लेना चाहिए। बेन अज़ाई ने बताया कि संपूर्ण मानवता ईश्वर की ही संतान है एवं एक ही स्रोत से धरती पर आई है, इसलिए सामान्य को विशेष के मुकाबले अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। यह बहस आगे बढ़ी, ''आपके शहर के गरीबों ने अधिक प्राथमिकता हासिल की।'' (टीबी बीएम 21ए)। लेकिन ''आपको पूरे विश्व के गरीबों को आहार देना चाहिए ताकि विश्व में शांति का प्रसार हो'' (टीबी जीटिन 61 ए)। मानवता की व्यापक आवश्यकताओं की पूर्ति के संघर्ष ने व्यक्ति के अपने समुदाय की प्राकृतिक संरक्षणवादी प्रवृत्तियों को नकार दिया। कोई इसका अर्थ यह लगा सकता है कि निष्कर्ष इतना साफ है, जो हर प्रश्न को समाप्त कर देता है। मैं 1966 से दक्षिण रोडेशिया में लगभग पचास सालों से अंतर–मत एवं अंतर–सांप्रदायिक संबंधों के क्षेत्र में निरंतर काम कर रहा हूं। इस पूरे समय मेरे दिमाग में दो चीजें आईं। मैं अपने धर्म के कट्टरपंथियों की जगह अन्य धर्मों के धर्मस्थलों की भावनाशील सार्वभौम आवाजों के अधिक समान हूं। लेकिन मैं अभी भी उन संबंधों का प्रयोग कर हम सभी की इच्छा के अनुरूप परिणाम हासिल करने का मार्ग नहीं तलाश पाया हूं। आंशिक रूप से यह इसलिए है क्योंकि मैं मानता हूं कि हममें से अधिकांश अपने अंतर्मन को यह समझाने में असफल रहे हैं कि इसका एक अन्य रास्ता भी है। इसी तरह अपनी बात कहूं तो मैं लोगों तक जाकर उन्हें यह समझाने में असफल रहा हूं कि उनकी या दुनिया की समस्याओं का समाधान हिंसा या पक्षपात नहीं है। यदि हम दूसरों पर हमला करने में जो ऊर्जा खर्च करते हैं, उसका सदुपयोग करना सीख लें, तो हम प्रेम करना और पीड़ा का उपचार करना सीख लेंगे। लेकिन कैसे? मुझे उन्नीसवीं सदी के मशहूर यहूदी फकीर ब्रेस्लो के रब्बी नचमान की याद आती है, जिन्होंने कहा था, ''जब मैंने एक शिक्षक के रूप में अपनी जिंदगी की शुरुआत की, तब मैं दुनिया बदलना चाहता था। तब मुझे पता चला कि मैं दुनिया नहीं बदल सकता, इसलिए मैंने अपने शहर को बदलने की कोशिश की। मुझे जल्द ही अहसास हो गया कि मैं अपने शहर को भी नहीं बदल सकता। फिर मैंने अपने परिवार को बदलने की कोशिश की। लेकिन मैं इसमें भी असफल हो गया। तब मुझे अहसास

हुआ कि मैं केवल एक व्यक्ति को बदल सकता हूं और वो मैं खुद हूं।'' यह दुखद है, लेकिन सत्य है। क्या हम सब केवल यही हासिल कर सकते हैं? यदि कोई सोचे के मानवता के मार्ग में उन लोगों ने क्या अच्छाई की है, जिन्होंने अच्छाई और मानवता का उदाहरण स्थापित करने का बीड़ा उठाया था, तो हम देखेंगे कि उनके संदेश विश्व पर उनकी अपेक्षानुसार प्रभाव नहीं छोड़ सके। इस सभा में भाग लेने वाले हम सभी लोग केवल थोड़ा अधिक प्रेम करने और संसार को एक बेहतर स्थान बनाने के प्रयास के अलावा कुछ नहीं कर सकते, जैसे हमारे निष्कर्ष केवल उम्मीद की अभिव्यक्ति हों। यदि हमें कोई सार्थक या तत्कालिक परिणाम न भी दिखें, जैसा महान हिलेल ने दो हजार साल पहले कहा था, ''कार्य पूरा करने का दायित्व आपका नहीं है, लेकिन आपमें से कोई भी स्वयं को प्रयास करने के दायित्व से मुक्त नहीं कर सकता'' (मिशना एवॉट 2.16)। दुनिया को बेहतर बनाने के लि हमें किन माध्यमों का प्रयोग करना चाहिए? क्या वो चर्च से संबंधित, राजनैतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक हैं? उनमें से सभी की अपनी सीमाएं हैं। लेकिन फिर भी ये मानवीय आचार विचार एवं कार्य के वर्तमान प्रारूप हैं। हम इनमें से किसी को भी नजरंदाज नहीं कर सकते हैं, अन्यथा मानव विचार की समस्त श्रृंखलाए प्रयास करना बंद कर देंगी। शायद हमें दो एजेंडों की जरूरत हैः एक बौद्धिक रूप से वैध नैतिक कार्यक्रम, चाहे सीमित हो, पर हम सभी उसकी सदस्यता ले सकें एवं जो संचार के भिन्न माध्यमों में पेश किया जाए। उतना ही महत्वपूर्ण एक सहज, लोकप्रिय लेकिन प्रेरक संदेश है, जो हम सभी अपना सकते हैं, ''अपने पड़ोसी को प्रेम करें''। यह पिछले तीन हजार सालों से पसंदीदा नारा है। मेरी युवावस्था में हमने इस नारे को एक अन्य नारे 'प्रेम करें, युद्ध नहीं' से बदलने की कोशिश की। शायद हमारी ऊर्जाएं उस दिशा में दिशाबद्ध होनी चाहिए कि क्या हम मानवता के शांतिपूर्ण भविष्य के लिए अपने समय के अधिक उचित समाधान जैसे शांतिपूर्ण भविष्य के लिए पुकार लगा सकते हैं।

सहनशीलता का गुणः धर्म की चुनौतियां और अन्य लोगों एवं देशों के लिए सम्मान

परिचयकर्ताः डॉ. आरिफ जमहरी नाहद लातुल उलामा, इंडोनेशिया

आज मैं सहनशीलता की विशेषताओं, धर्मों की चुनौतियों और अन्य लोगों के लिए सम्मान के बारे में बात करने वाला हूं। इस जमीं पर हर धर्म की मौजूदगी का कारण मानवता के मूल्यों और सम्मान को मजबूत करना और विश्व शांति एवं प्रगति सुनिश्चित करना है। धर्म मानवता को आलोकित करते हैं, वो विपरीत काम नहीं करते हैं। यद्यपि सच्चाई यह है कि इस धरती पर मनुष्यों की अधिकांश समस्याएं धर्मों के साथ प्रारंभ होती हैं। धर्म के लोगों के द्वारा पैदा की गई समस्याओं का अर्थ यह कदापि नहीं, कि इन समस्याओं का जन्म धर्म से हुआ हो। ये समस्याएं तब पैदा होती हैं, जब अपने व्यवहारिक ज्ञान के साथ किसी धर्म को सही रूप में नहीं समझा जाता है और अनुयायी उसका व्यवहारिक कार्यान्वयन नहीं करते हैं। धर्म की शिक्षाओं को व्यवहारिक रूप में समझने की कमी न केवल इसलिए होती है क्योंकि धर्म के अनुयायी इसे पूरी तरह से नहीं समझते हैं बल्कि इसलिए भी होती है क्योंकि वो धर्मों के बीच सही संबंधों की व्याख्या भी नहीं कर पाते हैं। धर्म के बोध में गलतियों से धर्म का गलत प्रयोग प्रारंभ हो जाता है। धार्मिक विरासत की गलत व्याख्या कई तरह से हो सकती है एवं अलग अलग प्रभाव डाल सकती है। यदि धार्मिक समुदाय के सदस्य अपने धार्मिक कर्मकांडों एवं सिद्धांतों को सही नहीं समझते हैं, तो इससे धार्मिक अनुयायी भी प्रभावित होते हैं। हालांकि जब वो धर्म के सामाजिक प्रभाव को सही नहीं समझ पाते हैं, तो इससे न केवल उनके

अनुयायी, बल्कि समाज भी प्रभावित होता है, सामाजिक तनाव एवं टकराव भी पैदा होता है। समाज में इस तरह का टकराव दुनिया के विभिन्न देशों या राज्यों में भी टकराव पैदा कर सकता है। दुनिया के धर्म अपने सिद्धांतों में बहुत अलग हैं, लेकिन दुनिया के सभी धर्मों में कई समानताएं भी हैं। नैतिकता की दृष्टि से धर्मों में समानता एवं जिस सामाजिक व्यवहार को वो बढ़ावा देते हैं, वो हर धर्म के मनुष्यों में सामंजस्य, न्याय, संपन्नता एवं बेहतर जीवन स्तर की उम्मीद हैं। इस दृष्टि से धर्मों के बीच स्थायी सामंजस्य एवं सहअस्तित्व हासिल करने के लिए, जो एकसमान हो और विरोधाभासी न दिखाया जाए, एवं वो दृष्टिकोण जो आपसी नहीं हैं, उन्हें अधिरोपित नहीं किया जाना चाहिए। इसका सम्मान करने से विभिन्न धर्म हर धार्मिक समुदाय के व्यक्ति के साथ उनके धार्मिक विश्वासों के अनुसार एकसाथ शांतिपूर्ण सहअस्तित्व में रह सकेंगे। धर्मों की त्रुटिपूर्ण व्याख्या के अलावा अन्य कारक भी हैं, जो विभिन्न धर्मों के लोगों के बीच सामाजिक टकराव में योगदान देते हैं। गैरधार्मिक स्वार्थ भी धार्मिक शिक्षाओं का रुप लेकर धर्म को गैरधार्मिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयोग कर सकते हैं। छद्म रूप से धार्मिक रूप में छिपे स्वार्थ राजनैतिक, आर्थिक या सांस्कृतिक हो सकते हैं। इस तरह के गैरधार्मिक स्वार्थ धर्म के रूप में पेश किए जाते हैं। वो किसी विशेष समूह के द्वारा हो सकते हैं, जो धर्म के नाम पर अपने स्वार्थों की घोषणा करते हों या धार्मिक विषयों की ओर भी इशारा कर सकते हैं। धार्मिक समुदाय के सदस्यों के रूप में हमारा कर्तव्य सभी अनुयायियों को स्वतंत्रता प्रदान करना है, जिससे वो अपने मत की व्याख्या कर धर्मों की गलतफहमियों को कम कर सकें, जो दुनिया के लोगों के बीच सामाजिक टकराव को जन्म देती हैं। इसके अलावा हमें उन समस्याओं के बीच अंतर भी समझदारी से करना होगा, जो असल में धार्मिक होती हैं या धार्मिक समस्याएं प्रतीत होती हैं। कई बार राजनैतिक अधिकरणों के स्वार्थों को भी धार्मिक विषयों के रूप में पेश कर दिया जाता है, जबकि सच्चाई यह होती है, कि वो मौलिक रूप से बहुत अलग होते हैं। इस समस्या का समाधान करने के लिए हमें यह समझना होगा कि असल में धार्मिक क्या है और उसे अन्य स्वार्थों से ऊपर रखना होगा। जब धर्म को अन्य स्वार्थों से ऊपर रखा जाएगा, तब यह उस परंपरा के पूर्वजों की ओर से आशा की किरण का काम करेगा। दूसरी तरफ यदि सच्चे धार्मिक विषयों को इन स्वार्थों से नीचे रखा जाएगा, तब धार्मिक समुदाय हमेशा टकराव की स्थिति में रहेंगे। इसी कारण से हर धार्मिक समुदाय के अंदर धार्मिक अनुयायियों के बीच सामंजस्य होना चाहिए और धर्म को शांति के अस्त्र के रूप में संसार में टकराव को कम करने का लक्ष्य साधना चाहिए। इसलिए सभी धर्मों के द्वारा पढ़ाए गए सहनशीलता के गुण को अन्य लोगों एवं देशों के सम्मान के लिए नैतिक आधार के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।

प्रथम आवश्यकता के रूप में सहनशीलता

इस्लाम अन्य धर्मों को किस दृष्टि से देखता है, यह एक रोचक विषय है, खासकर तब, जब यह चर्चा अंतर–संप्रदाय चर्चा के रूप में हो रही हो। यहां पर प्रश्न यह है कि इस्लाम अन्य धार्मिक मतों को किस रूप में देखता है। हम यह चर्चा करें, उससे पहले अन्य धर्मों के अनुयायियों के प्रति इस्लामिक सहनशीलता के सिद्धांतों का वर्णन जरूरी है। सहनशीलता के सिद्धांत में धार्मिक स्वतंत्रता का विषय शामिल है। अरबी भाषा में सहनशीलता को तासामुह कहते हैं, जो अन्य सिद्धांतों जैसे आशीर्वाद (रहमत), बुद्धिमत्ता (हिकमत), सार्वजनिक गुण (मसलाहत अल–अम्मा) एवं न्याय (अद्ल) के साथ इस्लाम का मौलिक सिद्धांत है। ये

इस्लामिक सिद्धांत सार्वभौम एवं निश्चितता (काथियत) के विषय माने जाते हैं, मतलब मुसलमान चाहे जहां रहें, उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि चाहे जो भी हो, लेकिन उन्हें इन सिद्धांतों का पालन करना होगा। दूसरे शब्दों में ये सिद्धांत धार्मिक रूप से नैतिक दायित्व से जुड़े हैं। इसलिए यदि इन सिद्धांतों को सही रूप में समझा जाए एवं धार्मिक रूप से स्थापित नैतिक दायित्व माना जाए, तो इसका मतलब होगा कि मुस्लिम न केवल इस सिद्धांतों का पालन करेंगे, बल्कि अपने साथी मुसलमानों में और जब उचित हो, तो अन्य धर्मों के अनुयायियों के बीच भी इनका प्रसार करेंगे। इन सिद्धांतों के द्वारा मुस्लिमों को अन्य धर्मों के लोगों के साथ सहअस्तित्व में रहने में कोई परेशानी नहीं होगी। धार्मिक विश्वासों के बीच अंतर, सही रूप में समझे जाने पर मुस्लिमों को अन्य धर्म के अनुयायियों के साथ शांतिपूर्ण तरीके से रहने से नहीं रोकेगा। कुरान में सहनशीलता की शिक्षा– खासकर अन्य धर्मों के प्रति सहनशीलता पर बहुत जोर दिया गया है। उदाहरण के लिए कुरान अन्य लोगों के ईश्वर या विश्वास का अपमान किए जाने की निंदा करता है। यह निम्नलिखित पंक्तियों में साफ हो जाएगा :–

''... और उन लोगों का अपमान मत करो, जो अल्लाह के अलावा किसी और की पूजा करते हैं, ऐसा करने वाले ज्ञान के अभाव में अल्लाह से अदावत करते हैं। तो हमने हर समुदाय के लिए उनके काम सुखद बना दिए। तो उनके ईश्वर के लिए उनकी वापसी है, और वो उन्हें बताएगा कि वो क्या किया करते थे'' (अध्याय 6, छंद 108)। उपरोक्त पंक्तियां बताती हैं कि मुस्लिमों को दूसरे धार्मिक विश्वासों की अपमान से रक्षा करनी चाहिए। कुरान में सहनशीलता के एक अन्य रूप, व्यक्ति के मत (यदि यह इस्लाम से अलग है, तो भी) का अनुपालन करने की स्वतंत्रता का भी उल्लेख हुआ है। मुस्लिमों को अन्य लोगों पर इस्लाम अपनाने का दबाव नहीं डालना चाहिए, क्योंकि विश्वास अंतर्मन की पसंद पर निर्भर होना चाहिए एवं पसंद बलपूर्वक नहीं थोपी जानी चाहिए। इसके अनुसार यदि किसी को बलपूर्वक इस्लाम कबूल कराया जाता है, तो इस्लाम में उसका विश्वास स्वीकार्य नहीं होगा। दूसरे शब्दों में इस्लाम हर मनुष्य के लिए धर्म और आस्था की स्वतंत्रता को मान्यता देता है; यही इस्लाम का मौलिक सिद्धांत है। कुरान में ऐसे कई कथन हैं, जिनमें कहा गया है कि किसी खास मत में विश्वास व्यक्ति की अपनी पसंद का विषय है। लोगों को गुमराह मत को अपनाने की भी स्वतंत्रता दी गई है। यदि वो सच्चाई चुनते हैं, तो यह उनकी भलाई के लिए है और यदि वो गलती से असत्य चुन लेते हैं, तो उसके परिणाम भी उन्हें मिलेंगे। निम्नलिखित पंक्तियों में यही विचार अभिव्यक्त किया गया है :–

''धर्म में कोई बंधन नहीं है– सही पथ स्पष्ट तौर पर गलत से अलग है''– 2:256

''सत्य आपका ईश्वर है; जो उसे मानता है, उसे मानने दें और जो उसे नहीं मानता, उसे नहीं मानने दें।'' – 18:29

''हमने उसे सही रास्ता दिखाया; वो हमारा शुक्रगुजार है या नाशुक्र है, यह उसपर है।'' – 76:3

''और यदि अल्लाह चाहेगा, तो पृथ्वी का हर व्यक्ति उसमें भरोसा करने लगेगा, हर एक व्यक्ति। क्या तब आप लोगों पर विश्वास करने के लिए जोर डालेंगे?'' 10:99

इस्लाम में कहा गया है कि किसी धर्म के सभी अनुयायियों को धर्म एवं पूजा करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। पूजा के सभी धार्मिक स्थान (चाहे यहूदी हों, ईसाई या इस्लामिक) इस्लाम के द्वारा पवित्र माने जाते हैं। इसीलिए इस्लाम मुसलमानों को सभी के लिए पूजा

करने की स्वतंत्रता की रक्षा करने का निर्देश देता है। इस्लाम दृढ़ता से एक सार्वभौम, उदार समाज की स्थापना का समर्थन करता है, जिसमें सभी लोग सुरक्षा और समानता के साथ धार्मिक स्वतंत्रता का आनंद ले सकें। इसलिए कुरान में अल्लाह ने कहा हैः ''अल्लाह ने कभी एक तरह के लोगों पर दूसरों के द्वारा रोक नहीं लगाई, अवश्य ही खड़े किए गए मठ, गिरिजाघर, सिनेगोग एवं मस्जिदें होंगी, जहां ईश्वर के नाम का पर्याप्त स्मरण किया जाता है। (सूरा 22, तीर्थयात्रा, छंद 40)। संक्षेप में यह साफ है कि अलकुरान हमसे यह समझने को कह रहा है कि लोगों का धार्मिक विश्वास उनकी निष्ठा और ज्ञान के आधार पर होना चाहिए और किसी भी दबाव से मुक्त होना चाहिए। धार्मिक स्वतंत्रता के सिद्धांत का किसी खास धर्म की सच्चाई से कोई लेना देना नहीं है। इस सच्चाई के बावजूद कि अल कुरान इस्लाम को सत्य धर्म मानता है, लेकिन यह मुस्लिमों को अन्य धर्मों का सम्मान करने से रोकता नहीं है। चूंकि लोगों को अपनी पसंद का कोई भी धर्म अपनाने की स्वतंत्रता है, इसलिए इस बात की गारंटी के रूप में उनसे दूसरे लोगों के द्वारा अपनाए गए धर्म का आदर करने के लिए कहा गया है।

अहले किताब के बारे में इस्लाम के विचार

कुरान में अन्य धर्मों के बारे में विशेष उल्लेख किया गया है। इसे अहले किताब (किताब के लोग) कहते हैं। कुरान में इसी शब्द के लिए दूसरे अर्थ जैसे उतुल किताब (जिन्हें पिछली किताबें दी गई थीं) और नसीबन मिनल किताब का प्रयोग किया गया है। कुरान में अहले किताब का उल्लेख 31 बार 7 अलग अलग अध्यायों में किया गया है। कुरान में शब्द अहले किताब अद्वैतवादी अब्राहम धर्मों, जिन्हें पवित्र ग्रंथ प्राप्त हुआ है, के अनुयायियों को इंगित करता है। यह सिद्धांत प्रदर्शित करता है कि इस्लाम पिछले धर्मों (ईसाई और यहूदी) एवं उनके ग्रंथों को सत्य मानता है एवं उन पिछले ग्रंथों में भरोसा इस्लामी विश्वास के स्तंभों में शामिल है। इसके अलावा कुरान मुस्लिमों को यीशु एवं मोसेस और बाईबल के अन्य पैगम्बरों में भरोसा करने के लिए कहता है, क्योंकि वो ईश्वर के दूत हैं, जिन्हें ईश्वर ने दयाकी अभिव्यक्ति के रूप में मानवसेवा के लिए भेजा। उदाहरण के लिए कुरान में कहा गया है कि इसमें मोसेस के तोरा की सभी आवश्यक शिक्षाएं और यीशु के उपदेश ही नहीं, बल्कि बाईबल के कई पैगम्बरों के जीवन की कहानियां और सलाह भी शामिल हैं। इसलिए अल्लाह ने पवित्र कुरान के विषय में कहा हैः तेरे लिए मैंने सत्य का ग्रंथ भेजा, एवं उस ग्रंथ की पुष्टि की, जो इससे पहले आया और इसकी सुरक्षा की। (सूर 5, तालिका विस्तार, पद 48)। उनकी कहानियों में उनके लिए एक सीख है, जो इसे समझते हैं। कुरान में कोई भी शिक्षा नई नहीं रखी गई है, बल्कि इसमें उन्हीं शिक्षाओं को दोहराया गया है, जो इससे पहले थीं एवं इसमें जो लोग भरोसा करते हैं, उनके लिए विस्तृत विवरण, दिशानिर्देश और दया हैं। (सूरा 12, जोसफ, पद 111) यद्यपि उन ग्रंथों (कुरान, तोरा और गॉस्पेल) का हर अनुयायी अपने मतभेद की पुष्टि करता है, कुरान इस बात पर जोर देता है कि उनमें अंतरों के मुकाबले समानताएं अधिक हैं। यह मुस्लिमों, यहूदियों और ईसाईयों के बीच विशेष संबंध की पुष्टि करता है। इसलिए यह मुसलमानों को किताब के लोगों के बीच कलिमातुन सवा (एक आम मंच) तलाशने का आदेश देता है, क्योंकि उन्हें आत्मीय लोगों के रूप में देखा जाता है, जिनके विश्वास दैवीय ग्रंथों पर आधारित हैं एवं जो आम पैगंबरी परंपरा का पालन करते हैं। कुरान अध्याय 3:64 देखें, जिसमें कहा गया हैः ''ओ किताब के लोगों हमारे और तुम्हारे बीच आम सहमति

बनाओः हम केवल अल्लाह की पूजा करते हैं और हम किसी और का संबंध उससे स्थापित नहीं करेंगे और हममें से कोई भी लोगों को अल्लाह के अलावा अन्य ईश्वरों की ओर नहीं ले जाएगा और यदि वो वापस जाएंगे, तो कहोः यह ध्यान रखों कि हम मुस्लिम हैं (अल्लाह की इच्छा का पालन करते हैं)। कलिमातुन सवा के अर्थ के विषय में मुस्लिम विद्वानों के अलग अलग विचार हैं। कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि शब्द कलिमातुन सवा में समतावाद और न्याय, टकराव के शांतिपूर्ण निपटान एवं विश्वाससम्मत हत्या को खारिज करने की शिक्षाएं समाहित हैं। इसलिए एक बहुसांस्कृतिक समाज में इस्लाम सामाजिक स्तर पर सर्वसम्मति और एक समान मंच तलाशने के महत्व पर जोर देता है। सभी धर्मों में समानता पर बल देने के अलावा अलकुरान ने यह बात भी मानी है कि विभिन्न किताबों वाले लोगों की प्रकृति भी अलग अलग होती है। उनमें से कुछ मुसलमानों के प्रति घ्रणा रखते हैं और उन पर अपना धर्म अपनाने का दबाव डालते हैं, वो मुस्लिमों को गुमराह करते हैं एवं धर्म में मुसलमानों का विश्वास तोड़ते हैंः ''और यहूदी एवं ईसाई आपको तब तक स्वीकार नहीं करेंगे, जब तक आप उनका धर्म नहीं अपना लेंगे। कहिए, अल्लाह का मार्गदर्शन ही एकमात्र मार्गदर्शन है। यदि यदि तू ज्ञान प्राप्त होने के बाद भी उनकी इच्छा मानेगा, तो अल्लाह तुझे अल्लाह से बचाने के लिए कोई भी नहीं आएगा''। (अध्याय 2:120–121) ''किताब वाले लोगों का एक समुदाय तुझे गुमराह करना चाहता है। लेकिन वो केवल खुद को ही गुमराह करते हैं। लेकिन वो इसका अनुभव नहीं कर पाते हैं। (अध्याय 3:69) ''किताब वाले कई लोग सच्चाई जानने के बाद भी तेरे प्रति ईर्ष्या के चलते अल्लाह में तेरा विश्वास तोड़ना चाहते हैं। उन्हें माफ कर दे और अल्लाह के आदेश का इंतजार कर। अल्लाह यह सब काम स्वयं कर सकता है। (अध्याय 2:109) यद्यपि अल कुरान में यह उल्लेख भी है कि किताब वाले सभी लोग एक से नहीं हैं। किताब वाले ऐसे लोग भी हैं, जो ईश्वर की बातें पढ़ते हैं और अच्छे काम करते हैं एवं बुराई रोकते हैं।

इसलिए कुरान में अल्लाह ने कहा हैः ''वो सब एक समान नहीं हैं, किताब वाले लोगों में एक समुदाय ऐसा है, जो अल्लाह की बातें बोलता है और अल्लाह से दुआ करता है। वो अल्लाह में भरोसा करते हैं और अंतिम दिन वो सही अपनाते हैं और गलत पर रोक लगाते हैं, अच्छे काम करते हैं और वो लोग धर्म के मार्ग पर होते हैं। वो जो भी अच्छा करते हैं, वो उनसे कभी अलग नहीं होता है और अल्लाह नेक को जानता है। (कुरान अध्याय 3:113–115)। चूंकि किताब वाले लोग एकसमान नहीं होते हैं, खासकर मुस्लिमों के प्रति अपने दृष्टिकोण के विषय में, अलकुरान मुस्लिमों को उपदेश देता है और किताब वाले लोगों के मुस्लिमों के प्रति दृष्टिकोण के अनुसार उनसे कैसे व्यवहार किया जाए, इस बारे में उन्हें अलग दिशानिर्देश देता है। इसलिए अल कुरान मुस्लिमों से उन किताब वाले लोगों का सम्मान करने को कहता है, जो मुसलमानों से लड़ते और उन्हें अपने घर से नहीं निकालते हैं, और उनके साथ न्यायपूर्ण एवं उदार व्यवहार करते हैं। इसके अलावा कुरान मुसलमानों को अपने सामाजिक व्यवहार में किताब वाले लोगों के साथ शांतिपूर्ण व्यवहार करने को कहता है। यदि किताब वाले लोगों के साथ चर्चा हो तो मुस्लिम उन्हें सर्वश्रेष्ठ तर्क देंगे। यदि किताब वाले लोग मुस्लिमों को अपने घर से बाहर निकालते हैं और उन्हें खतरे में डालते हैं, तो मुस्लिमों को ऐसे किताब वाले लोगों के साथ दोस्ती रखना प्रतिबंधित है। अल्लाह तुझे उन लोगों से मिलने से नहीं रोकता है जो धर्म के कारण तुझसे लड़ाई नहीं करते हैं और तुझे घर से नहीं निकालते हैं। अल्लाह

उनके प्रति तुझे सच्चा होने और न्यायपूर्ण व्यवहार करने से नहीं रोकता है। वास्तव में अल्लाह न्यायपूर्ण कार्य करने वाले को प्यार करता है।'' (अध्याय 60 अल मुमताहानाः 8)।

लोगों और नेतृत्वकर्ताओं को अधिक सहनशील बनाना

परिचयकर्ता 3ः प्रो. डॉ. पॉल एम. जुलेनर, 1992 से चेयर ऑफ पैस्टोरल थियोलॉजी, वियना, ऑस्ट्रिया

मैंने यूरोपियन मूल्य व्यवस्था के अध्ययन में हिस्सा लिया। हमने देखा कि अधिकांश यूरोपी सहनशीलता का बहुत सम्मान करते हैं। लेकिन यदि हम लोगों से सहनशील रहने और कार्य करने के लिए कहें, तो आंकड़े बहुत कम हो जाते हैं। इसलिए यह प्रश्न उठता है कि ''यूरोप के लाग उतना सहनशील क्यों नहीं हो सकते, जितना वो चाहते हैं?'' इस सभा का यह पहला प्रश्न होना चाहिए। ''आप लोगों और अधिक नेतृत्वकर्ताओं को अधिक सहनशील कैसे बना सकते हैं?'' मेरे विचार से यह इस सभा का सर्वाधिक राजनैतिक प्रश्न है। मैं इस संबंध में अपनी स्थिति विस्तार से बताएंगा। यदि आप सभी धर्मों की पवित्र किताबें पढ़ें, जो यहां प्रदर्शित की गई हैं, तो आपको कई लेख ऐसे मिलेंगे जो प्रदर्शित करते हैं कि अधिकांश धर्म शांति, न्याय, दया और उदारता की शिक्षा देते हैं। मेरे ख्याल से सभी धर्मों की ये प्रमुख सकारात्मक विशेषताएं हैं। धर्मों के महत्वपूर्ण प्रतिनिधि कभी भी युद्ध को बढ़ावा नहीं देते हैं। वो शांति का समर्थन करते हैं। उदाहरण के लिए फ्रांसिस ऑफ असीसी, या गांधी, सूफी या बौद्ध परंपरा से कई और यीशु ने भी अपने उपदेशों में शांति की शिक्षा दी है। तब प्रश्न यह उठता है कि किसी धर्म के कुछ लोग हिंसा और अन्य लोग शांति का समर्थन क्यों करते हैं? इसका उत्तर विश्वास में नहीं, बल्कि लोगों के व्यक्तित्व में छिपा है। मैंने एक सर्वे किया और यूरोप में अधिनायकवाद का विश्लेषण किया। एक जर्मन समाजशास्त्री थियोडोर डब्लू. अडोर्नो ने एक सिद्धांत दिया। उसने पूछा कि पिछली सदी में इतने सारे लोगों ने यूरोप में अधिनायकवादी व्यवस्था का समर्थन क्यों किया। उसने पाया कि उन्होंने एक सहज विचार के साथ प्रभुत्व स्वीकार कर लिया कि ''जो सबसे ऊपर है, उसे सही होना चाहिए''। जब उनका परीक्षण किया गया, तो उन्होंने यह कहकर अपना बचाव किया, ''हम केवल अपना कर्तव्य निभा रहे थे''। मेरे खुद के सर्वे के अनुसार अधिनायकवादी व्यक्तित्व कमजोर और चिंतित होता है। इसके अलावा चूंकि यह कमजोर होता है, इसलिए यह दूसरे लोगों के प्रति काफी हिंसक होता है। दूसरों के प्रति हिंसा का असली कारण अंदर की यह कमजोरी है। और एक अधिनायकवादी व्यक्तित्व बहुलतावाद को स्वीकार नहीं कर सकता है। उनमें क्षमता नहीं होती है, जैसा हम जर्मन में कहते हैं, ''बहुलतावाद के लिए सहनशीलता''। 'अन्य लोग' यहूदी, या मुसलमान, या महिला भी, या रोम या विदेशी हो सकते हैं। अन्य लोग हमेशा खतरे के रूप में देखे जाते हैं। अन्य लोग दुश्मन के रूप में देखे जाते हैं। इसलिए अधिनायकवादी व्यक्ति विभिन्न तरह की हिंसा के द्वारा दूसरों को दबाने की कोशिश करता है, जैसे मध्ययुग में दांव पर, आज 'मीडिया के दांव' पर, आतंकवाद या युद्ध के द्वारा। इसलिए जो कोई भी धार्मिक हिंसा से बचना चाहता है और सच्ची, शांतिपूर्ण, सृजनात्मक चर्चा करना चाहता है, उसे अधिनायकवाद की प्रवृत्ति को कम करना होगा और अपना व्यक्तित्व बदलना होगा। अब आप पूछेंगे कि इसके साधन क्या हैं? आपमें से कुछ ने कहा, शिक्षा, जानकारी एवं वैश्विक नैतिकता। मैं नैतिक अनिवार्यता में पूरा विश्वास नहीं करता। क्योंकि जो लोग चिंतित हैं, और

अधिनायकवादी हैं, उनके लिए नैतिकता पर्याप्त नहीं है एवं यह स्वयं में एक तरह की चिंता है। आप एक चिंतित व्यक्ति से यह नहीं कह सकते कि, ''चिंता न करो''। तो आपके पास अन्य साधन क्या हैं। मेरे ख्याल से आपको ऐसे लोगों का उपचार करना होगा। लेकिन उपचार के साधन क्या हैं? मेरी कैथोलिक परंपरा में सालों से यह संदेश रहस्यपूर्ण से बदलकर नैतिक हो गया है। धर्म चिंतित लोगों का उपचार कैसे कर सकते हैं? जब लोगों का उपचार होता है, वो सहनशील होते हैं और सुदृढ़ बनते हैं। मैं आपको यह नहीं बता रहा कि उपचार के बारे में मेरा क्या विचार है, लेकिन मैं आपको यह मुख्य प्रश्न दे रहा हूं, क्योंकि मेरे सामने दिए गए भाषणों में किसी ने भी चिंता के विषय में एक शब्द भी नहीं बोला। हम हमेशा सत्ता और नैतिकता की बात कर रहे हैं, लेकिन आपको आधुनिक समाज एवं लोगों में चिंता के परिणामों के बारे में भी सोचना होगा। मैं अपने साथी डॉ. शेलेनसोग के महत्वपूर्ण भाषण पर एक छोटी सी टिप्पणी करना चाहता हूं। हंस कुंग ने स्वर्णिम नियम के आधार पर विश्व की नैतिकता के विचार को बढ़ावा दिया। लेकिन मुझे पूरा विश्वास नहीं कि इसकी कोई अन्य विधि इससे अधिक उपयोगी साबित नहीं होगी। मैंने यह वैकल्पिक विधि अपने शिक्षक जोहान बाप्टिस्ट मेट्ज़ से सीखी। वो 1994 में जासिर अराफात और यिजाक रैबिन का एक कथन याद करते हैं, जब उन्होंने मशहूर शांति समझौता किया था। उन्होंने वायदा किया था, ''भविष्य में हम हमेशा दूसरों– विरोधी पक्ष की पीड़ा याद करेंगे। दूसरों की पीड़ा को याद करना। इसलिए विश्व के लोकाचार के लिए मेट्ज़ का स्रोत एक स्वर्णिम नियम नहीं है, बल्कि यह उन लोगों का अधिकार है, जो पीड़ित होते हैं। हर नीति का असली लक्ष्य दूसरों की पीड़ा को रोकना है। इस दृष्टिकोण की पूर्व शर्त विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के केंद्र में पाई जा सकती है। यह दया या करुणा है। करुणा अल्लाह का गुण है, जो सबसे अधिक दयालु है। हर विश्वास अल्लाह के नाम के साथ शुरु होता है, यहूदी परंपरा में येहोवा के दिल में करुणा है। एवं यीशु एक दयालु ईश्वर है। अंत में तीन बुद्ध में से एक सुरक्षा के लिए है, दूसरा ज्ञान के लिए है, एवं तीसरा करुणा के लिए है। दलाई लामा करुणा वाले बुद्ध का अवतार हैं। करुणा के आधार पर विश्व के प्रमुख धर्म एक न्यायपूर्ण और शांतिपूर्ण विश्व के लिए सहयोग कर सकेंगे। मैं इसका समर्थन करता हूं, क्योंकि मेरा मानना है कि धर्म में उपचार करने की शक्ति है। सभी धर्मों का यही लक्ष्य है।

महामहिम यासुओ फुकुदा, भूतपूर्व प्रधानमंत्री, जापान के द्वारा पेश किए गए सहनशीलता और समझ के पेपर

यह विशेष सभा चांसलर हेल्मुट श्मिड्ट की इच्छा को पूरा करने के लिए बुलाई गई। वो मेरे स्वर्गवासी पिता के सबसे बहुमूल्य दोस्त थे। जर्मनी एवं जापान में इन सालों में काफी समानता रही। द्वितीय विश्वयुद्ध में दोनों ही देश हार गए थे एवं दोनों ही युद्ध के धुंऐ से अद्भुत रूप से दोबारा विकसित होकर खड़े हो गए। शायद इसी संबंध के कारण मेरे पिता चांसलर से इतनी नजदीकी से जुड़े थे। यहां मौजूद आपमें से कई लोगों की तरह ही मैंने भी चांसलर श्मिड्ट से बहुत कुछ सीखा। हमें यह स्वीकार करना होगा कि उनके द्वारा इस तरह की सभा बुलाया जाना उनकी दूरदर्शी योग्यता को प्रमाणित करता है। हम सभी जानते हैं कि यह सभा बिल्कुल सही समय पर आयोजित की गई है। चांसलर श्मिड्ट से मैंने जो महत्वपूर्ण

शिक्षा ली है, वो कान्तियन का निम्नलिखित संदेश हैः शांति सहज मानवीय वृत्ति के साथ स्थापित नहीं की जा सकती है, बल्कि इस पर एक बार नहीं बल्कि निरंतर मनुष्यों की इच्छाशक्ति और निष्ठा के साथ काम करना होगा। 19 वीं सदी के जर्मन राजनीतिज्ञ ओट्टो बिस्मार्क ने कहा था, ''मूर्ख अनुभव से सीखते हैं और बुद्धिमान इतिहास से।'' मेरा मानना है कि यह हमारे लिए आवश्यक है, 21 वीं सदी में रहते हुए अपने प्रयासों को दोहराना और यह विचार करना कि हम इतिहास से क्या सीख सकते हैं। मेरे जैसे लोगों की संख्या लगातार घटती जा रही है, जिन्होंने द्वितीय विश्वयुद्ध का समय देखा है। आज की मानवता युद्ध के बाद पैदा हुई। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद घटित हुई घटनाओं में दो बड़ी घटनाओं ने हमें सार्वभौम नीतियों पर विचार करने के लिए प्रेरित किया, जो इस सभा का भी मुख्य विषय हैं। इनमें से एक घटना थी 1989 का शीतयुद्ध और दूसरी घटना थी 9.11 की त्रासदी। 1989 में अमेरिकन इतिहासकार, फ्रांसिस फुकुयामा ने मशहूर ''इतिहास का अंत'' (एंड ऑफ हिस्ट्री) लिखी। उन्होंने तर्क दिया कि शीत युद्ध का अंत मानवीय विचारधारा का अंतिम बिंदु था और पाश्चात्य उदारीकरण एवं प्रजातंत्र राजनीति का सार्वभौम रूप बन जाएगा। 1993 में प्रोफेसर सैम्युअल हंटिंग्टन ने अपने ''सभ्यताओं के टकराव'' (क्लैश ऑफ सिविलाईजेशंस) में इस सिद्धांत का विरोधी तर्क दिया। उन्होंने तर्क दिया कि यद्यपि देश अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में सबसे मजबूत कारक बने रहेंगे, लेकिन वैश्विक स्तर पर बड़े टकराव विभिन्न सभ्यताओं और समूहों के बीच होंगे; सभ्यताओं का टकराव वैश्विक राजनीति पर हावी हो जाएगा एवं सभ्यताओं के बीच टकराव की रेखाएं भविष्य में युद्ध की रेखाओं में तब्दील हो जाएंगी। इन चर्चाओं ने ईरान के राष्ट्रपति खातमी को 1998 में यूएन की आमसभा में 'सभ्यताओं के टकराव' को रोकने के लिए 'सभ्यताओं के बीच चर्चा' का प्रस्ताव रखने के लिए प्रेरित किया। यूएन की आमसभा में वर्ष 2001 को 'चर्चा का वर्ष' घोषित करने के लिए एक संकल्पपत्र पारित हुआ। यह इतना हास्यास्पद साबित हुआ कि चर्चा के उसी वर्ष 9.11 की घटना हुई। जिस समय आतंकवादियों के द्वारा हाईजैक किया गया एयरप्लेन न्यूयार्क में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर से टकराया, उसी समय 'सभ्यताओं की चर्चा का वर्ष' समाप्त हो गया। आप में से अधिकांश लोग मेरी इस बात से सहमत होंगे कि सभ्यताओं के बीच चर्चा का महत्व आज भी बढ़ रहा है। इस नई सदी में कई अंतर्राष्ट्रीय तनाव और टकराव हैं, एवं विश्व की शांति और स्थिरता अनिश्चित है। आर्थिक वैश्वीकरण बढ़ने के साथ संपन्नता भी बढ़ रही है, लेकिन इससे केवल कुछ ही लोग लाभान्वित हो पा रहे हैं। विश्व में यह अंतर, असमानता, गरीबी और दुख केवल बढ़ रहा है। यह साफ है कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय उदारवादी प्रजातंत्र के झंडे के नीचे नहीं आ रहा है, जैसा फ्रांसिस फुकुयामा ने अनुमान लगाया था। लेकिन सैम्युअल हंटिंगटन के द्वारा बताई गई ''सभ्यताओं के द्वारा टकराव की रेखाएं'' भी उतनी प्रमाणित नहीं हैं। देश लोगों को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। लेकिन ऐसे समूह, जैसे एनजीओ, जिनकी संस्कृति, जाति, धर्म, स्थानीय समुदाय या सिद्धांत और उद्देश्य एक से हों, वो अधिक गतिशील होती हैं और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक बड़ी भूमिका निभाती हैं। इसके अलावा इन्फॉर्मेशन तकनीक में तेज प्रगति के साथ देश की सीमाओं से आगे बढ़ने वाले व्यक्तिगत संपर्क तेजी से बढ़ रहे हैं। संक्षेप में विश्व फ्रांसिस फुकुशिमा या सैम्युअल हंटिंगटन के अनुमान के मुकाबले अधिक जटिल और परिवर्तनशील हो रहा है। दुर्भाग्य से वर्ष 2001 में 'सभ्यताओं की चर्चा के वर्ष' के बाद इस महत्वपूर्ण विषय में अंतर्राष्ट्रीय बहस गहरी नहीं हुईं। हाल ही में विश्व के कई नेतृत्वकर्ता

अपनी योग्यता और ऊर्जा इस पर लगा रहे हैं कि जारी टकरावों का सामना कैसे किया जाए एवं तत्कालिक आर्थिक संकट को कैसे दूर किया जाए या उनका राष्ट्रीय प्रभुत्व कैसे बढ़ाया जाए। इसके अलावा सूचना तकनीक में तीव्र वृद्धि के चलते लोगों को अत्यधिक जानकारी आसानी से उपलब्ध होने के कारण वर्तमान नेतृत्वकर्ता इस चिंता में फंस गए हैं, कि लोगों को खुश करके उनका समर्थन कैसे हासिल किया जाए। इस तरह की स्थिति में राजनैतिक और बौद्धिक नेतृत्वकर्ता सभ्यताओं के बीच वैश्विक नैतिकता और चर्चाओं की जरूरत पर्याप्त वजन देने में असमर्थ हैं। विश्व के प्रमुख धर्मों के कई नेता और विचारक इस सभा में हिस्सा ले रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय उलझन में है, एवं विश्व की नैतिक व्यवस्था बदल रही है, विभाजित हो रही है एवं विस्तृत हो रही है। इस स्थिति में धर्म क्या प्रदान कर सकते हैं? इस सभा का एक मुख्य विषय यह भी है। 9.11 की त्रासदी ने धार्मिक और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के प्रश्न खड़े कर दिए। अलकायदा के द्वारा किए गए विभिन्न हमलों ने इस्लाम को विश्व की निंदा का पात्र बना दिया। इस तरह की दुविधा में कुछ लोग तर्क देंगे कि दुनिया में व्याप्त एकेश्वरवाद की दुनिया, न केवल इस्लाम बल्कि ईसाई एवं यहूदी धर्म भी या एकेश्वरवादी मूल्य व्यवस्था 'सभ्यताओं के टकराव' या 'सभ्यताओं के विभाजन' का एक कारण है। मैं यहां यह प्रश्न पूछना चाहता हूं कि इस तरह के तर्कों में क्या कोई सच्चाई है, या वो पूरी तरह से निरर्थक हैं? यह प्रश्न दूसरी तरह से रखा जा सकता है, क्या एशिया के बहुदेववादी समाज एवं उनकी बहुलतावादी मूल्य व्यवस्थाएं और नैतिक स्तर एकेश्वरवादी दुनिया को विशेष संकेत दे सकते हैं? इस प्रश्न के लिए मेरा उत्तर आधा 'हां' और आधा 'ना' है। मैं कुछ समय के लिए बहुदेववादी विचार पर केंद्रित होता हूं, क्योंकि जापान एक बहुदेववादी देश है। कई जापानी बौद्ध धर्म में विश्वास करते हैं, जबकि उनका स्वदेशी शिंतो धर्म और एनिमिस्टिक प्रवृत्ति भी उन लोगों में गहराई तक समाई है। वो मानते हैं कि आत्मा और जीवन न केवल जीवित प्राणियों में बल्कि निर्जीव वस्तुओं जैसे पत्थर और झरनों में भी पाए जाते हैं। ये अलग अलग विश्वास– बौद्ध धर्म, शिंतो धर्म और एनिमिज़्म जापानी व्यक्तियों की आत्मा में सामंजस्य के साथ समाहित हो गए हैं। कई लोग 1 जनवरी को शिंतो मठ जाते हैं, क्रिसमस मनाते हैं, ईसाई गिरिजाघर में विवाह करते हैं और बौद्ध मंदिर में अंत्येष्टि क्रिया करते हैं। वो ये सब काम मन में किसी भी विरोधी भाव के बिना करते हैं। लेकिन जापानियों में धार्मिक भावनाओं की कमी नहीं है। हममें से अधिकांश लोग दृढ़ता से महसूस करते हैं कि मानव मस्तिष्क और अनुभव से परे एक दिव्य आत्मा भी है। इस दिव्य आत्मा को भगवान कहा जाए, बुद्ध या ईश्वर, हम महसूस करते हैं कि उस आत्मा में विश्वास करने के कई मार्ग हैं। एकेश्वरवादियों को इस तरह की अस्पष्टता न तो समझ में आती है और न ही स्वीकार्य है। लेकिन इस धार्मिक दृष्टिकोण वाले समाज का भी एक सकारात्मक गुण है। वो यह है कि हम विरोध किए बिना दूसरी मूल्य व्यवस्थाएं एवं मतों को स्वीकार कर सकते हैं। हम अन्य लोगों के साथ समान नैतिक मापदंड बांट सकते हैं। यहां पर मुख्य बात है अन्य लोगों के प्रति 'सहनशीलता की भावना'। सहनशीलता इस बात की शुरुआत हो सकती है, जो हम यहां इस सभा में परिभाषित करने की कोशिश कर रहे हैं। हालांकि सच्ची सहनशीलता केवल अलग पृष्ठभूमि एवं विश्वास वाले अन्य लोगों को समझने के साथ ही बढ़ सकती है। 'निर्णय लेने में वैश्विक नैतिकता' के लिए हमें इस पर गंभीर विचार करने की जरूरत होगी कि वैश्विक स्तर पर नैतिकता के सर्वाधिक समान भाजक का सर्वश्रेष्ठ प्रयोग कैसे किया जाए। मैं अपने स्वयं के

सुझावों की सलाह दूंगा। सबसे पहला 'करुणा' है। 1977 में मेरे पिता ने दक्षिणपूर्व एशिया की अपनी यात्रा के दौरान ''फुकुडा सिद्धांत'' की घोषणा की। इस सिद्धांत का केंद्र था, ''दिल से दिल'' तक आपसी विश्वासपूर्ण संबंधों के निर्माण की प्रतिबद्धता। 1970 के मध्य में दक्षिणपूर्व देशों में अक्सर जापान के खिलाफ शत्रुतापूर्ण विरोध और दंगे हुए, क्योंकि जापान ने इस क्षेत्र में काफी तीव्रता से आर्थिक विकास किया। ''दिल से दिल'' सिद्धांत हर किसी को समझने में बहुत आसान था एवं इसने तत्काल दक्षिण एशियाई लोगों का दिल जीत लिया। ''दिल से दिल'' का अर्थ है करुणा, या अन्य लोगों का कल्याण करने की इच्छा। दूसरी है, अन्य लोगों के प्रति 'सांस्कृतिक भावनाशीलता'। हम अपनी अपनी संस्कृतियों के परिणाम हैं। जब हम अलग पृष्ठभूमि से आए लोगों के साथ व्यवहार करते हैं, तब हम उन्हें अपनी आंखों पर अपने नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का चश्मा चढ़ाकर देखते हैं। हमें समझना चाहिए कि जब हम खुद से अलग लोगों से घ्रणा करते हैं या उनकी निंदा करते हैं, तो वो हमारा की विकृत रूप होता है, जो हमारे सामने प्रतिबिंबित होता है और जिससे हम घ्रणा करते हैं। हमसे अलग लोगों को भावनाशीलता के साथ समझने की कोशिश करना एक बहुत ही महत्वपूर्ण गुण है, जो हम यहां हासिल करने की कोशिश कर रहे हैं। तीसरा है, साझेदारों के साथ ''विश्वास का निर्माण''। यहां मौजूद सभी राजनैतिक नेता जानते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय वार्ता में उन्हें जोखिम लेना पड़ता है। वार्ता में कितना जोखिम लिया जा सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वो अपनी वार्ता के साझेदार के साथ कितना विश्वास निर्मित कर पाते हैं। यहां हमारी चर्चाओं का मौलिक आधार हम सभी के बीच विश्वास का निर्माण करना है। मुझे विश्वास है कि इस दृष्टि से यह सभा 21 वीं सदी के अंतर्राष्ट्रीय समुदाय हो बहुत महत्वपूर्ण संदेश दे सकती है। दूसरे विश्वयुद्ध में जापान हार गया था। हमें 1951 में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में वापस आने की इजाजत मिली। जापान के नागरिक उस समय भी युद्ध के विनाश से पीड़ित थे, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय समुदाय आक्रमणकर्ता और हारे हुए देश के प्रति काफी कठोर और ठंडा था। उन्हें लगता था कि जापान को इतना कठोर दंड मिलना चाहिए कि वो आगे कभी भी सिर न उठा सके। इस कठोरता के विरुद्ध उस समय श्री लंका के वित्तमंत्री, जो बाद में वहां के राष्ट्रपति बने, ने बुद्ध की शिक्षा का उल्लेख करके अपनी सोच बदलीः ''नफरत को नफरत से ठीक नहीं किया जा सकता। वापस नफरत न करने से हमारे दिल में शांति स्थापित हो सकती है। यह सार्वभौम सत्य है।''

सहनशीलताः हमारे सांप्रदायिक युग में अपेक्षा से कम सराहा गया गुण
प्रो. थॉमस एस. एक्सवर्थी, मुख्य सचिव, इंटरएक्शन काउंसिल

हम सांप्रदायिक युग में रहते हैं। किसी धर्म, संप्रदाय या समूह के सिद्धांतों के प्रति अत्यधिक निष्ठा हमारे समय का गुण है और इससे देशों के अंदर और बाहर शांति एवं व्यवस्था को खतरा हो जाता है। सुर्खियों पर सरसरी नजर डालने से भी यह बात साफ हो जाती हैः म्यनमार में कुल्हाड़ी लिए बौद्ध भीड़ ने मुस्लिमों को खदेड़ा, 40 से अधिक की हत्या की और लगभग 13,000 मुसलमानों को उनके घरों एवं कारोबार से बाहर निकाला। उत्तर नाईजीरिया में एक इस्लामी संप्रदाय बोको हरम (अनुवादः ''पश्चिमी शिक्षा प्रतिबंधित है'') ने लगभग हर सप्ताह ईसाई गिरिजाघरों में बम रखे, जिससे अकेले 2012 में 900 मौतें हुईं। लीबिया में

मेमोरियल क्रॉस उग्रवादी भीड़ को इतने नापसंद आए कि उन्होंने कॉमनवेल्थ सैन्य कब्रिस्तानों को अपवित्र कर दिया। ईराक में, प्रमुख विश्लेषक कानन माकिया, जिन्होंने सद्दाम हुसैन के तख्तापलट में अमेरिका का पक्ष लिया था, ने घोषणा की कि ''अरब का बसंत अब अरब की सर्दियों में बदल रहा है।'' जब श्री हुसैन कमजोर थे, तब उन्होंने संप्रदायवाद और राष्ट्रवाद को अपने आंतरिक शत्रुओं के खिलाफ हथियार के तौर पर प्रयोग किया था। आज ईराक की शाईत पार्टियां उससे भी बुरा कर रही हैंः वो संप्रदाय के आधार पर अपनी सत्ता को वैध बना रही हैं।'' यह लड़ाई केवल मुस्लिम बनाम ईसाई या शिया बनाम सुन्नी की नहीं हैः इस्लामी आंदोलनों में भी विभाजन बड़े स्तर पर हुआ है। मिस्र में मुबारक की सत्ता समाप्त होने के बाद सालाफिस्त अभियान ने अपने साथी सुन्नी मुसलमानों को सशस्त्र बलों की सर्वोच्च परिषद में धर्मत्यागी के रूप में बिठा दिया। सालाफिस्त अल–नूर पार्टी के सदस्यों ने राष्ट्रपति मुरसी मुस्लिम ब्रदरहुड सरकार से इस्तीफा दे दिया एवं जुलाई 2013 में उनके निष्कासन का समर्थन किया। मिस्र में धर्मनिरपेक्ष सोच वाले मिस्रवासियों और इस्लाम के समर्थकों के बीच बड़ी दरार है। लेकिन इस्लामी आंदोलन में मतदान नहीं हुआ करता है। संप्रदायवाद के सभी वर्तमान पहलुओं के पूर्ववर्ती यूरोपियन इतिहास में थे। जैसा आज नाईजीरिया या म्यनमार में, जागरणपूर्व स्पेन में भीड़ ने बार बार दूसरे मतों के लोगों पर हमला किया। (1391 में एक भारी तबाही में लगभग एक तिहाई यहूदियों की हत्या कर दी गई।) आज के सीरिया की तरह 15 वीं और 16 वीं सदी में शासक संप्रदायवाद का दांव खेला करते थेः उदाहरण के लिए स्पेन के राजा फर्डीनांड एवं रानी इसाबेला ने विशाल स्तर पर नैतिक पवित्रीकरण किया था और 1492 में 70,000 से 100,000 यहूदियों का और 1609 में लगभग 300,000 मोरिस्को (स्पेनिश मुसलमानों) का जबर्दस्ती धर्मपरिवर्तन एवं निष्कासन किया था। आज लिबिया में कब्रस्थलों का पवित्रीकरण हो रहा है, लेकिन इससे भी ज्यादा मूर्खतापूर्ण विनाश सुधार के काल में हुआ। उदाहरण के लिए साईमन स्कामा ने टीवी सीरीज़ ब्रिटेन के इतिहास में पूछा, ''कैथोलिक इंग्लैंड में क्या हुआ था?'' और फिर उन्होंने बताया कि प्रोटेस्टेंट उग्रवादियों ने किस प्रकार कांच की खिड़कियों, वेदी, प्रतिमाओं और भोज की टेबलों तक को नष्ट कर दिया था। एक नैतिकतावादी संसद ने 1647 में क्रिसमस मनाने के खिलाफ तक कानून बना डाला। शिया और सुन्नी के बीच हिंसा? 1572 में सेंट बार्थोलोम्यू डे के हत्याकांड में कैथोलिक भीड़ के द्वारा 5000 ह्यूगेनॉट्स मारे गए, उनके अंग काटे गए और अपमानित किए गए। बेंजामिन ने इसे ''शुरुआती आधुनिक युग की सबसे अधिक कुख्यात् घटना'' बताया है। सुन्नी सालाफिस्त बनाम सुन्नी मुस्लिम भाईचारा? अंग्रेजों के धर्मयुद्ध ने इंग्लैंड में चर्च के अनुयायियों को नैतिकतावादी विरोधियों के खिलाफ खड़ा कर दिया। प्रोटेस्टेंट संप्रदाय दूसरे प्रोटेस्टेंट्स के खिलाफ धर्म में उतने ही अंधे थे, जितने वो रोमन कैथोलिक के खिलाफ थे। 1648 में, इंग्लिश संसद ने प्रेस्बिटेरियन बहुमत के साथ ''निंदात्मक पाखंडों को दंडित करने का अध्यादेश'' जारी किया और 1662 तक 4000 क्वेकर्स (शांति प्रचारक मंडली के सदस्य) जेल में पहुंच गए। इन घटनाओं के बारे में लिखते हुए इतिहासकार सी. वी. वेज़वुड टार्टली ने क्वेकर्स को दंड देने के विषय में लिखा कि, ''अहिंसक पंथ ने हमेशा हिंसक को हताश किया है।'' लेकिन यदि यूरोप ने 16 वीं और 17 वीं सदी में धार्मिक भेदभाव, असहनशीलता और हिंसा आज से भी ज्यादा प्रदर्शित की थी, तो वहां साहस, सद्भाव और प्रेम के व्यक्तिगत प्रयास भी देखे गए और धीरे धीरे सहनशीलता का विकास हुआ। यूरोप के संप्रदायवादी युग के बाद ज्ञान का युग

आया और ज्ञान का एक स्तंभ सहनशीलता का गुण था, जिससे कभी घ्रणा की जाती थी। धार्मिक सहनशीलता को स्वीकार करना, जर्गन हेबरमस के अनुसार, आम तौर पर 'सांस्कृतिक अधिकारों का पेसमेकर' बन गया। एन्ड्रयू मर्फी ने सहनशीलता को ''विरोधाभासी दृष्टिकोणों की संभावित वैधता को स्वीकार करने की इच्छा'' या सोच के रूप में परिभाषित किया है। यह पहचान पर आधारित गुण है, जैसा वोल्टेयर ने अपने दार्शनिक शब्दकोष में लिखा है कि ''विसंगति मनुष्यों की बड़ी बुराई है और सहनशीलता ही इसका एकमात्र इलाज है।'' जे न्यूमैन के लिए ''सहनशीलता तब दिखती है, जब व्यक्ति सहनशील होता है; सहन करना तब दिखता है, जब व्यक्ति सहन करता है।'' सहनशीलता अभ्यासों का एक सेट हैः यह प्रदर्शित करता है ''प्रचलित नियमों से मतभेद होने के लिए दंडात्मक प्रतिबंध लगाने में संयम।'' सहनशीलता अभ्यासों या व्यवस्थाओं का वह समूह है, जो शांतिपूर्ण सहअस्तित्व संभव बनाता है, यह सिद्धांत इस व्यवस्था में शामिल लोगों के दृष्टिकोण या प्रेरणा से विश्लेषणात्मक रूप से अलग है। यह अंतर महत्वपूर्ण हैः सहनशीलता विनम्रता में निहित व्यक्तिगत दृष्टिकोण है (हम सभी गलती करते हैं)। इसके विपरीत कट्टरता है, जिसका वर्णन जॉन मोरले ने परेशान करने वाले पक्षपातों के रूप में किया है, जो कोई समझौता नहीं करते हैं। इसलिए व्यक्तिगत सहनशीलता की कई बाधाएं– अज्ञान, अंधविश्वास, गलतफहमी, आलस और श्रेष्ठता हैं। असहनशीलता चुटकुलों में, नाम बिगाड़ने, गालियां देने, भेदभाव और हिंसा में प्रदर्शित हो सकती है। उदाहरण के लिए स्कॉटलैंड ने हाल ही में कैथोलिक–प्रोटेस्टेंट के विरोध को संबोधित करने के लिए एक संप्रदायवादी सलाहकार समूह निर्मित किया। यदि सहनशीलता एक व्यक्तिगत गुण या दृष्टिकोण है, जो शिक्षा, व्यक्तिगत इच्छा एवं पारस्परिक शिक्षा पर आधारित है, तो सहनशक्ति उन अभ्यासों का समूह है, जो अन्य लोगों के आचरण में स्वेच्छा से कोई हस्तक्षेप नहीं करती है। जैसे जैसे यूरोप धर्मयुद्ध से ज्ञान की ओर बढ़ा, विविध तरह के अभ्यासों एवं क्रियाओं ने वैधानिक रूप से स्थापित गिरिजाघरों या सामाजिक प्रभुत्ववादी मतों से असहमति की अनुमति दी। लेकिन सहनशीलता की धीरे धीरे विकसित होती हुई व्यवस्थाओं का अर्थ व्यक्तिगत सहनशीलता में बड़ी प्रगति नहीं थी। वेजवुड लिखते हैं कि सत्रहवीं सदी में यूरोपियन नेतृत्वकर्ता भी ईसाई धर्म की विभिन्न विधाओं की वास्तविकताओं को स्वीकार करने के लिए बाध्य थे, लेकिन सभी का लक्ष्य एक सार्वभौम चर्च (उनका खुद का) था एवं सहनशीलता अभी भी ''नरम पुरुषों के द्वारा भी निराशा'' से देखी जाती थी। इसलिए सहनशीलता की व्यवस्था शांतिपूर्ण सहअस्तित्व हासिल करने का व्यवहारिक साधन है, जिसका सहनशीलता के विकास से ज्यादा लेना देना नहीं है। संप्रदायवाद से लड़ने के लिए व्यक्ति को व्यक्तिगत दृष्टिकोण बदलने एवं संस्थागत कार्य करने के लिए एक कार्यक्रम की जरूरत होती है।

चर्चा

चेयरमैन ओबासांजोः शब्दों के बदलते अर्थ एवं आज जो शब्द सम्मानजनक हैं, हो सकता है कि कल वो सम्मानजनक न हों। और आज जो उतना सम्मानजनक नहीं है, कल सम्मानजनक बन सकता है। और हममें से प्रत्येक, चाहे हमारी स्थिति कोई भी हो या हमारा धर्म कोई भी हो, हम सभी को विशेष सुविधाएं हैं और हम पर उन सुविधाओं का भार है। जेरेमी रोसेन ने हमारे सामने कुछ बिंदु रखे। और उन्होंने इस बात के साथ अंत किया कि आम मानवता हमें सहनशील होने का आदेश देती है। अब प्रश्न यह है कि इस आम मानवता

को हमें सहनशील बनने का आदेश देने के लिए कौन से कारक प्रेरित करते हैं। हमने राजनैतिक एवं आर्थिक कारकों की चर्चा की और हमें अपनी आम मानवता में उन कारकों को समाहित करना होगा। मेरे अपने देश में हम बोको हरम की बात करते हैं, जैसे मुसलमान एवं ईसाई एक दूसरे के खिलाफ जंग छेड़ रहे हों। लेकिन यह सच्चाई नहीं है। लगभग तीन साल पहले मैं अपने देश के उत्तरपूर्व में बोको हरम के केंद्र में गया और मैं जानना चाहता था कि क्या कोई बोको हरम नामक संस्थान है। यदि है, तो वो कौन हैं? क्या उनके पास नेतृत्वकर्ता है? यदि उनके पास नेतृत्वकर्ता हैं, तो वो कौन हैं? क्या वो बात करने के लिए तैयार हैं? उनके लक्ष्य क्या हैं? उनकी पीड़ाएं क्या हैं? क्या कोई बाहरी तत्व भी शामिल है? यदि है, तो किस हद तक? मैंने पाया कि वो लोग मौलिक रूप से बुरे लोग नहीं हैं। उनकी बुराई गरीबी और बेरोजगारी है एवं कई अन्य चीजों ने स्थिति बिगाड़ दी है, जिनमें नशीले पदार्थों की तस्करी, बंदूक की तस्करी, बदला और थोड़ा सा कट्टरवाद शामिल है। इन सामाजिक बुराईयों के कारण, जब मैंने उनसे उनका लक्ष्य पूछा, तो उन्होंने ''शरिया'' कहा। वो आम मानवता समझते हैं। लेकिन आम मानवता एवं सहनशीलता की उनकी समझ को कई कारकों ने प्रभावित किया है।

श्रीश्री रवि शंकरः मैं वहीं से आगे कहूंगा, जो पॉल झुलेनर ने कहा। टकराव व्यक्ति की चिंता एवं नाखुशी के कारण पैदा होते हैं। एक प्रसन्न व्यक्ति किसी से भी कोई भी टकराव नहीं करता है। जब लोग दुखी और परेशान, तनाव में होते हैं, तब धर्म टकराव का एक बहाना बन जाता है, जिसके कारण वो लड़ाई शुरु करते हैं। एक स्वीकार न करने योग्य व्यवहार, मेरे ख्याल से, तनाव, चिंता, समग्रता की कमी, या अन्य सभी लोगों की समझ एवं चर्चा की कमी आदि विभिन्न समूहों और समाजों में टकराव के प्रमुख कारण हैं। यह समाज में दैनिक जीवन में व्यापक रूप से देखा जा सकता है। जिन स्थानों पर लोग प्रसन्न हैं, वहां सभी प्रसन्नता से रहते हैं। एवं धर्म, जाति, समुदाय या वंश बाधक नहीं बनते हैं।

डॉ. मुक्तिः मेरा मानना है कि इस जटिल एवं गतिमान विश्व में सहनशीलता पर्याप्त नहीं है, और हमें सहनशीलता से आगे बढ़कर सोचना होगा, क्योंकि कई बार सहनशीलता कई वास्तविक समस्याएं पैदा कर सकती है एवं कई बार उसे दूसरों का ज्ञान नहीं हो सकता है। इसलिए आज हमें बहुलतावाद की जरूरत है। मेरे विचार से बहुलतावाद में अन्य लोगों पर वैश्विक दृष्टि एवं सार्वजनिक क्षेत्र में धर्म की अभिव्यक्ति शामिल है। एवं कुछ हद तक हमें ऐसे लोग दिखेंगे, जो अवलोकनीय व्यवहार से असहनशील होंगे, बनिस्बत इसके कि आंतरिक दुनिया से इस अवलोकनीय व्यवहार को देखा जाए, जो किसी की वैश्विक दृष्टि से संबंधित है, जिसे हम ''लोगों का विश्वास'' कह सकते हैं। दूसरा, जब हम बहुलतावाद की बात करते हैं, तब चर्चा महत्वपूर्ण है। लेकिन जब हमें चर्चा को ऐसे कदम या चरण के रूप में देखते हैं, ताकि हम सहनशील और बहुलतावादी हो सकें, क्योंकि चर्चा में आपसी ध्यान दिया जाना, आपसी समझ और आपसी सम्मान शामिल है। लेकिन अन्य लोगों की स्वीकार्यता एवं दूसरों के प्रति उनकी सहजता भी उतनी ही जरूरी है, जो हमसे अलग हैं। कुछ हद तक उनका सहयोग और अन्य लोगों के साथ साझेदारी भी आवश्यक है। धर्मों के अंतर के बावजूद, कुछ समानताएं और कुछ आम बातें हैं, और अधिक शांतिपूर्ण एवं सहनशील समाज के विकास के लिए हमें इन आम बातों का लाभ उठाना होगा। कुछ हद तक सहनशीलता हमेशा आसान नहीं है, और बहुलतावाद हमेशा आसान नहीं है, क्योंकि ऐसे मूल्य भी हैं, जो इसमें बाधा डाल

सकते हैं। इस दृष्टि से मैं इस्लाम में अन्य के साथ मतभेदों के बावजूद एक और अच्छा उदाहरण देता हूं। पिछले साल मैं नीदरलैंड्स गया। मैं हेग में एक अंर्तमजहबी सम्मेलन में शामिल हुआ। वहां एक मुसलमान एवं यहूदी अपनी धार्मिक मान्यताओं कुरान और बाईबल के लिए मिलकर कड़ा संघर्ष कर रहे थे। इसलिए अंतरों के बावजूद हमारी आम बातों की समझ एवं साझा जिम्मेदारी की समझ के लिए एक सम्मान का भाव था। अभी भी इस बात की संभावना है कि अलग अलग मत एक दूसरे के साथ सहयोग कर सकते हैं, क्योंकि हम अन्य लोगों का सम्मान पूरी गरिमा और ईमानदारी के साथ करते हैं।

प्रो. चांगः हम सहनशीलता के गुण एवं सहनशीलता की कमी को इस बात से जोड़ सकते हैं कि हमारे समुदाय के नेतृत्वकर्ता किसी प्रकार की भूमिका निभाते हैं। मैं दो विशेष उदाहरणों के बारे में सोच रहा था, जिन्हें मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूं। उनमें से एक आप सभी जानते होंगे। सांस्कृतिक जागरण के दौरान चीन के लोग, जो आम तौर पर पड़ोसियों, अपने सहकर्मियों से बिना किसी धार्मिक अंतर के, बिना किसी जाति या भाषाई अंतर के काफी सामंजस्यपूर्ण संबंध रखते हैं, वो लोग एक दूसरे के विरोधी हो गए। उनके बीच का विश्वास टूट गया। उनके बीच इतना विष भर गया, जो समझना मुश्किल था। इसमें लाखों लोग शामिल हो गए। छोटे समुदायों में ऐसे नेता भी थे, जो इस घर पर हमला कर रहे थे। इसलिए मेरा मानना है कि हमें गहराई से सोचने की जरूरत है कि मानव प्रकृति क्या है, सैद्धांतिक या आम रूप में नेता की पुकार में क्या संबंध है एवं जमीनी स्तर पर लोगों का व्यवहार क्या है। दूसरा उदाहरण किर्गिस्तान का है। मैं दो बार किर्गिस्तान गया, एक बार चुनाव से पहले और फिर चुनाव के बाद। मैं खासकर ओश्ची शहर गया, जहां किर्गी और उज़्बेक एक ही देश में रहते हैं। उनके धार्मिक विश्वासों में भी अंतर नहीं किया जा सकता है। कुछ लोग सूफी पंथ मानते हैं एवं अन्य दूसरे प्रकार के हैं, लेकिन इसका जातीय अंतरों से कुछ लेना देना नहीं है। लेकिन हाल ही में चुनावों के दौरान घर जलाए गए, लोगों को मार दिया गया। इसका जातीय अंतर से कुछ लेना देना नहीं है– किर्गी भी देखकर किर्गी और उज़्बेक में कोई अंतर नहीं कर सकता है, हालांकि उनमें भाषाई अंतर है। इसलिए यह सब धर्म, या जाति, या नेतृत्वकर्ता के सिद्धांत से गहरी बात है। चूंकि यह सब अचानक एक निश्चित स्तर तक हुआ। इसलिए मुझे लगता है कि यह कोई धार्मिक अंतर नहीं था, बल्कि यहां नेतृत्व असफल हो गया।

डॉ. हबशः मेरा मानना है कि सहनशीलता बहुत ऊंचा मूल्य है। लेकिन मैं अपने देश में अपना अनुभव बताउंगा। वह यह है कि सहनशीलता अकेले पर्याप्त नहीं है। मेरा देश सीरिया है। एक मशहूर यूरोपियन दार्शनिक ने कहा था कि हर किसी के दो देश होते हैंः एक उसका खुद का और दूसरा सीरिया, क्योंकि सीरिया में पैगम्बरों का इतिहास है, यहां धर्मों का इतिहास है और यहां संस्कृतियों का इतिहास है। हम बहुत अच्छी स्थिति में थे। हर कोई जानता है कि सीरिया में मुस्लिम, ईसाई और यहूदी हैं एवं मुस्लिम समाज के अंदर कई समूह बिना किसी समस्या के रहते हैं। हम व्यापक एवं सामंजस्यपूर्ण स्थिति में थे। हमारी मुलाकातें रोज इस्लामी नेतृत्वकर्ताओं, ईसाई नेतृत्वकर्ताओं और यहूदी नेतृत्वकर्ताओं से हुईं। लेकिन इतना काफी नहीं था। प्रजातंत्र और स्वतंत्रता के बिना, गरिमा के बिना, बीच में विश्वास के बिना, संप्रदाय की समझ के बिना हम किसी भी सार्थक लक्ष्य तक नहीं पहुंच सकते। इसलिए मेरा मानना है कि यह केवल धार्मित नेतृत्वकर्ताओं की जिम्मेदारी ही नहीं है। यह राजनैतिक नेतृत्वकर्ताओं की

जिम्मेदारी है। राजनैतिक नेतृत्वकर्ताओं की जिम्मेदारी वही होती है, जो धार्मिक नेतृत्वकर्ताओं की। वो सहनशीलता और सामंजस्य का उपदेश देते हैं। जैसा राष्ट्रपति ओबासान्जो ने कहा, समस्या यह है कि मुसलमानों की कई सारी समस्याएं हैं। मेरा मानना है कि इस तरह की समस्याएं राजनैतिक नेतृत्वकर्ताओं और धार्मिक नेतृत्वकर्ताओं की जिम्मेदारी हैं। प्रजातंत्र के बिना, गरिमा के बिना, स्वतंत्रता के बिना, कभी भी और कहीं भी हम सीरिया की तरह ही नई क्रांति तलाश सकते हैं। चेयरमैन ओबासान्जोः आरिफ जमहरी ने जो कहा, मैंने उसपर विशेष ध्यान दिया। धर्म असफल हो रहा है। मैंने लोगों को कहते सुना है कि हममें अधिक धर्म है, लेकिन कम आध्यात्मिकता। और आध्यात्मिकता के बिना धर्म सहनशीलता हासिल नहीं कर सकता, जिसकी हम बात कर हरे हैं। नेतृत्वकर्ता कितने अनुकरणीय हैं, चाहे वो राजनैतिक नेतृत्वकर्ता हों या धार्मिक नेता? चाहे वो शिक्षक और उपदेशक हों? लेकिन उनके पास व्यवहार में दिखाने के लिए कोई उदाहरण नहीं है। हमने इस सत्र में कहा कि सहनशीलता अकेले पर्याप्त नहीं है, चाहे सहनशीलता स्वीकार्यता बन जाए और स्वीकार्यता प्रतिफल, यह तब भी पर्याप्त नहीं है। यहां पर एक स्थिति बदल रही है। सीरिया में नाटकीय परिवर्तन हुए हैं और केवल सीरिया में ही नहीं। तो हमारे पास जो कुछ भी है, उसे हल्के में नहीं लिया जा सकता। क्या मैं यह निष्कर्ष निकाल सकता हूं कि स्थिति कोई भी हो, चाहे आपमें सामंजस्य हो, सहनशीलता हो और वो सब हो, उन्हें प्रेम की भांति प्रसारित करना चाहिए, क्योंकि आप जब तक इसे प्रेम की भांति प्रसारित नहीं करेंगे, आप इसे हल्के में लेते रहेंगे। यह आज यहां हो सकता है, लेकिन कल वहां नहीं हो सकता। और मैं उन बिंदुओं की ओर इशारा करना चाहता हूं, जो हमने तीन प्रेज़ेंटेशन से लिए। मानवता एक समस्या है।

प्रो. एक्सवर्थीः हमने उस भाषा के बारे में सटीक रहते हुए चर्चा शुरु की, जो हम इन सिद्धांतों के लिए प्रयोग करते हैं। मेरे विचार से सहनशीलता की व्यवस्था जबरदस्ती थोपे जाने पर रोक का नाम है। व्यक्ति मजबूर नहीं करे। हम कम से कम यही हासिल करने की उम्मीद कर सकते हैं। और यह यूरोप में एक महत्वपूर्ण खेल था जिन पर हमारे पास कुछ प्रस्तुतियां हैं, जब लोगों ने कहना शुरु किया, ''हम जिएंगे और जीने देंगे''। वो ऐसी स्थितियां पैदा करना नहीं चाहते हैं, जो दूसरे लोगों, दूसरे धर्मों और दूसरे दृष्टिकोणों की हैं, लेकिन वो इसका पालन करना चाहते हैं और अपने लक्ष्य पाने के लिए हिंसा का सहारा लेना नहीं चाहते हैं। अब हमारे युग में यह अभी भी गैरजरूरी नहीं है। किसी ने कभी कहा था कि सहनशीलता मानव समाज में अन्य अधिकारों और विकासों के लिए पेसमेकर है। तो सुनिश्चित करने का प्रयास करें कि जब हम धार्मिक नेतृत्वकर्ताओं, शैक्षिक नेतृत्वकर्ताओं एवं राजनैतिक नेताओं को एकसाथ लेकर आएं, तो सहनशीलता एक व्यवहारिक लक्ष्य के रूप में हमारे साथ हो। डॉ. जुलेनर ने यह विषय उठाया था कि हम सैद्धांतिक रूप से सहनशीलता के विषय में जो कुछ कहें, लेकिन बड़ी संख्या में लोग नैतिक मूल्यों के छोटे से छोटे समूह का भी पालन नहीं करते हैं। हमारी जनसंख्या का बड़ा हिस्सा सहनशीलता को खारिज कर देता है। यदि हम मानव अधिकारों की बात करें और सहनशीलता के गुणों की शिक्षा पर ध्यान न दें, तो हम अपने लिए की कुआं खोदते हैं। और हम अपने लिए बड़ी मुश्किल पैदा करते हैं। इसलिए मेरा मानना है कि हमें क्या करना चाहिए, इस विषय की व्यवहारिक सोच यह है कि (1) हमारी व्यक्तिगत सोच में सहनशीलता का विकास हो, (2) जमीनी स्तर पर व्यवहारिक समाधान तलाशे जाएं। प्रधानमंत्री शेर्तिएन ने 1982 में चार्टर अधिकार तय करने में मदद की, लेकिन यह विचार सबसे

पहले 1950 में पेश किया गया था। इसमें 30 साल लगे। उस समय चांसलर हेल्मुट श्मिड्ट एवं प्रेसिडेंट गिस्कार्ड डी'ईस्टेंट ने यूरोपियन यूनियन को एकमत करने में मदद की, जब जीन मोनेट 1920 में इसके बारे में सोच रहा था। उन्हें इस विचार का क्रियान्वयन कराने में 30 से 40 साल लगे। मैं यहां कहूंगा कि मनुष्यों के दायित्वों, विभिन्न धर्मों एवं विभिन्न नैतिक मूल्यों के बीच संपर्क सेतु के रूप में मनुष्य की जिम्मेदारी की घोषणा पर काम करते हुए समिति के पिछले कार्यों में हमने इसकी शुरुआत की। हमने यह पेश किया। हमने 1996 में और 1997 में शुरुआत की और हां, इसे अभी भी मानव अधिकारों या यूएन के वोटों से स्वीकार नहीं किया है। लेकिन यह इस पर काम न करने का कोई कारण नहीं। यह एक शक्तिशाली विचार है। शक्तिशाली विचार लागू होने में दशकों का समय लेते हैं। इस समिति के लिए मैं कहूंगा कि हमने अपने प्रयास शुरु किए और अभी भी बहुत कुछ करने को बाकी है, इसलिए उत्साहित रहिए। हम सही मार्ग पर हैं।

प्रो. सैकलः मैं शब्द ''सहनशीलता'' के प्रति काफी असहज महसूस करता हूं। यह विशेष स्थितियों में अच्छी हो सकती है। लेकिन व्यापक रूप में यह दूसरों पर थोपी गई हो सकती है। मैं आपसी सामंजस्य का समर्थन करुंगा। यह अधिक उचित है। रवि शंकर से संबंधित एक अन्य कथन है, हताशा और अभाव। ये स्थितियां व्यक्ति को हिंसक बनाती हैं। लेकिन इसके दूसरे कारण भी हैं। जब आपके समाज में आपका जीवन एवं स्वतंत्रता बाहरी लोगों के द्वारा खतरे में होते हैं, या वो उन पर हमला करते हैं, तो हिंसा जन्म लेती है। यहां पर मैं यह प्रश्न पूछना चाहूंगा कि ''क्या कोई वैध हिंसा जैसा शब्द भी है?''

मेट्रोपोलिटन निफोनः बहस को सुनते और समाचारपत्र पढ़ते हुए मैं यही सोच रहा था कि किसी ने भी सहनशीलता के पर्याय के रूप में ''प्रेम'' का प्रयोग नहीं किया। मैं नहीं जानता क्यों। क्या आपको प्रेम में स्वीकार्यता दिखाई नहीं देती? क्या आपको प्रेम में एकजुटता नहीं दिखती? क्या आपको प्रेम में गरिमा नहीं दिखती? क्या आपको प्रेम में स्वतंत्रता नहीं दिखती? क्या आपको प्रेम में आपसी सामंजस्य नहीं दिखता? हम इसका प्रयोग क्यों नहीं करते?

प्रधानमंत्री फ्रेसरः दूसरे विश्वयुद्ध की शुरुआत तक हमारा समाज ऐसा था, जो कहता था कि यदि आप अच्छे ऑस्ट्रेलियन बनना चाहते हो, तो आपको एंग्लो–सैक्सन–सेल्टिक होना चाहिए। और यदि आप वो नहीं हैं, तो आप वो होने का दिखावा करें, फिर चाहे ऑस्ट्रेलिया में कई लोग ऐसे हों, जो 1800 में चीन, अफगानिस्तान या दुनिया के दूसरे स्थानों से आए हुए हों। लेकिन युद्ध के बाद ऑस्ट्रेलिया में विश्व के सैकड़ों अन्य देशों से लोग आने लगे। हमारे समाज में सहनशीलता का अर्थ है, एक अच्छा ऑस्ट्रेलियन होने के लिए आपको अपनी संस्कृति, अपना इतिहास, अपना धर्म, अपने अच्छे दिन और अपने सांस्कृतिक दिन भूलने की जरूरत नहीं है। यदि आप ये दिन मनाते हैं, तो अच्छा है। यह अच्छा ऑस्ट्रेलियन बनने के अनुरूप ही है। इसलिए सहनशीलता, स्वीकार्यता, यह सुनिश्चित करने का विस्तृत प्रयास कि यहां आने वाले सभी नए लोग यह समझ लें कि एक अच्छा ऑस्ट्रेलियन होने के लिए आपको यह भूलने की जरूरत नहीं है कि आप क्या थे और आप कहां से आए हैं, आपको अपने मौलिक देश के प्रति प्रेम भुलाने की भी जरूरत नहीं है। मेरे ख्याल से यह उसी के अनुरूप है, जो आज जीन क्रेटिन बता रहे थे। इसलिए यह इस बात पर निर्भर है कि आपका अनुभव ''सहनशीलता'' शब्द के बारे में आपको क्या सिखाता है, फिर चाहे यह सबसे छोटी बात हो या व्यापक रूप से वर्णित की गई हो। मेरे ख्याल से अधिकांश लोगों के दिमाग में वो इसे

व्यापक रूप में रखते हैं।
प्रो. चांगः शब्दों की मेरी समझ से प्यार अधिक ऊंचा है। सामाजिक अव्यवस्था को रोकने, आपसी समझ को बढ़ावा देने, सामाजिक शांति को बढ़ावा देने के लिए सहनशीलता की जरूरत है। लेकिन यदि आप उससे आगे जाएंगे, स्वीकार्यता एवं परस्पर मिलान (मेरे शब्दों में सक्रिय सम्मान), तो यह प्रेम के अधिक नजदीक हो जाता है। इसलिए इस स्तर पर मैं सहनशीलता को न्यूनतम, सीमांत रेखा के रूप में प्रयोग करुंगा।
श्री श्री रविशंकरः इस विषय में कि हिंसा किस हद तक स्वीकार्य या वैध है, मैं कहूंगा कि युद्ध सबसे खराब है। जो कोई भी युद्ध शुरु करता है, उसके पास इसके कारण होते हैं। मैं भी यही सोचता हूं, आपसी बातचीत टूट गई है, और आप लोगों से किस प्रकार बात करते हैं, इसमें मानवीय स्पर्श एवं बातचीत की कला भी समाप्त हो गई है, जो इसका एक कारण है। हिंसा को किसी भी कीमत पर सही नहीं ठहराया जा सकता।
डॉ. मेट्टानादोः मैं सोचता हूं कि शब्द 'सहनशीलता' को नैतिकता के द्वितीयक सिद्धांत के रूप में समझना होगा। यदि आप कोई चीज़ सिद्ध करना चाहते हैं, तो सोचें कि क्या आप अपने सामने एक छोटे से बच्चे का शोषण सही ठहरा सकते हैं? आप नहीं कह सकते कि आप इस स्थिति में सहनशील रहेंगे, क्योंकि यदि आप ऐसा करेंगे, तो आप कायर हैं, और स्थिति के प्रति गैरजिम्मेदार हैं। आप सही नहीं हैं। मेरा ख्याल है कि ऐसी स्थितियां भी हैं, जिनमें हम यह नहीं कह सकते कि हिंसा का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। मेरा ख्याल है कि हमें मुख्य सिद्धांत के रूप में न्याय को अपनाना होगा, हमें निर्णय करना होगा कि क्या सही है और क्या गलत; किसी खास स्थिति के पीछे क्या कारण है। यदि आपके सामने बच्चे का शोषण किया जाता है, जो स्वयं की रक्षा नहीं कर सकता, तो उसकी मदद के लिए तत्काल हस्तक्षेप की जरूरत होती है और हमें तत्काल कदम उठाना होगा। आप यह नहीं कह सकते कि ''हमें रुकना होगा क्योंकि हम सहनशील हैं''। यह गैरजिम्मेदाराना होगा और दूसरे लोगों के अस्तित्व के अधिकार एवं जीवन के अधिकार का उल्लंघन करेगा। इसलिए सहनशीलता न्याय के बाद द्वितीयक सिद्धांत है। यदि हम अन्य लोगों के अधिकार एवं गरिमा का सम्मान करते हुए न्याय के सिद्धांत का सही पालन करेंगे, तो हम सहनशील हो सकते हैं क्योंकि उस समय हमारे सामने की स्थिति न्यायोचित और सही होगी। अन्यथा सहनशीलता सभी पर लागू नहीं की जा सकती।
चेयरमैन ओबासांजोः मेरा मानना है कि सहनशीलता पर्याप्त नहीं है। हमें बदलती स्थितियों पर भी ध्यान देना होगा। लेकिन हम जो भी करें, मेरे लिए पारस्परिक सहमति बहुत, बहुत जरूरी है। आम मानवता, आम नैतिक मूल्य, आम सुरक्षा (यदि आप अपनी सुरक्षा चाहते हैं, तो आपको मेरी सुरक्षा का भी ध्यान रखना होगा), आम संपन्नता, एवं पारस्परिक प्रेम, पारस्परिक मेल, पारस्परिक सम्मान, और साझा समाज। एक समानता और सामंजस्य। ये सब अच्छे और अनुकरणीय नेतृत्व पर निर्भर हैं, चाहे वह नेतृत्व राजनैतिक हो, धार्मिक हो या सामुदायिक। मुझे लगता है यदि हममें यह है, तो हम एक नए समाज की ओर बढ़ जाएंगे।

****

4. जेहादी एवं पश्चिमी सोच पर सत्र

नीदरलैंड्स के भूतपूर्व प्रधानमंत्री महामहिम एंड्रीस वान एग्ट की अध्यक्षता में

'जेहाद' कुछ इस्लामी शब्दों में से एक है, जो पूरे विश्व में मशहूर और विवादास्पद है।

इस सत्र में चर्चा की गई कि इस शब्द का अर्थ क्या है और इसके नाम में की जाने वाली हिंसा को कैसे रोका जा सकता है। पहले परिचयकर्ता डॉ. अब्दुल मुक्ती ने कुरान में बताए गए जेहाद के नैतिक पक्ष के बारे में बताया और बताया कि यह आज के संदर्भ से कहां तक संबंधित है। जेहाद का मौलिक लक्ष्य व्यक्ति के विश्वास को मजबूत करना है, न कि अन्य लोगों को इसका पालन करने के लिए बाध्य करना। उन्होंने कहा कि जेहाद लोगों को अल्लाह के मार्ग पर ले जाने के लिए हैं। प्रो. अमीन सैकल ने इस्लाम के दो प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोण बताएः (1) सुधारवादी इस्लाम (इज्तिहादी) जिसका मानना है कि मुसलमान बदलते समय के अनुसार इस्लाम का प्रयोग व्यक्तिगत या सामुदायिक जीवन में कर सकते हैं। (2) संघर्षवादी इस्लाम (जेहादी), जो इस्लामी सरकार और शरिया के नीचे रहने का तर्क देते हैं।

इन दृष्टिकोणों के आधार पर मुसलमानों की चार श्रेणियां हैंः इज्तिहादी, जो जब तक खतरा न हो, किसी भी प्रकार की हिंसा को खारिज करते हैं; कट्टरवादी इस्लामी, जो इस्लाम के मौलिक सिद्धांतों का कठोर पालन करते हैं; नव कट्टरपंथी इस्लाम के कठोर, शाब्दिक अर्थों से चिपके रहते हैं और हिंसा के द्वारा न केवल बदलाव लाने बल्कि शासन करने का प्रयास करते हैं; एवं बहुत ही बुनियादी इस्लाम, जिन्हें इस्लाम का बहुत कम ज्ञान होता है और आसानी से पैदल सैनिकों के रूप में उत्तेजित हो जाते हैं। उन्होंने कहा कि आतंकवाद के खिलाफ युद्ध ने हिंसक इस्लामी कट्टरपंथियों और नव कट्टरपंथी इस्लाम को सुदृढ़ किया, जो बहुत ही अल्पसंख्यक हैं। पश्चिमी देशों को कुछ मुसलमानों के काम से अधिकांश मुसलमानों की छवि का अनुमान लगाना बंद करना चाहिए और नीतिगत कार्य करने चाहिए, ताकि इज्तिहादी इस्लामी सशक्त हो सकें। डॉ. गोलामली खुसरो ने आधुनिक समय में हिंसा के तीन जुड़े हुए रूपों– शारीरिक हिंसा, संरचनागत हिंसा और स्वतंत्रता के खिलाफ हिंसा के बारे में बताया, जिसके लिए उनका मानना था कि चर्चा, न्याय और स्वतंत्रता तीन विकल्प थे। चर्चा में मध्यपूर्व से मुस्लिम प्रतिभागियों ने बताया कि कुरान ने अन्य लोगों से व्यवहार करने के 17 चरणों का वर्णन किया एवं 17 वां चरण साफ कहता है कि सभी गैर मुस्लिमों से लड़ाई करो और इसने सभी पिछले आदेश निरस्त कर दिए। उन्होंने इस निर्देश के पालन की अनिवार्यता की ओर भी इशारा किया। नरमपंथी मुस्लिम और ईसाई तर्क देते हैं कि यद्यपि यह निर्देश महत्वपूर्ण है, लेकिन इसे बदलते समय एवं स्थितियों के संदर्भ में प्रयोग करने की जरूरत है। शिया इस्लाम ने उग्रवाद और हिंसा रोकने के लिए न केवल धर्म को खारिज करने बल्कि प्रजातांत्रिक मूल्यों के प्रति लोगों की प्रतिबद्धता के द्वारा एक मार्ग सुझाया। एक

अन्य प्रतिभागी ने आत्मविश्लेषण, स्वयं के प्रति ईमानदार बनने और सत्य तलाशने के संघर्ष के बारे में बताया, जिससे दूसरों का दृष्टिकोण समझने एवं स्वयं को दूसरों के स्थान पर रखकर देखने के प्रयासों को जन्म मिलता है। प्यार एवं चिंता का प्रदर्शन करके मानवता अन्य लक्ष्यों को देख सकती है। श्री ज़ीन क्रेटन मानते थे कि मुस्लिम संसार में देश को धर्म से अलग करने का मार्ग तलाशना आवश्यक है, जैसा पश्चिम में किया गया है।

नैतिक सिद्धांत के रूप में जेहाद

परिचयकर्ता

डॉ. अब्दुल मुक्ती, सचिव, सेंट्रल बोर्ड ऑफ मुहामादिया, इंडोनेशिया, वालिसोंगो, लेक्चरर, फैकल्टी ऑफ इस्लामिक एजुकेशन, स्टेट इस्लामिक यूनिवर्सिटी, सयारिफ हिदायतुल्ला, जकार्ता

पिछले कुछ दशकों में जेहाद मुस्लिम दुनिया के अंदर और बाहर सबसे मशहूर और विवादास्पद इस्लामी शब्द बन गया है। इस विषय में काफी चर्चा हुई है कि इसका क्या अर्थ है और क्या अर्थ नहीं है। जेहाद का अर्थ स्पष्ट करने के लिए काफी प्रयास किए गए हैं, जो कुछ मुस्लिमों या गैर मुस्लिमों ने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए हाईजैक करके इसके अर्थ को बदल दिया है और वो इसका प्रयोग सशस्त्र पवित्र युद्ध के लिए अपने अनुसार करके इसका प्रचार कर रहे हैं। यहां मैं जेहाद की गलत और हिंसक अभिव्यक्ति के खिलाफ बहस नहीं करूंगा– जो कई मुस्लिम और गैरमुस्लिम विद्वानों एवं धार्मिक नेताओं ने किया है। बल्कि मैं जेहाद के नैतिक संदेश पर जोर डालूंगा। इस दृष्टि से, मैं जेहाद के नैतिक पक्ष की बात करूंगा, जिसका उल्लेख कुरान में किया गया है और बताउंगा के आज के संदर्भ में हमारे जीवन में इसका कैसे समावेश किया जा सकता है। मैं इस्लामी शिक्षा के प्राथमिक स्रोत कुरान का उल्लेख करूंगा, ताकि जेहाद को समझने में कुरान के बाहर से कोई भी गैरसंबद्ध बात इसमें न आ सके। कुरान में जेहाद का अर्थ एक दूसरे की अभिव्यक्ति करना है। इसलिए किसी भी अभिव्यक्ति को वैध बनाने के लिए इस विषय से जुड़ी सभी संबंद्ध पंक्तियों को रखना होगा। कोई भी विधिगत कदम उठाने से पहले अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि कुरान का अर्थ बताने वाले को कुरान के सभी हिस्सों को बारीकी से देखना चाहिए, ताकि कुरान सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शिका बन सके और कोई भी गलत निष्कर्ष न निकले। इस दृष्टि से जेहाद की किसी भी चर्चा में सभी संबंधित पंक्तियों पर ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि इस शब्द का कुरान में बताए अनुसार मौलिक अर्थ निकलकर आ सके। कुरान के संदर्भ से कुरान का अर्थ बताने का मतलब यह भी है कि कुरान में बताए हर शब्द या सिद्धांत की अभिव्यक्ति कुरान की पृष्ठभूमि में हो। इसका मतलब है कि यदि कोई कुरान के अनुसार जेहाद का सिद्धांत समझना चाहता है, तो उसे कुरान की अन्य शिक्षाओं– 'न्याय', 'शांति', 'मानव जीवन

की सुरक्षा' और 'अल्लाह के प्रति समर्पण' को भी समझना होगा। यहां पर मेरा केंद्रण यह नहीं है। मैं पाठक को यह बताना चाहता हूं कि जेहाद का कोई भी अर्थ यदि इस विषय में कुरान की शिक्षा का उल्लंघन करता है, तो वो वैध नहीं है। दूसरी तरफ कुरान संभाषण की बारीकियों से युक्त है, जिसमें एक भी शब्द या हिस्सा बिल्कुल ठीक अर्थ के साथ दूसरे को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता। इसीलिए जेहाद शब्द को अन्य नजदीकी अर्थ वाले शब्दों जैसे जुह्द (सामर्थ्य; बल लगाना; कठिन मेहनत) या मुजाहद (कठोर प्रयास; लड़ाई) से या जुड़े हुए शब्दों जैसे कीतल (लड़ाई), दवा (उपदेश) और इन्फाक (अच्छे काम के लिए पैसा खर्च करना) से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता। संभाषण की इन बारीकियों में कुरान में किसी विशेष स्थान पर उल्लेखित शब्द की अपनी विशेष परिभाषा होने की संभावना है, जो किसी अन्य स्थान पर प्रयुक्त इसी शब्द या समान शब्द के अर्थ से अलग हो। यदि हम इस धारणा से सहमत हों, तो कुरान में अलग अलग स्थानों पर प्रयोग किए गए जेहाद शब्द का अर्थ अलग अलग हो सकता है एवं इसे इसके आम संदर्भ के साथ उस विशेष संदर्भ में समझना आवश्यक है (कुरान में संपूर्ण प्रयोग)। संभाषण की ये बारीकियां तलाशना एक चुनौतीपूर्ण एकेडेमिक कार्य है, जिसके लिए समर्पित विद्वानों के सहयोग की आवश्यकता है। इस दृष्टि से मैं केवल एक दावा कर सकता हूं कि कुरान में बताए गए जेहाद के अर्थ की दृष्टि से मेरी चर्चा का विस्तार बहुत कम है। जेहाद शब्द कहीं कहीं युद्ध से जुड़ा है। यह 'पवित्र युद्ध', 'न्याय के युद्ध' या 'रक्षात्मक युद्ध' के अर्थ में प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन ये सभी अर्थ कुछ हद तक गलत हैं। जेहाद और युद्ध, दो अलग अलग शब्द हैं, हालांकि ये दोनों कुछ स्थितियों में एक दूसरे से जुड़े हैं। मैं 'इस्लाम में जेहाद' की चर्चा करुंगा, न कि 'इस्लाम में युद्ध' की। दमन एवं आक्रमण के खिलाफ लड़ने की जिम्मेदारी, शहादत एवं युद्ध में नैतिकता के विषय में इस्लामी शिक्षाएं अलग अलग संबोधित करके बेहतर समझी जा सकती हैं।

इसलिए बचे हुए लेख में पाठक को जेहाद और युद्ध या हिंसा में बहुत कम संबंध दिखाई देगा। कुरान में जेहाद के लिए तीन कंसोनेंट वाला मूल इकतालीस बार प्रयुक्त हुआ है, एवं सर्वाधिक क्रिया रूप (सत्ताईस बार) में आया है। यह मूल निरंतर प्रयास, मेहनत, उद्यम, ईमानदार रहने, संघर्ष, सामर्थ्य, शक्ति और लड़ाई के भाव बताता है। कुरान में जेहाद के अधिकांश संदर्भ मुसलमानों को युद्ध करने के लिए नहीं कहते हैं। जेहाद (एवं इससे उत्पन्न) शब्द वाली कुछ पंक्तियां मक्का के काल में सामने आईं, जब धर्म मानने वालों और नास्तिकों के बीच कोई भी युद्ध नहीं था। एक पंक्ति में कहा गया हैः वा मन जेहादा फा इन्नमे युजेहिदू लिनाफसीही इन्ना अल्लेह लघानीयुन 'अन अल–'एलामीन'' (कुरान 29:6)। कुरान के कुछ टिप्पणीकर्ता तर्क देंगे कि यहां पर प्रयास का अर्थ व्यक्ति के विश्वास को बनाए रखते हुए मुश्किलातों और असुविधाओं का सामना करने का प्रयास करना है, जैसा 29:2 में बताया गया है। इसमें कहा गया है, ''क्या लोग सोचते हैं कि उन्हें यह कहने पर छोड़ दिया जाएगा, 'हम भरोसा करते हैं' और उन्हें सजा नहीं दी जाएगी?'' विश्वास करने वालों की परख अल्लाह

करता है कि कौन सच्चा विश्वास करता है और कौन नहीं (29:3), कौन प्रयार कर रहे हैं और कौन नहीं (9:16, 47:31)। हमारे विश्वास की रक्षा के लिए हमारी ओर से कड़े संघर्ष और धैर्य की आवश्यकता है, खासकर उस समय जब हम उस स्थिति का सामना करते हैं, जैसा मक्का में पैगम्बर मोहम्मद के अनुयायियों के साथ हुआ।

एक आधुनिक शिया भाष्यकार, अल–तबतबा इ अपनी तसफ़ीर, *अल–मि़जां* में इस बात पर ज़ोर देते हैं कि इस आयत में, जिहाद का अर्थ है, अपनी आस्था को बनाए रखना और सारे उपद्रव के बीच पूरे धैर्य के साथ डटे रहना। ठीक इसी प्रकार, एक आधुनिक सुन्नी भाष्यकार, इब्न अशर, अपनी तसफ़ीर, *अल–ताहिर, अल–ताहिर वा अल–तनवीर में* कहते हैं कि यहाँ जिहाद का पहला संभव अर्थ यही है कि इस्लाम में प्रवेश करते हुए आने वाली कठिनाईयों व पीड़ा का सामना करते हुए, धैर्य बनाए रखना। एक और आधुनिक भाष्यकार अल–कासिमी ने महासिन अल–तावली में कहा है कि जिहाद का अर्थ यही है कि कठिनाईयों का सामना करते हुए धैर्य बनाए रखें और सारी मुश्क़िलों के बावजूद सच का साथ न छोड़ें।

इन तीनों धारणाओं के अर्थों की समानता को, कुरान में बार–बार जिहाद शब्द के अर्थ के साथ व्यक्त किया गया है; जिहाद, विश्वास (ईमान), धैर्य (सब्र)। कम से कम दस जगह जिहाद से पहले ईमान शब्द आया है और तीन जगहों पर जिहाद के बाद सब्र शब्द आया है। जिहाद को सच्चा ईमान लाने वाले या विश्वास रखने वालों का एक लक्षण माना गया है (49:15, 8:74)। एक और अवधारणा जिहाद के साथ नियमित रूप से जुड़ी है, वह भी विश्वास लाने वाले सच्चे लोगों का एक लक्षण है; हिजर (भ्रष्ट आचरण का त्याग), यह सात जगहों पर जिहाद से पहले आता है। यद्यपि कुरान की कुछ निश्चित जगहों पर जिहाद शब्द को क़ितल (ख़तरों को भाँपते हुए, उनके साथ युद्ध करना।) भी समझ लिया जाता है , ये दोनों शब्द कहीं भी एक साथ नहीं दोहराए गए और न ही कुरान में इनकी कहीं निकटता पाई गई है।

क़ितल (कई बार इसे तलवार का जिहाद भी कहते हैं) को प्रायः एक लोकप्रिय परंपरा के आधार पर समझा जाता है – यह छोटा जिहाद (जिहाद असगर) है, तथा इसके अलावा एक बड़ा जिहाद (जिहाद अकबर) भी होता है, जो अपनी ही इच्छाओं (जिहाद अल–नफ्स; एक दूसरे संस्करण के अनुसार : मुजाहदत अल–अब्द हवाहू) के विरुद्ध किया जाता है – एक धर्मनिष्ठ और आध्यात्मिक जीवन जीने के लिए किया गया आंतरिक संघर्ष (जिसे सूफ़ीवाद में मुजाहद कहा गया है।)। कुरान में ही जिसे बड़ा जिहाद कहा गया है (जिहाद कबीर) वह कुरान के माध्यम से काफ़िरों के प्रति जिहाद है। एक मक्का सुरा में, कहा गया है,; फ़ला तुतियल–क़ैफ़ीरीन वा जहीदुम बीही जिहादा कबीरान (काफ़िरों की बात मत मानो, कुरान की ताकत के साथ उनके ख़िलाफ़ संघर्ष करो।) (क्यू: 25:52)

अल–तबतबा इ के अनुसार, कुरान के साथ काफ़िरों से संघर्ष करने का अर्थ होगा कि इसे उनके लिए पढ़ा जाए, इसका सारा ज्ञान उन्हें दिया जाए और इसमें दिए गए तर्कों को उन्हें समझाया जाए। दूसरी तसफ़ीरों में भी कुछ ऐसी ही व्याख्याएँ मिलती हैं, जैसे अल–अलूसी, अल–सैयद, महमूद, रूह अल–मानी और अल–शावकनी, मुहम्मद, फत अल–कादिर। अल–अलूसी के अनुसार इस आयत से यह अर्थ भी निकाला जा सकता है कि सबसे बड़ा जिहाद वही है जो उलामा, कुरान के माध्यम से दीन के दुश्मनों के ख़िलाफ़ करते हैं। इस तरह इस आयत से अर्थ निकलता है कि जिहाद एक कड़ा प्रयास है, जिसके माध्यम से काफ़िरों को, तार्किक बहस द्वारा उस बिंदु तक लाया जाता है, जिसके बाद सत्य उजागर हो जाता है। जिहाद का यह संदर्भ, जैसा कि आयत के पहले हिस्से में संकेत दिया गया, यह काफ़िरों द्वारा की गई मनमानी का हिस्सा है, जिसमें वे दीन पर ईमान रखने वालों को अपनी मर्जी के अनुसार चलाने की कोशिश करते हैं।

केवल इसी स्थान पर कुरान के माध्यम से जिहाद की बात की गई है। इसके अलावा बहुत से स्थानों पर धन और अपने जीवन के माध्यम से जिहाद करने की बात की गई है।(सात स्थानों पर।) इस तरह यह जिहाद के गंभीर तथा विवेकपूर्ण अर्थ को दर्शाता है – हमें अपनी ओर से किसी चीज़ के लिए यथासंभव प्रयास करना है, भले ही हमें अपनी संपदा या प्राणों से भी हाथ क्यों न धोना पड़े। परंतु, निश्चित रूप से, इस्लाम कोई ऐसा धर्म नहीं जो संपदा और जीवन का अनादर करता हो। वास्तव में, शरीआ के उद्देदश्यों में संपदा की रक्षा (हिफ्ज़ अल–माल) तथा प्राणों की रक्षा (हिफ्ज़ अल–नफ्स) भी शामिल है।

कुरान में कई बार, (कम से कम ग्यारह बार), जिहाद शब्द के बाद फी सबील अल्लाह (अल्लाह के अनुसार) आया है। एक जगह इसे संक्षिप्त तौर पर फी अल्लाह और एक जगह फ़िना भी लिखा गया है जिसे उसी अर्थ में लिया जाना चाहिए। जिहाद शब्द का फी सबील अल्लाह से संबंध यह दर्शा सकता है कि जिहाद को उसके दीन की भलाई के

लिए किया जाना चाहिए। फी सबील अल्लाह को 'अल्लाह के नाम पर' या 'अल्लाह के लिए' अर्थ में नहीं लिया गया। कुरान में, इस वाक्य के साथ प्रायः क़ितल शब्द भी आता है, जो लगभग तेरह बार आया है। इस तरह यह अर्थ निकाला जा सकता है कि क़ितल का अर्थ जिहाद के बहुत निकट है, यह भी नहीं भूलना चाहिए कि इस शब्द के बाद अक्सर इंफ़ाक (पैसा ख़र्च करना) शब्द भी आता है, यह सात बार आया है और हिजरा (बुरे हालात से परे जाना) चार बार आता है। सबील अल्लाह शब्द को प्रायः इस अर्थ में लिया जाता है, कि काफ़िर लोगों को उनके दीन से परे कर देना चाहते हैं (कम से कम तेईस स्थानों पर आया है।) और जो लोग अपने रास्ते से भटक जाते हैं (कम से कम ग्यारह स्थानों पर आया है।) इस तरह सबील अल्लाह को, उसके दीन के अर्थ में लिया जा सकता है– जिसे अक्सर अल–सिरात या अल–मुस्तक़ीम भी कहते हैं (सही रास्ता) – हालाँकि यह भी माना जा सकता है कि इन शब्दों के अर्थों में सूक्ष्म अंतर विद्यमान होगा।

हो सकता है कि फी सबील अल्लाह का यह वाक्य, जिहाद के उस अर्थ पर बल देता हो जिसमें काफ़िरों द्वारा शोषण, दबाव, अत्याचार व दंड आदि के लिए कठोर प्रत्युत्तर के बारे में कहा जा रहा हो, जो हमारे संप्रदाय के अस्तित्व के लिए संकट बनते हैं। हो सकता है कि इन सब बातों के कारण हमें उनके साथ युद्ध क्षेत्र में युद्ध करना पड़े। लडने के संदर्भ में, चाहे कोई चाहे या न चाहे, उसे अपनी भौतिक, आर्थिक, मानसिक व बौद्धिक; हर प्रकार की ऊर्जा लगानी होती है – यही जिहाद है। (अगर इस अवधारणा से बाहर चलें तो हदीथ के अनुसार कहा जाएगा, 'अत्याचारी के मुख पर ही सच बोलना, जिहाद का सबसे सर्वश्रेष्ठ प्रकार है।) क़ितल फी सबील अल्लाह को उन संदर्भों में बेहतर समझा जा सकता है, जिनमें जिहाद को लागू करना है। उत्पीड़न, क़ितल और जिहाद के बीच संबंध को आसानी से देखा जा सकता है, उदाहरण, कुरान 2: 216–218

इन आयतों में जिहाद को सांसारिक इच्छाओं से बचाव या दूसरे धर्मों को नष्ट करने के स्थान पर, अपने विश्वास या मत के बचाव के रूप में लिया गया है। जिहाद कोई ऐसा माध्यम नहीं, जिसके द्वारा दूसरों को मजबूर किया जाए कि वे हमारे धर्म में शामिल हों क्योंकि यदि कोई यह मानता है कि उसका धर्म संपूर्ण रूप से क़ामिल है तो वह दूसरों को उसका हिस्सा बनने के लिए विवश नहीं करता। ऐसा नियंत्रण अवचेतन रूप से तभी शामिल होता है जब सामने वाले को अपना धर्म अधूरा लगता है। जैसा कि कुरान में स्पष्ट रूप से कहा गया है: धर्म में कोई विवशता या दबाव नहीं होता। जिहाद में दूसरों को मजबूर करने की बजाए, यह ध्यान देना होता है कि जब काफ़िर हमारे धर्म को हानि दें तो हम उनके ख़िलाफ़ खड़े हो सकें। इस संदर्भ में, उस समय शांत रहने की बजाए उनसे लड़ना ही बेहतर होगा, जैसा कि कुरान 4:95 में कहा गया है।

'अपनी ओर से कुछ लोग इतना प्रयास क्यों करते हैं, इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि वे, न चाहने पर भी ऐसे काम करने का साहस जुटाते हैं, जो उनके धर्म में निर्देशित हैं, वे अपनी क़ीमती चीज़ों की कीमत पर भी संघर्ष करने से पीछे नहीं हटते। जिहाद से जुड़ी कुछ आयतों में ऐसा ही कुछ बताया गया है जैसे : कुरान, 9:41, 44। क़ितल के दौरान इस साहस की सबसे अधिक आवश्यकता होती है, (2:216)

क़ितल के संदर्भ में जिहाद का अर्थ यह भी हो सकता है कि कुरान में दी गई उपयुक्त सीमाओं के भीतर लड़ना, जैसे कुरान 2: 190–193। इन पंक्तियों में, अल्लाह लोगों को कहते हैं कि वे केवल उनसे ही युद्ध कर सकते हैं जो उनसे युद्ध करने आए हैं और उन्हें युद्धकला से जुड़ी सीमाओं का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, युद्ध में केवल उन्हें ही निशाने पर लिया जाना चाहिए, जो अत्याचारी हों और उनका अंत होते ही युद्ध को वहीं रोक देना चाहिए।

वर्तमान संसार में जिहाद की प्रासंगिकता

अब यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कुरान में जिहाद की अवधारणा विस्तृत अर्थों में मौजूद है, इसके विविध संदर्भ हैं, जिसमें कुछ निम्नलिखित बुनियादी पक्ष भी शामिल हो सकते हैं:

–कड़ा परिश्रम व अथक प्रयास

–आंतरिक और बाहरी बलों से अपने धर्म व सत्य की रक्षा।

– सभी कठिनाईयों व असुविधाओं को धैर्य से सहन करना।

–अन्याय व अत्याचार के विरुद्ध लड़ते हुए, अपने–आप तथा अपनी संपत्ति को संकट में डालने का साहस।

– सभी उपलब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग – बौद्धिक, शारीरिक व वित्तीय आदि।

– धर्म के नियमों के अनुसार सद्भावना तथा नेक कर्म करना।

हालाँकि हम इसे सशस्त्र युद्ध के संदर्भ में केवल आत्म–रक्षा के अर्थ में ही सीमित नहीं कर सकते और न ही नायकों को द्वंद्व युद्ध तक सीमित किया जा सकता है। अगर हमारी करनी में वे सब बातें शामिल हैं, जो अभी बताई गईं, तो हम वास्तव में, अपने–अपने क्षेत्र में, अपने परिवेश के बीच जिहाद करने की योग्यता रख सकते हैं। हम शिक्षकों, कार्यकर्ताओं, लेखकों, पत्रकारों, वैज्ञानिकों व व्यवसायियों के रूप में, अपने जिहाद कर सकते हैं। हम अपने कौशल, अपनी आवाज़, अपने ज्ञान, अपनी सक्रियता या अपने मतदान द्वारा भी अपना जिहाद

कर सकते हैं। हम शिक्षा की के बेहतरी के संदर्भ में जिहाद कर सकते हैं, मानव अधिकारों के संदर्भ में जिहाद कर सकते हैं, पर्यावरणीय संरक्षण के संदर्भ में जिहाद कर सकते हैं; निर्धनता उन्मूलन के क्षेत्र में जिहाद कर सकते हैं, शांति निर्माण, लिंग की समानता के लिए संघर्ष आदि के संदर्भ में अपना जिहाद कर सकते हैं।

वैसे तो जिहाद पूरी सद्भावना के साथ किया जाना चाहिए किंतु इसके साथ ही यह भी देखना चाहिए कि हम ऐसा कोई दावा या ऐलान न करें कि हम कोई जिहाद कर रहे हैं, हम जिहाद को बढ़ावा दे रहे हैं या हमने जिहाद किया है, हमें अल्लाह का शुक्र अदा करने के लिए इसे अपने जीवन में उतारना चाहिए। जैसा कि कुरान में कहा गया है, अल्लाह हमें परख़ता है कि हम जिहाद करना चाहते हैं या नहीं। इस प्रकार, केवल अल्लाह ही बेहतर जानता है कि हममें से कौन से लोग बेहतर तरीके से जिहाद कर रहे हैं। हमें अपने–आप को मुजाहिदीन कहने का हक़ नहीं है यानी हम स्वयं को जिहाद करने वाला नहीं कह सकते। हमारे भीतर जिहाद करने की भावना होनी चाहिए किंतु यदि हम सार्वजनिक रूप से इसका प्रचार करते हैं तो यह हमारी ओर से घमंड का लक्षण होगा। परंपरा के अनुसार, जो लोग यह चाहते हैं कि लोग उन्हें एक मुजाहिदीन के तौर पर पहचान दें, उन्हें बाद में निराश होना होगा।

इसके अतिरिक्त, हमें हर प्रयास पर प्रश्न उठाना चाहिए, जो जिहाद के अर्थ को केवल युद्ध और तथाकथित पाक़ युद्ध या **होली वार** से जोड़ता है, वे मुजाहिदीन सबके बीच यह ऐलान करते हैं कि वे पाक युद्ध या जिहाद कर रहे हैं। हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि जिहाद और क़ितल दो अलग शब्द हैं और जिहाद को कुरान में, कहीं भी पवित्र युद्ध या होली वार के रूप में वर्णित नहीं किया गया। जैसा कि प्रायः तर्क दिया जाता है, होली वार या पवित्र युद्ध की यह अवधारणा ऐतिहासिक तौर पर इस्लामी भी नहीं है और होली वार शब्द के साथ जिहाद को जोड़ना भी एक समकालीन प्रयास भर है। जिहाद अल्लाह की रज़ा में राज़ी होने से जुड़ा है जबकि स्वयं एक पवित्र युद्ध की घोषणा करना, एक तरह की तानाशाही या निरंकुशता जान पड़ती है।

रीडिंग्स

अल–अलूसी, अल–सैयद, महमूद, रूह अल–मानी फी तसफ़ीर *अल–कुरान अल–अज़ीम वा अल–सब अल–मथानी,* बेरूत इदारात अल–तिब्बाह अल–मुनिरिया, एन.डी.

बोनी, रिचर्ड, जिहाद : *फ्रॉम दि कुरान टू बिन लादेन,* न्यू यॉर्क, पालग्रेव मैकमिलन, 2004

अल–फादी, खालिद एम अबो। *द ग्रेट थेफ्टः रेसलिंग इस्लाम फ्रॉम एक्स्ट्रीमिस्ट,* हार्पर वन, 2007

इब्न अशर, अल–ताहिर, तस्फीर *अल–ताहिर वा अल–तनवीर*, तुनिसः दर–अल ट्यूनीशिया, 1984

अल–करदवी, यूसुफ, *फिक अल–जिहाद*, मकतबा वहाबा, 2009

रहमान, फ़ज़ल–उर, *मेजर थीम्स ऑफ़ कुरान।*

अल–शावकनी, मुहम्मद, फत अल–कादिर, *बेरूतः दर अल–फ़िकर*, एन.डी.

अल–तबतबा इ, मुहम्मद हुसैन। *अल–मिज़ां*, फी तसफ़ीर अल–कुरान, बेरूतः मुससस्त अल–अलामी ली अल–मतबुअत, 1997।

जिहादी और इतजिहादी इस्लाम, और पश्चिमी बोध

परिचयकर्ता 2 : प्रो. अमीन सैकल

राजनीति विज्ञान प्रो., डायरेक्टर, सेंटर फ़ॉर अरब एंड इस्लामिक स्टडीज़, ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनीवर्सिटी

इस्लाम के बारे में पश्चिमी सोच और धारणा इतने विविध रंगों व रूपों में सामने आ रही है कि उसने भ्रम का सा वातावरण बना दिया है। यह लेख इन सभी तथ्यों का ऐतिहासिक नज़रिए से विश्लेषण करता है और एक ऐसा ढाँचा बनाना चाहता है, जो विविध तथ्यों की समुचित व्याख्या करने में सफल हो सके।

मुस्लिम जगत में इस्लाम की भूमिका से जुड़े समकालीन वाद–विवाद व परिचर्चा को, इस्लाम के दो विज़न के साथ देखा जा सकता है, जो अपने–आप में बहुत अलग हैं और वे पैगंबर मुहम्मद की मृत्यु के कुछ समय बाद ही मुस्लिम समुदाय में प्रकट हुए।

पहले दृष्टिकोण के अनुसार यह मान्यता है कि इस्लाम अपनी ओर से कोई निश्चित ब्ल्यूप्रिंट नहीं देता जिससे इस्लामी सरकार और मुसलमानों की एकता को एक इस्लामिक नेतृत्व के अधीन लाया जा सके। इसके अनुसार पैगंबर कुरान और हदीथ के माध्यम से बुनियादी नैतिक और नीतिपरक वचनों की बहुत ही विस्तृत और समृद्ध परंपरा छोड़ गए हैं। जिसके अनुसार ही मुस्लिम इतिहास के बदलते समय और दशाओं के अनुसार अपने व्यक्तिगत व सामुदायिक जीवन पर इस्लाम को लागू करते आए हैं। दूसरे शब्दों में, यह इस्लाम को लागू करते हुए उसके *समय के साथ बँधने वाले* की बजाए *समय की धारा के साथ* चलने वाले रूप को इंगित करता है। सुधारवादियों का मानना है कि पढ़े–लिखे और विद्वान मुसलमानों को इस्लाम के रचनात्मक विश्लेषण और क्रियान्वयन पर ध्यान देना चाहिए जो कि स्वतंत्र मानवीय

विवेक पर आधारित हो, वह अंतःसंबद्ध मुस्लिम समाजों के बेहतर निर्माण, सुधार व नवीकरण पर बल देता हो। इसे हम इतजिहादी या सुधारवादी इस्लाम कह सकते हैं यानी विवेक और चिंतन के बाद निर्णय लेने वाला व्यक्ति।

दूसरा मत अपना तर्क देता है कि इस्लाम में धर्म और राजनीति के बीच कोई अनिवार्य अंतर नहीं है और वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यह धर्म के मूल ढाँचे के भीतर ही उसकी शाब्दिक समझ और उसे लागू करने नीति पर बल देता है। इस दृष्टिकोण को मानने वालों का कहना है कि मुस्लिम देशों में इस्लामिक सरकार होनी चाहिएं एक इस्लामिक उम्मा या सीमाहीन समुदाय की धारणा को मान देने के साथ–साथ, कुछ लोग स्वतंत्र राजनीतिक व क्षेत्रीय सत्ताओं की पहचान को भी जायज़ ठहराते हैं, पर शर्त यही रखते हैं कि वे इस्लामिक संस्थाओं व ईकाईयों के ही शासन में रहेंगे। वे मुसलमानों से आग्रह करते हैं कि वे तौहीद (ईश्वर की एकता) और अल्लाह की सर्वसत्ता को मानें और कुरान, सुन्ना, पैगंबर की नेतृत्व शैली और उनके द्वारा बनाए गए पाक व सुनहरे मूल इस्लामिक समुदाय को मानें, वे उसे धरती पर इस्लामिक सरकार और ईश्वर का राज्य बनाने का नमूना जानें, और इस्लामिक या शरीआ लॉ के अधीन दर अल–इस्लाम में रहें। उनमें से कुछ *पैन–इस्लामिक* भी कहलाते हैं जो उत्तरी सीमाओं को नकारते हैं और एक नेतृत्व के अधीन उम्मा के नवीकरण की हिमायत करते हैं। यहीं से संभवतः जिहादी या संघर्षशील इस्लाम का शब्द सामने उभर कर आया है।

इन दो दृष्टिकोणों ने ही ऐतिहासिक तौर पर, मुसलमानों की चार श्रेणियों को जन्म दिया जो गैर–मुस्लिम जगत तथा विशेष तौर पर पश्चिमी जगत के लिए अलग–अलग नज़रिए और रवैए रखते हैं। वे हैं : इतजिहादी, उग्र सुधारवादी, नव–रूढिवादी इस्लामिक और बुनियादी जानकारी रखने वाले स्थानीय लोग। हमें उनकी विचारधारा तथा व्यावहारिकता के स्तर को अलग–अलग परख़ना होगा।

पहली श्रेणी में उन संयमित–सुधारवादी इस्लामिकों को शामिल कर सकते हैं, जो इस्लाम को राजनीतिक व सामाजिक रूपांतरण का एक गतिशील स्त्रोत मानते हैं, वे अपने शासनों के लिए इसे सार्थक विपक्षी विचारधारा के रूप में भी मान देते हैं, परंतु ऐसे उद्देश्यों के प्राप्ति के लिए तब तक किसी भी प्रकार की हिंसा के प्रयोग को नकारते हैं, जब तक उनका धर्म, जीवन, आजादी, व्यक्तिगत या सामाजिक स्तर पर ख़तरे में न हों या उनकी धरती पर कोई धावा न बोल दे। हालाँकि इस वर्ग में भी बहुत सी श्रेणियाँ आती हैं, कुल मिला कर वे 'इस्लामिक उदारवादी' और 'इस्लामिक राजनीतिक प्लुरलिज़्म' श्रेणियों में आते हैं और कुरान में दिए गए इस्लामिक नियमों के अनुसार चलते हैं कि धर्म में कोई बाध्यता नहीं है। वे छोटे संगठनों, अनौपचारिक छोटे समूहों या व्यक्तिगत स्तरों पर काम करते हैं। इन समूहों में प्रेजीडेंट मुहम्मद खतामी द्वारा चलाए जा रहे संगठन 'इरानी इस्लामिक रिफार्मसिस्ट' को शामिल कर सकते हैं; स्वर्गीय इंडोनेशियाई राष्ट्रपति अब्दुररहमान वहीद द्वारा चलाई गई 'द इंडोनिशयन

नाहदातुल उलमा, नब्बे के दशक में नेकबेटिन इरबाकान के नेतृत्व में आरंभ हुई टर्की की वेलफेयर पार्टी, 2002 से प्रधानमंत्री तैय इरडोगन के नेतृत्व में चल रही जस्टिस एंड डेवलपमेंट पार्टी भी इसी विचारधारा के साथ हैं। अनेक बौद्धिक व मुस्लिम विद्वान इसी श्रेणी में आते हैं। वे सितंबर 11, 2011 के हमलों को इस्लाम के नाम पर होने वाले आतंकवाद की देन नहीं मानते थे, और जब उन्हें पता चला कि ओसामा बिन लादेन और अल कायदा उसके लिए ज़िम्मेदार थे तो इससे उन्हें बहुत कष्ट हुआ। वे इस्लाम को आतंकवाद से नहीं जोड़ते और उन्हें इसके नाम पर बेगुनाहों की जान लेने वालों से नफ़रत है। उन्हें लगता है कि ऐसे लोगों के कारण ही मुस्लिमों को हर जगह किसी न किसी तरह के अवरोधों का शिकार होना पड़ता है। वे अतिवादियों द्वारा मुसलमानों पर लगाए गए प्रतिबंधों को नकारते हैं और उनका मानना है कि मुस्लिम आतंकियों ने पश्चिम में आंतक फैलाने के लिए जो भी किया, उसके फलस्वरूप पश्चिम व उसके साथी देशों को अपना नैतिक आधार विस्तृत करने तथा मुस्लिम जगत में पश्चिमी व गैर–पश्चिमी अतिक्रमण और राजनीतिक रूप से इस्लाम पर प्रभाव डालने की आड़ मिल गई। उनका कहना है कि भले ही उनका कारण कोई भी रहा हो, बिन लादेन और उनके साथियों ने भी वही किया, जो सद्दाम हुसैन ने 1990 में अपने मूर्खतापूर्ण हमले द्वारा किया था, उन्होंने मुसलमानों द्वारा घरेलू सुधार, विदेशी हस्तक्षेप से आजादी तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उनकी आवाज़ उठाने की कोशिशों को कई दशक पीछे धकेल दिया। वे शांतिपूर्ण मूल बदलावों पर बल देते हैं और मौजूदा राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय ढाँचों में काम करते हुए, सुधार लाना चाहते हैं। वे आधुनिकीकरण के प्रति मुक्तमना हैं, प्रगति की अनिवार्यता में भरोसा रखते हैं, अंतःधार्मिक संवादों के प्रति आग्रही हैं और इस वैश्विक जगत में अपने समाज को लाभ देने के लिए पश्चिमी ज्ञान और उपलब्धियों को अपनाने से भी घृणा नहीं करते।

इसके साथ ही, अनेक सुधारवादी यूएस के आलोचक हैं और उनके कुछ साथियों पर भी इल्ज़ाम लगाते हैं कि उनकी ओर से मुस्लिम पंथ, नियमों, मूल्यों व अभ्यासों की गहरी समझ विकसित करने के प्रयत्न नहीं किए जाते, आपस में विस्फोटकारी संबंधों के स्थान पर, आपसी समझ के गहरे सेतुओं का निमार्ण नहीं किया जाता। वे यू.एस. की उन नीतियों की आलोचना करते हैं जो फिलीस्तीनी लोगों की दयनीय दशा को उपेक्षित करती है और मुसलमानों की छवि को खराब करने के लिए कुछ अतिवादियों की गतिविधियों को बढ़ा–चढ़ा कर दिखाती हैं। वे यू.एस. और उनके साथियों के लिए प्रेम और नापंसद का संबंध रखते हैं। एक ओर तो सुधारवादी पश्चिमी शिक्षा और तकनीक व बाज़ार से लाभ पाना चाहते हैं और प्रवासियों व मेहमानों के तौर पर विदेश गमन को सुरक्षित रखना चाहते हैं। वहीं दूसरी ओर, मुस्लिम जगत के प्रति पश्चिम की नीति की आलोचना करते हैं और मुस्लिम इलाके पर पश्चिम आधिपत्य के दावों को ख़ारिज़ करते हैं। इस्लामिक मायनों में शांत या संयमित इस्लामिक इजतिहादी कहे जा सकते हैं।

दूसरी श्रेणी में उग्र सुधारवादी इस्लामिकों को शामिल कर सकते हैं जो अपनी ही सोच और काम करने का तरीक़ा रखते हैं। वे सुधारवादियों से कुछ अलग विचार रखते हैं। वे शरीआ को देश के शासन को चलाने के लिए लागू नहीं करना चाहते, यह एक विडंबना है कि वह अपनी अवधारणा और क्रियान्वयन के साथ आधुनिक है। वे राजनीतिक व सामाजिक नियंत्रण तथा हिंसा को उन हालात में जायज़ मानते हैं, जब उन्हें अपने धर्म और धार्मिक–सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखना हो, वे अपनी ओर से उस नीति को लागू करना चाहते हैं, जिसे वे इस्लामिक मानते हैं। वे आधुनिकीकरण के ख़िलाफ़ नहीं, परंतु यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि आधुनिकता और उसके सभी रूपों को उनके इस्लमिक मूल्यों व अभ्यासों के परिप्रेक्ष्य में स्वीकार किया जाए।

वे बाहरी लोगों द्वारा मुसलमानों पर किए गए ऐतिहासिक व समकालीन अन्याय के ख़िलाफ़ कट्टरता से पेश आते हैं, परंतु अनिवार्य रूप से इसे मुसलमानों के ख़िलाफ़ मुसलमानों पर या मुसलमानों द्वारा गैर–मुसलमानों द्वारा होने वाले अन्याय की आड़ नहीं बनाते। वे उन बाहरी बलों को नकारते हैं जो इस्लामिक प्रभाव नहीं रखते और इसके साथ ही अपनी सरकार की भी निंदा करते हैं जो उनके अनुसार बाहरी ताकतों के प्रभाव में है या मुस्लिम समुदाय के सामने आने वाली घरेलू और विदेशी नीति संबंधी समस्याओं का समाधान नहीं कर पाती। वे अपनी राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक दयनीय दशा के लिए पश्चिम और ख़ासतौर पर, यू. एस. को दोषी ठहराते हैं और उनका मानना है कि मुसलमान इलाकों में अमेरिका के आधिपत्य के कारण ही मुसलमान वैश्विक समुदाय में सांस्कृतिक पतन हुआ है। इसके साथ ही, वे प्रायः बल देते हैं कि मुस्लिम समुदाय इस्लामिक नियम और नैतिकता से दूर हो गए हैं इसलिए वे पश्चिम के अधीन हो गए हैं। और इस तरह पश्चिमी वैश्विक आधिपत्य को उखाड़ फेंकने के लिए सच्चे इस्लाम की पुनः स्थापना करना अनिवार्य है। वे अक्सर सत्ता में विपक्षी दल की भूमिका का निर्वाह अधिक सफलता से करते हैं।

मुस्लिम जगत में बहुत से दल इसी प्रकृति के हैं। इसमें 1978–79 की इरानी क्रांति के नेता अयातुल्ला रोहुल्ला खुमैनी के अनुयायी, मिस्र के इखवान अल–मुस्लिमन (मुस्लिम ब्रदरहुड) आदि शामिल हैं, जो कि विशेष रूप से करिश्माई नेता सैयद कुतुब के नेतृत्व में आते हैं, जो 1966 में, कैद में मारा गया और हुसैन अब्दुला अल–तुराबी के नेतृत्व में सूडानी नेशनल इस्लामिक फ्रंट भी शामिल है। अब अपनी अतिवादी गतिविधियों के कारण फिलीस्तीनी हमस व लेबनीज़ हिज़ब–उल्लाह भी इस श्रेणी में आ सकते हैं। उनके बहुत से मुस्लिम सदस्य यू.एस. व उसके साथियों के ख़िलाफ़ हिंसक कारवाई को यू.एस. की प्रतिक्रिया के लिए जायज़ ठहराते हैं। वे यू.एस. को अपना कट्टर दुश्मन मानते हैं, जो न केवल इज़रायल को ग़लत समर्थन दे रहा है, जैसे कि पूर्वी येरूशलम, बल्कि कई मुस्लिम देशों में भ्रष्ट व तानाशाही शासनों को भी प्रोत्साहित कर रहा है। उनका मानना है कि यू.एस. मुस्लिम जगत को सदा

पीछे रखना चाहता है और विश्व राजनीति में अपना आधिपत्य बनाए रखने के लिए ऐसी चालें चल रहा है। उग्र सुधारवादी इस्लामिक 9/11 के बाद, मुस्लिम जगत में होने वाले अंतर्राष्ट्रीय संकट को शीत युद्ध युग के यथार्थवादियों का किया–धरा मानता है। उनका मानना है कि वे लोग अब सोवियत यूनियन के स्थान पर उन्हें अपना शत्रु बना चुके हैं। इनमें से कई तो यू. एस. और इसके साथियों को इस्लाम और इस्लामिक जीवनशैली के लिए बैरी मानते हैं। यदि इस्लामिक लिहाज़ से देखें तो ये लोग इतजिहादियों की तुलना में अधिक जिहादी हैं और सामाजिक पुनः निर्माण और विदेश नीति के बारे में अलग ही राय रखते हैं।

तीसरी श्रेणी में वे लोग शामिल हैं जिन्हें आप नव–रूढिवादी इस्लामिक कह सकते हैं, ये लोग, विशेष इस्लामिक विद्वानों द्वारा चलाई गई विचारधाराओं के अनुरूप, इस्लाम के कड़े व शाब्दिक विश्लेषण में विश्वास रखते हैं। उनके लिए संदर्भ से अधिक पाठ्य महत्व रखता है। हमें उनकी विविधता का मोल कम नहीं आँकना चाहिए; वे उग्र सुधारवादी इस्लामिकों की तुलना में अधिक नैतिकतावादी, कट्टरपंथी, सत्य–निष्ठ, एकाग्र, पक्षपाती, अज्ञात जन भीरू तथा प्रतिरोधी होते हैं। इनके यहाँ प्रायः संगठन का केवल एक नेता होता है, जिसके पास परम सत्ता पाई जाती है, ये अनेकता की स्थिति से परे होते हैं, भले ही घरेलू हों या फिर विदेशों से प्रेरित हों। ये न केवल बदलाव लाने के लिए बल्कि शासन करने के लिए भी हिंसा का प्रयोग करते हैं। इन्हें आप आधुनिक इतिहास के मार्क्सवादी–लेनिनवादी सर्वसत्तावादी दलों से बहुत अलग नहीं मान सकते। धर्म के मामले में उनकी समझ सादा हो सकती है किंतु वे विशेष धार्मिक प्रभावों के साथ सामाजिक होते हैं। इन्हें अतिवादी भी कहा जाता है।

तालिबान नागरिक सेना तथा पाकिस्तान पर आधारित मुस्लिम ब्रदरहुड तथा देवबंदी समूह जैसे जमात–ए उलेमा–ए इस्लाम या लश्कर–ए तोएबा, इस श्रेणी के जाने–माने उदाहरण हैं। अगर उग्र सुधारवादी इस्लामिक तथा नव–रूढिवादी इस्लामिक के विचारों को परस्पर व्याप्त करना हो, तो इनके बीच संगठनात्मक संपर्क पाए जाते हैं जिनमें पहले वाला, दूसरे को मानव संसाधनों, संरक्षणात्मक उद्देश्यों तथा अन्य गतिविधियों के लिए प्रयुक्त करता है जिनमें सशस्त्र व आतंकवादी कारवाई भी शामिल है। अल–कायदा और तालिबान के बीच ऐसे ही संबंध थे, जहाँ अल–कायदा पैसा और अरब लड़ाके दे रहा था, वहीं तालिबान पार देशी बल के रूप में सहायता दे रहा था। यह गैर और गैर–अरब बलों के बीच एक तालमेल कायम करता है; इस तरह ये प्रभाव परस्पर प्रभाव डालते हुए, उनके लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक होते हैं।

चौथी श्रेणी बुनियादी नेटवर्क से उपजी है, जिनके लिए इस्लाम का ज्ञान बहुत ही सामान्य और ग्राम व मदरसा स्तर पर है। वे एक धर्म के तौर पर इस्लाम का पालन करते हैं परंतु राजनीतिक या गैर–राजनीतिक हो सकते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उनका धर्म और जीवनशैली बाहरी बलों द्वारा संकटग्रस्त है या नहीं, वे इस बात पर क्या सोच रखते हैं?

उनमें से अनेक संभावित इस्लाम के पदातिक सिपाही होने की संभावना रखते हैं, उन्हें उग्र सुधारवादी इस्लामिक या नव–रूढ़िवादी अपने ही तरीक़े से खिलौने बना सकते हैं। यह संवेदनशीलता इस तथ्य से उपजी है कि इन समुदायों के पास गहरे समाचारों, विश्लेषणों तथा उनके स्थानीय संदर्भों व प्रांतों के बाहर की जानकारी का अभाव है। नतीजन, वे अहम राजनीतिक मुद्दों के बारे में स्वतंत्र और ठोस मत कायम नहीं कर पाते और घटनाएँ उन्हें प्रभावित करती हैं। वे प्रायः उसी जानकारी पर विश्वास रखते हैं, जो उनके सामने राजनीतिक रूप से प्रभावित इस्लामियों द्वारा छाँट कर प्रस्तुत की जाती है। इस दल में आम मुसलमानों की बहुलता है, जिन्हें यदि अकेला छोड़ दिया जाए तो वे अपने दैनिक जीवन के साथ बहुत आराम से मग्न रह सकते हैं, यह बात ख़ासतौर पर निर्धन देशों के लिए तो और भी सच है। भले ही मिस्र के किसी निर्धन इलाके में हों या पाकिस्तान के, उन्हें बहुत आसानी से सुधारवादी इस्लामिक या नव–रूढ़िवादी अपनी अँगुलियों पर नचा सकते हैं। यही चीज़ उन मामलों में भी देखी गई है, जहाँ स्थानीय दशाएँ और जीवनशैली, पश्चिमी ताकतों के कारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव झेलते हैं जो कि सैन्य हस्तक्षेप, राजनीतिक प्रभाव और प्रतिबंधों के कारण हो सकता है। इसे सांस्कृतिक या आर्थिक शक्ति के विस्तार से भी जोड़ा जा सकता है। अक्सर विदेशियों के हाथों मुस्लिमों की दयनीय दशा, अराजनीतिक दलों को भी राजनीतिक क़दम उठाने पर विवश कर देती है। तालिबान ने अपने लिए बहुत से सिपाही ऐसे ही लोगों में से चुने, जो बेघर या अनाथ कर दिए गए या अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप के कारण निर्धनता की चपेट में आ गए। 9/11 की घटना तथा इसके प्रभावों से जुड़ी जानकारी के बारे में इनकी राय, उस जानकारी पर ही आधारित है, जो इन्हें स्थानीय उपदेशकों या रूढ़िवादी इस्लामिक एक्टिविस्ट के माध्यम से पता चली, जिनके पास इन्हें ऐसी शिक्षा प्रदान करने का साधन और उद्देश्य दोनों ही मौजूद हैं। इन लोगों की राय पूछी जाए तो उसमें यू.एस. के प्रति गहरी घृणा तथा इसके प्रति उदासीनता तक का भाव शामिल हो सकता है।

पश्चिम में इस्लाम व मुस्लिम के प्रति तथा मुस्लिमों में पश्चिम के प्रति विविध रवैयों के कारण, ख़ासतौर पर यू.एस. के मामले में, दोनों पक्षों की ओर से भारी ग़लतफ़हमी और भ्रम का वातावरण रहा है। हालाँकि 9/11 की घटना ने इसे और भी गहरा दिया किंतु इसमें बहुत सारे ऐतिहासिक और समकालीन मसले भी जुड़े हैं, जिन्होंने इसे ये आकार दिया है। इन सभी समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझे बिना यह नहीं जाना जा सकता कि मुस्लिक अतिवाद का जन्म कहाँ से हुआ और साथ ही यह मुश्किल सवाल भी बना रहेगा कि पश्चिम और इस्लाम के बीच रचनात्मक संबंधों में सुधार कैसे हो।

बुश द्वारा आंतकवाद के ख़िलाफ़ छेड़ी गई जंग का ओबामा ने महत्व घटा दिया किंतु इससे भी दशा में कोई सुधार नहीं हुआ। अगर हमें इन बिगड़े हालात को संभलना और सुलझाना है

तो अब सही समय आ गया है कि पश्चिम वाले तथा अन्य बड़ी ताकतें, कुछ लोगों की कारवाईयों के आधार पर, सभी मुसलमानों को परख़ना बंद करें और ऐसी नीतियों का निर्माण किया जाए, जो इजतिहादी इस्लामिकों को सबल बना सकें, जिनका धार्मिक दृष्टिकोण, अधिकतर मुस्लिम लोगों को अभिव्यक्त करता है, वे अपने समाजों में सुधार के साथ–साथ, पश्चिम के संग भी बेहतर संबंध बनाना चाहते हैं। इसके साथ ही इतजिहादी इस्लामिकों को संवाद और गहरी समझ के साथ अपने जिहादी भाईयों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठानी होगी, संभवतः जिनमें सुन्नी पक्ष के स्वर्गीय इंडोनेशियाई राष्ट्रपति अब्दुररहमान वहीद तथा शिया पक्ष से इरानी राष्ट्रपति मोहम्मद ख़तामी के कहे शब्दों को भी शामिल किया जा सकता है। दोनों विद्वानों तथा राजनेताओं ने इस बात पर बल दिया कि इस्लाम प्रजातंत्र के अनुकूल है और साथ ही इसे मानव अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय उद्घोषणा के अनुकूल भी माना जा सकता है, जिसमें मृत्युदंड एक अपवाद है।

धर्म तथा हिंसा

डॉ घोलामी कोशरू

राष्ट्रपति खतामी के भूतपूर्व विशेष सलाहाकर, इरान

हमारे परस्पर संबद्ध तथा अंतःपरस्पर संसार में, जहाँ वैश्विक ख़तरे तेज़ी से फ़ैल रहे हैं, सुरक्षा ही प्रत्येक का सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा हो गई है। इस प्रकार कोई भी देश या महाद्वीप हिंसा, आतंकवाद या सुरक्षा की चुनौतियों के संकट से मुक्त नहीं है। शस्त्रों की होड़, राजनीतिक संधियाँ तथा सैन्य व्यय भी संसार में शांति व समृद्धि लाने में असफल रहे हैं। सुरक्षा के इन उपायों पर अधिक धन व्यय करते हुए, हम संसार को और भी असुरक्षित बनाते जा रहे हैं। इसी भय और संकट के कारण मनुष्य का इतिहास अनेक युद्धों का साक्षी रहा है।

हमें एक नई दृष्टि अपनानी होगी। यूनेस्को का संविधान कहता है, 'युद्ध मनुष्य के मन में आरंभ होते हैं, मनुष्य के मन में ही शांति के बचाव की रचना की जानी चाहिए।' सरकारों के राजनीतिक और आर्थिक प्रबंधों पर विश्वास रखने मात्र से ही परम शांति नहीं पाई जा सकती, 'हमें इसे मनुष्यजाति की बौद्धिक व नैतिक एकता से जोड़ना ही होगा।'

वैश्विक प्रवृत्ति अपने साथ ऐसे अवसर लाई है, जिनमें ज्ञान तथा विज्ञान में वृद्धि, सूचना व तकनीक तक पहुँच, विश्व बाज़ार तक पहुँच व आर्थिक विकास आदि के साथ–साथ चुनौतियाँ भी सम्मिलित हैं जैसे, सांस्कृतिक पहचान को कम आँकना, संवहनीय विकास की उपेक्षा करना, धनी व निर्धन के बीच के अंतर को और भी बड़ा करना, हिंसा के विविध साधनों का व्यापक स्तर पर निर्माण आदि। इसमें विविधि रूप से जनसंहार के लिए अस्त्रों के निर्माण से ले कर आतंकी नेटवर्क व प्रणालीबद्ध निरीक्षण तथा लोगों को छिपे रूप में भयभीत करना भी

आता है। वैश्विक राजनीतिक ढाँचा अतिवाद और हिंसा, शस्त्रों की होड़ तथा प्रमुख एकपक्षवाद को संभालने में असफल रहा है।

वैश्वीकरण के इस युग में हिंसा बहुमुखी है और कई संकेतार्थों व अनुप्रयोगों के साथ सामने आती है। हम आधुनिक युग में हिंसा के तीन अंतःसंबद्ध पक्षों तथा अनुप्रयोगों को पहचान सकते हैं :

अ. भौतिक हिंसा का अर्थ है किसी पर भी बलप्रयोग करते हुए उसे घायल करना या उसके साथ बुरा व्यवहार करना। इस तरह यह दूसरों पर निजी या सार्वजनिक तौर पर दबाव देते हुए, उन्हें हानि पहुँचाती है। राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर हिंसा व्यापक है, सुरक्षा से जुड़ी चुनौतियों तथा राजनीतिक व सामाजिक संघर्षों को बलप्रयोग से सुलझाया जाता है।

ब. वैश्विक स्तर पर, सामाजिक–आर्थिक असमानता के कारण संरचनात्मक हिंसा जन्म लेती है। इससे संस्थागत हानि तथा दबाव सामने आता है जिसे पहले से ही बचाया जा सकता है। संरचनागत हिंसा में निर्धनता भी शामिल है, जिसने वैश्विक व राष्ट्रीय स्तरों पर, समाजों में असमानता और प्रणालीबद्ध पार्श्वीकरण में प्रभावशाली वृद्धि के साथ कष्टों को जन्म दिया है।

स. स्वतंत्रता के विरुद्ध हिंसा, इस अर्थ में, हिंसा तब घटती है जब लोगों को प्रतियोगिता द्वारा नए दल बनाने तथा सत्ता बनाने से रोका जाता है। हाना अरडेंट के अनुसार निरंकुशता सरकार का सबसे कम शक्तिशाली तथा सबसे हिंसक रूप है। निरंकुशता व्यक्तियों पर दबाव डालती है और उनकी सत्ता बनाने की योग्यता को नष्ट कर देती है।

यहाँ वर्णित सभी अवस्थाओं के लिए हमें शांतिपूर्ण विकल्प और उपाय खोजने चाहिए। मेरे अनुसार, हिंसा से रहित संसार के लिए संवाद, न्याय व स्वतंत्रता के तीन विकल्पों को अपनाया जाना चाहिए।

1. संवादः

सार्थक संवादों के अभाव में सुरक्षा व शांति के बारे में विचार नहीं किया जा सकता, और ये संवाद नैतिक व आध्यात्मिक स्तरों के प्रति ठोस वचनबद्धता तथा स्वार्थी व अल्पकालिक हितों से परे जाए बिना कभी सफल नहीं होंगे। वर्तमान में, मिडिल ईस्ट में राजनीतिक व सांस्कृतिक प्रवत्तियों तथा प्रक्रियाओं तथा संसार में स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है संस्कृतियों व धर्मों के बीच संवाद केवल एक नैतिक अनुशंसा नहीं अपितु अनिवार्य हो गया है।

'संवाद' को भाषा, तर्क व समानुभूति के माध्यम से विवके के प्रयोग व अर्थ को समझने की दूरदृष्टि व यथार्थ के संधान के समान माना जा सकता है। 'संवाद' के दौरान, एक समान

आधार तथा उपाय खोजना उतना ही महत्व रखता है जिस तरह मौजूदा विभिन्नताओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए। वर्तमान के विषमांगी संसार में विविध सांस्कृतिक पहचानों को मान्यता दे कर, दूसरी संस्कृतियों को मान्यता दी जा सकती है। धार्मिक व सांस्कृतिक अर्थों में हमारा जुड़ाव ही हमारी पहचान को बनाता है; यही पहचान दूसरों के सामने भी आनी चाहिए ताकि मानवीय जीवन को समृद्ध किया जा सके। मनुष्य का जीवन आपसी मतभेदों तथा विविधताओं में गुँथा है। कोई भी व्यक्ति इस संसार में अकेले एक स्वस्थ और सफल जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। वास्तव में, प्रत्येक की प्रसन्नता, दूसरे व्यक्ति की प्रसन्नता पर निर्भर करती है।

2. न्याय

न्याय एक ऐसी माँग है जिसे सार्वजनीन रूप से माँगा जा रहा है, यह आकांक्षा सारे संसार में सुनी व प्रकट की जा रही है। न्याय की जिज्ञासा ही हमारी सामूहिक वैश्विक चेतना का मूल है। सामाजिक–आर्थिक असमानताओं के विरुद्ध आपत्तियाँ, पश्चिमी प्रजातंत्रों सहित विविध राजनीतिक तंत्रों द्वारा पर्याप्त रूप से वैश्विक कुंठा को दूर न कर पाने की अयोग्यता आदि सामूहिक रूप से वैश्विक असंतुष्टि के प्रति सार्वजनीन तात्कालिता के महत्व को कम कर देती हैं। सामूहिक उत्तरदायित्व एक सामूहिक विवेक चाहता है, इस प्रकार किसी सामान्य परिभाषा पर आने के लिए विविध परंपराओं, संस्कृतियों तथा राजनीतिक तंत्रों का सहयोग तथा उपायों की स्थानीयता व अवस्थाओं की विविधता को बाधित किए बिना, न्याय की आवश्यकता है। इसमें किसी का एकछत्र राज नहीं और न ही कोई एक फ़ार्मूला सबके लिए उपयुक्त हो सकता है।

आर्थिक कल्याण के अतिरिक्त लोग संस्कृति, आध्यात्मिकता व आचार नीति भी चाहते हैं। नीतिपरक सीमाओं के अभाव में अर्थशास्त्र, मनुष्यों के लिए एक स्वस्थ पर्यावरण के विनाश की ओर ले जाएगा और संतुष्टि मिलने के स्थान पर हम एक ऐसी दौड़ का हिस्सा बन जाएँगे, जिसमें लोभी उपभोक्तावाद तथा अंतर–पीढ़ी संसाधनों का विनाश शामिल होगा।

3. धर्म व प्रजातंत्र

वैश्वीकरण के युग में, धार्मिक एकता तथा संवेदनाएँ पारंपरिक संबंधों तथा सामाजिक संस्थाओं के पतन से उत्पन्न अंतराल को भरते हैं, जो सामाजिक एकता को सुदृढ कर सकते थे। धर्म अर्थ व समुदाय निर्माण के क्षेत्रों में, बहुत ही वास्तविक व प्रमुख भूमिका निभाते हैं। धर्म के दो प्रमुख पक्ष हैं : विश्वास करना तथा जुड़ाव रखना। सबसे दयालु, अल्लाह पर विश्वास करने से लोग परस्पर निकट आते हैं।

हाल के दशकों में, इस्लामिक पुनरुत्थानवाद, एक प्रभावशाली राजनीतिक तथ्य के रूप में, इस्लाम तथा पश्चिम के संबंधों के लिए महान भूमिका अदा कर रहा है। वैश्विक प्रवृत्ति के रूप में ऐसा विस्तृत सामाजिक आंदोलन, संसार के सामाजिक–राजनीतिक विकास के प्रति बहुत संवेदनशील है। इस्लाम तथा पश्चिम के बीच एक रचनात्मक संवाद के लिए, यह परामर्श दिया जाता है कि मुस्लिमों से संवाद का एक पक्ष बनने के लिए, धर्मनिरपेक्ष बनने की अपेक्षा न की जाए। इससे कोई लाभ नहीं होगा और केवल आपसी अंतराल को बढ़ाने में ही मदद मिलेगी। यदि मुस्लिम समाजों के साथ और अधिक उपयुक्त और व्यावहारिक तौर पर पेश आना हो तो मान–मर्यादा के प्रजातांत्रिक नियमों के प्रचार तथा इस्लामिक जगत की संयमित प्रवृत्ति को सम्मान दिया जाना चाहिए।

इसके साथ ही, हम गहरी निराशा के बीच, इस्लामिक जगत के कट्टर व तफ़क़ीरी दलों के साक्षी रहे हैं, जो सबसे श्रेष्ठ सत्य को पाने का दावा करते हैं और पवित्र ग्रंथ को खुले मन–मस्तिष्क से न पढ़ते हुए, केवल शब्दों को ऊपरी तौर पर ही लेते हैं। वे मुस्लिम या गैर–मुस्लिम के किसी भी अन्य दल को नास्तिक मानते हैं और जन्नत का वादा करते हुए, मनुष्य के जीवन को ज़हन्नुम में बदल रहे हैं। धर्म के अनुयायियों के बीच आपसी टकराव संघर्ष या वर्गीय हिंसा तथा धर्मों के बीच आपसी मार–काट इसी मानसिकता का भयंकर परिणाम है।

इमाम अली की शिक्षाओं में (शिया के पहले इमाम) सभी लोगों को केवल दो दलों में विभाजित किया जा सकता है, वे या तो हमारे मज़हब में भाई हैं या सृष्टि में हमारे जैसे दूसरे लोग हैं। इस पवित्र ग्रंथ को अल्लाह के नूर को हाज़िर–नाज़िर रखते हुए पढ़ा जाना चाहिए। दैवीय पैगंबर, महान दार्शनिक व नैतिक विचारक मनुष्य जाति के सारे इतिहास के दौरान, स्वार्थ, आक्रामकता तथा निरंकुशता का विरोध करते आए हैं, उन्हें मिटाने का प्रयत्न करते आए हैं। उनके प्रयासों के बावजूद, सत्ता के लिए इंसान की भूख तथा अल्पकालिक हितों की चाह ने मनुष्य के इतिहास को युद्ध तथा विनाश में झोंक दिया।

हमें रुढ़िवाद–धर्मनिरपेक्षवाद के द्विभाजन से परे जाना चाहिए तथा इस्लामिक जगत में धार्मिक प्रजातंत्र का प्रचार करना चाहिए। इस्लामिक पुनरुत्थान के नियंत्रण पर आधारित नीतियाँ तथा राजनीतिक साधनों की प्राप्ति के लिए उग्र सुधारवादियों का प्रयोग, केवल हिंसा और अतिवाद को ही प्रश्रय देगा। यह प्रवृत्ति स्थिरता व सुरक्षा के लिए ख़तरा बनते हुए, समाज के नैतिक आधार को दुर्बल बनाती है।

4. हिंसा व अतिवाद के विरुद्ध संसार

इसी प्रवृत्ति के प्रति सावधानी बरतते हुए, संयुक्त राष्ट्र की आम सभा में, सर्वसहमति से एक प्रस्ताव पास किया गया जो इरानी राष्ट्रपति रोहानी द्वारा दिए गए प्रस्तावों पर आधारित था,

जिसमें उन्होंने वर्ल्ड अगेंस्ट वॉयलेंस एंड एक्स्ट्रीमिज्म (WAVE) का नाम दिया है। यह प्रस्ताव उन सभी साधनों की निंदा करता है जो निरंकुशता, तानाशाही तथा आतंकवाद की संस्कृति से उपजे हैं जैसे राष्ट्रों की राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रांतीय अखंडता के विरुद्ध बल–प्रयोग का संकट; और इसके साथ ही सजातीय, जातीय व धार्मिक घृणा भी भर्त्सना करता है।

संक्षेप में, हिंसामुक्त संसार का पथ, संवाद, नीति, न्याय, विकास तथा स्वतंत्रता से हो कर जाता है। सभी देशों को आर्थिक व सामाजिक विकास के समान अवसर मिलने चाहिए। एक शांतिपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए अनिवार्य है कि सभी को आर्थिक विकास से लाभ मिले और उन्हें अपने राजनीतिक भाग्य को तय करने का अधिकार दिया जाए। दरअसल किसी भी तरह की आर्थिक मंजूरी या सैन्य संकट, शांति या सुरक्षा का प्रचार करने की बजाए मानवतावादी संकट को जन्म देगा जिससे संघर्ष और असहमति में बढ़ोतरी होगी।

इस प्रकार, संदेह तथा अविश्वास को दूर करने के लिए आपसी सम्मान व समान स्तर पर रचनात्मक संवाद का प्रचार अनिवार्य है ताकि शांति व समत्व की स्थापना हो सके। आध्यात्मिक विचारकों व धार्मिक चिंतकों का यह कर्तव्य बनता है कि मानवजाति को संवाद, मित्रता व शांति का संदेश दें और इसके साथ ही न्याय, स्वतंत्रता और आपसी सहयोग का भी प्रचार हो।

परिचर्चा

डॉक्टर हाबाश : मैं डॉक्टर मुक्ति के संदर्भ को शामिल करना चाहूँगा कि कुरान में जिहाद का ज़िक्र है। हमने वे 17 तल खोजे हैं, जिनके आधार पर बताया जा सकता है कि हमें दूसरों के साथ कैसे पेश आना चाहिए। ये वैसे ही हैं जैसे कि ओल्ड या न्यू टेस्टामेंट या फिर किसी अन्य प्रज्ञा में बताए गए हैं। कुरान में लिखा है, 'आपको अविश्वासियों को माफ़ करना होगा, तुम्हें उनसे प्रेम करना होगा, जैसे न्यू टेस्टामेंट में जीसस अपने दुश्मनों से प्यार करने के लिए कहते हैं। दूसरा तल है, 'उन्हें माफ़ करो, उनके साथ अच्छाई का बर्ताव करो, अविश्वासियों पर हमला मत करो। तुम्हारा अपना मज़हब है और मेरे पास मेरा मज़हब है।' और इसके बाद आता है, 'अगर कोई तुम पर हमला करता है, तो तुम भी उस पर हमला कर सकते हो।' इसके बाद आपको दुश्मन से अपना बचाव करने की अनुमति मिल जाती है। इसके बाद अगर कोई अविश्वासी आप पर हमला करता है तो आपको भी उस पर हमला करना होगा। इसके बाद आता है, 'हमें अविश्वासियों और ईमान न लाने वालों से पूरी तरह से लड़ना है।', पहले से अंतिम तल तक आते–आते, इन पंक्तियों के अर्थ में क्या अंतर है।

हम अधिकतर पवित्र ग्रंथों में देख सकते हैं कि उनमें युद्ध से जुड़े वचन मिलते हैं, जिसमें निष्ठावान से आक्रमणकारी पर हमला करने को कहा गया है। ओल्ड टेस्टामेंट में भी ऐसी बहुत सी सामग्री है, 'ईश्वर मूसा से हमला करने और फलाँ–फलाँ नगरी को जलाने के लिए कहता है।' न्यू टेस्टामेंट भी कहता है, 'मैं तुम्हें शांति देने नहीं, तलवार देने आया था।' हमें इन सभी पंक्तियों में छिपे अर्थ को जानना होगा। इन्हें दो तरीके से वर्णित किया जा सकता है। जिहाद या धर्मयुद्ध की व्याख्या, जब उन्होंने जिहादी मानसिकता और दूसरी व्याख्याओं के कारण, सारे इस्लामिक जगत पर हमला करने का निर्णय लिया। परंतु मैं साफ़ शब्दों में कहना चाहूँगा। सभी इस्लामी नेताओं का मानना है कि जिहाद से जुड़े सारे विचार तभी लागू होते हैं, जब आप युद्ध में हों या आप स्वयं को संकट में पाएँ। अगर आपके आसपास ऐसे लोग हैं, जो आपको मारना चाहते हैं तो आपको अपने बचाव का पूरा अधिकार है।

प्रधानमंत्री वान आख़्त : आपने शासन, जीवन शैली शांति तथा युद्ध के समय किए जाने वाले व्यवहार के विषय में बहुत अच्छा वर्णन किया है।

प्रश्न : यहाँ तक कि युद्ध के समय में भी हमारे पास तथाकथित रेड क्रॉस संधिपत्र संधियाँ आदि होती हैं जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय मानवतावादी क़ानून कहते हैं। सादा शब्दों में, इसमें बताया गया है कि जब आप युद्ध में हों तो आपका आचरण कैसा हो, आप दूसरे देश को अपने वश में करें तो आपको कैसे पेश आना होगा। युद्ध के दौरान भी सब कुछ करने की छूट नहीं होती, यहाँ तक कि जब सामने वाला उचित रूप से पेश न आ रहा हो, तो भी उसे सब कुछ करने की छूट नहीं होती।

डॉक्टर हाबाश : मैं सारे युद्धों के विरुद्ध हूँ। मैं तो इसमें विश्वास ही नहीं रखता। ये सभी युद्ध अन्याय का ही रूप हैं। इस्लाम में युद्ध के नियम और प्रणाली भी अंतर्राष्ट्रीय नियमों व क़ानूनों के अनुसार ही हैं। सिर काटना, गले रेत देना और गाँवों को जला देना, किसी भी धर्म में नहीं आता। सभी इस्लामी कानूनों के अनुसार ऐसी किसी भी अवस्था को गैर–कानूनी कहा जाना चाहिए। जब मुहम्मद ने सिपाहियों को मदीना भेजा तो उन्होंने कहा, "औरतों को मत मारो। बच्चों को मत मारो, धार्मिक नेताओं को मत मारो, तुम्हें केवल उन्हें मारने का अधिकार है, जो तुम पर हमला करते हैं।"

डॉक्टर अल सालेम : सभी जानते हैं कि इसाई धर्म और इस्लाम में पवित्र युद्ध हुए हैं और ईसाई, इतिहास में मुसलमानों से कहीं अधिक रक्तपिपासु माने जाते हैं। उन्होंने चर्च को सरकार से अलग कर दिया, वे बदलने लगे और धर्म को युद्ध या ईसा के नाम पर किए जाने वाले धर्म से जोड़ दिया। हम मुसलमानों को कुरान में स्पष्ट आदेश दिए गए हैं कि हमें सभी गैर–मुसलमानों से लड़ना है। यह कुरान के अंतिम 17वें दरजे में कहा गया है। इस्लाम के तीन पक्ष हैं : मदीना में कोई लड़ाई नहीं, मक्का में अपने बचाव के लिए लड़ो पर इसके

बाद वे सबसे लड़ने का आदेश देते हैं। इस तरह हर मुस्लिम के लिए यह साफ़ है कि अंतिम आदेश, पहले के सारे आदेशों को रद्द कर देता है। यदि हम समस्या को हल करना चाहते हैं तो हमें पूरी ईमानदारी से बात करनी होगी। हमारी समस्या को ढकने से कुछ नहीं होगा, जिसके बारे में सब जानते हैं।

प्रोफ़ेसर सैकल : मैं डॉक्टर अल सालेम से पूरी तरह से असहमत हूँ। किसी भी धर्मशास्त्र की तरह, यहाँ भी अनेक व्याख्याएँ और विश्लेषण हो सकते हैं, जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि आपको कौन सा नज़रिया सिखाया गया है। यह न भूलें कि कुरान में सातवीं सदी के लोगों की मानसिकता को संबोधित किया गया है। अब हालात बदल गए हैं। पाठ्य महत्वपूर्ण है परंतु अब हमें इसे बदले हुए समय और परिस्थितियों के आधार पर लागू करना होगा। इस तरह इस्लाम आज भी एक गतिशील धर्म के रूप में अपनी पहचान बनाए हुए है। इस्लाम की संकीर्ण मान्यताओं को मानने व उन्हें लागू करने की पहल ही, न केवल मुसलमानों व पश्चिमी जगत के बीच बल्कि मुसलमानों के बीच भी आपसी तनाव और संघर्ष के महत्वपूर्ण स्त्रोतों में से एक रही है। हमें इससे ही सही मायनों में छुटकारा पाना होगा।

राष्ट्रपति ओबासंजो : हममें से कुछ लोग केवल तमाशबीन नहीं हो सकते क्योंकि हम लोग ही प्रभावित हैं। मैं ऐसे देश से हूँ जिसमें आधी आबादी मुसलमानों की और आधी ईसाईयों की है। यह बहुत महत्व रखता है कि वे आपसी मतभेद को सुलझाएँ क्योंकि यह मेरे और मेरे जैसे अनेक देशों को प्रभावित करता है। अनेक देश ऐसे हैं जिनमें बहुसंख्यक मुस्लिम समुदाय में बड़ी संख्या में ईसाई शामिल हैं या बहुसंख्यक ईसाई समुदाय में बहुत अधिक संख्या में मुसलमान शामिल हैं। दोनों ही पक्षों की ओर से संवाद होना चाहिए। अगर आप कुरान का संदर्भ देते हैं कि 'तुम्हें विश्वास न करने वालों से लड़ना चाहिए', तो जहाँ तक मुसलमानों का सवाल है, मैं उनके लिए एक अविश्वासी हूँ, एक ईसाई हूँ। जैसा कि मैंने कल भी बताया कि कई परिवारों में तो ऐसा भी है कि दो सगे भाईयों में से, एक भाई मुसलमान है और एक भाई ईसाई है। मेरे अनुसार मुस्लिम भाई की व्याख्या यही है कि भाई रक्त के नहीं, धर्म के आधार पर होते हैं और मेरा मुसलमान भाई मेरे साथ जिहाद कर सकता है। इस तरह आपको इसका हल निकालना ही होगा क्योंकि यह एक मुद्दा बना रहेगा, और विशेष रूप से अफ्रीका के देशों के लिए तो है ही।

डॉक्टर मेट्टानंडो : मैं अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक के संबंध में डॉक्टर मुक्ति और प्रोफ़ेसर सैकल से एक सवाल पूछना चाहता हूँ। मैं एक बिंदु उठाना चाहूँगा कि तिब्बत में, जब भिक्षु और भिक्षुणियाँ चीन के विरुद्ध आवाज़ उठा रहे थे, तो उन्होंने आत्म–बलिदान का मार्ग चुना। उन्होंने स्वयं को हानि पहुँचाई। यहाँ अल्पसंख्यक बौद्ध, बहुसंख्यक सत्ता, चीन की ताकत से लड़ रहे थे। परंतु दूसरी ओर, जब बौद्ध बर्मा में बहुसंख्यक थे, तो उन्होंने

आक्रामक रवैया अपनाया और यहाँ तक कि मुसलमानों की हत्या भी की। क्यों? क्या विभिन्न धर्म भिन्न–भिन्न मूल्य रखते हैं?

डॉक्टर कोशरू : वैश्वीकरण के इस युग में, धर्म समाज को सामाजिक एकता देने के लिए लौटा है, और यह समुदाय को सार्थकता प्रदान करने में भी अहम भूमिका निभा रहा है। विश्वास और जुड़ाव और ईश्वर में विश्वास, ये चीज़ें लोगों को निकट लाएँगीं। परंतु जुड़ाव से समस्या हो सकती है। हम इसी का सामना कर रहे हैं। पश्चिम और इस्लाम के बीच समस्या है, और इनके बीच का रचनात्मक संवाद, मुस्लिम समाज को धर्म–निरपेक्ष बनने के लिए नहीं कह रहा। ऐसा करना प्रतिकूल होगा, परंतु इस समस्या का अधिक व्यावहारिक और उपयुक्त हल यह हो सकता है कि इस्लामिक जगत में प्रजातांत्रिक नियमों का प्रचार किया जाए।

जहाँ तक जिहादी नज़रिए का प्रश्न है, हम इस बात से निराश हैं कि धर्मांध दल दूसरों को अविश्वासी या क़ाफ़िर मानते हैं। उन्होंने सुधारवादियों के लिए सभी दरवाज़े बंद कर दिए हैं और अपने पाक ग्रंथ को पूरी तरह से समझे बिना, उस पर आचरण कर रहे हैं, वे बदलती स्थितियों व समय को ध्यान में नहीं रखना चाहते। ऐसा केवल पाठ्य के विश्लेषण या व्याख्या के साथ ही नहीं है, वे दूसरे मुसलमानों और गैर–मुसलमानों को भी नास्तिक मानते हैं और जन्नत का वादा करके, लोगों के जीवन को ज़हन्नुम बना रहे हैं। वर्गीय हिंसा तथा अन्य लोगों की हत्या, इसी मानसिकता के भयंकर परिणाम हैं। और हमारे क्षेत्र में यही मानसिकता व्याप्त हैं। धर्म के नाम पर असंख्य हत्याएँ हो रही हैं। यह बहुत ही संकटपूर्ण स्थिति है।

धर्म का प्रयोग राजनीतिक साधनों के लिए किया जा रहा है फिर भी धर्म, शांति व संवाद के लिए अहम भूमिका निभा सकता है, यह अपने ही धर्म तथा दूसरे धर्मों को मानने वालों के बीच आपसी शांति व सद्भाव विकसित कर सकता है। हमारे धर्म में, मित्रता और परस्पर सम्मान का प्रचार करने वाले संवाद का प्रचार किया जाता है। धर्म को नकार कर, आतंक या हिंसा से नहीं बचा जा सकता, जनता को प्रजातांत्रिक नियमों के प्रति वचनबद्ध होना होगा।

रब्बी डॉक्टर रोसन : जिहाद और अन्य विषयों पर आज के सत्र में बहुत सारी जानकारी मिली। मैं यहाँ एकमात्र यहूदी हूँ और इन सभी चर्चाओं को सुन कर मुझे आत्म–विश्लेषण, अपने प्रति ईमानदार बने रहने के संघर्ष तथा सत्य को पाने के संघर्ष का महत्वपूर्ण नियम स्मरण हो आया। सभी धर्मों की पहल अलग होती है। ईसाई धर्म में मिशन की भावना सर्वोपरि है। इसका अर्थ है कि मुझे इस संदेश को दूसरों तक भी ले जाना है। दूसरे धर्मों तक भी पहुँचाना है किंतु इसके साथ ही इसे संतुलित भी किया गया है, कहा गया है कि हम ऐसा करते हुए मानवीय रूप से, दूसरों की भावनाओं का ध्यान रखेंगे और इसी तरह लोगों को सेवा व प्यार से प्रभावित करेंगे।

तो इस तरह हमारे पास अलग–अलग मॉडल होते हैं। आपके पास ये हमेशा से रहे हैं, जैसे आपके पास हमेशा एक तार्किक और एक रहस्यमयी पहल रहती है। इसके अलावा आपके पास राजनीतिक पहल भी होती है, राजनीति भी अपनी भूमिका अदा करती है। सभी के बिंदुओं को सुनते हुए, मेरे मन में एक बात आई कि अगर जिहाद को सही मायनों में आत्म–विश्लेषण के तौर पर देखना है तो हमें दूसरे के नज़रिए से देखना होगा।

दरअसल, कल, आदरणीय निफन ने कहा, "इन सबमें प्रेम की अवधारणा कहाँ है? बाइबिल में लिखा है, 'पड़ोसी से उसी तरह प्यार करो, जैसे तुम अपने–आप से करते हो।' और न्यू टेस्टामेंट में शामिल करते हुए, इसे लिखा गया, 'अपने शत्रु को प्यार करो।' किसी को प्रेम करने का आदेश नहीं दे सकते। आप किसी से प्यार करने को नहीं कह सकते। आप उन्हें प्रेम करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। और मैं आशा करता हूँ कि वे ऐसा करेंगे। और वस्तुतः, मूल हिब्रू में नहीं कहा गया, 'पड़ोसी से उसी तरह प्यार करो, जैसे तुम अपने–आप से करते हो।', उसमें लिखा है, 'पड़ोसी को अपना प्यार दिखाओ क्योंकि वह भी तुम्हारे जैसा/जैसी है।' हम सभी एक ही स्त्रोत की संतान हैं। इस चर्चा में, मैंने जाना कि ऐतिहासिक कारणों से, जिस संसार में हम जी रहे हैं, उसके अनेक हिस्सों में विशुद्ध आत्म–विश्लेषण का अभाव पाया जाता है, परंतु इस्लामिक जगत सहित, दूसरे के नज़रिए को देखने की अयोग्यता भी शामिल है।

उदहारण के लिए, मैं यहाँ थोड़ा विवादित होते हुए कहना चाहूँगा कि मैं मिडिल ईस्ट के संघर्ष से बहुत व्यथित हुआ हूँ और इसके साथ ही फिलिस्तीनी व इज़रायली संघर्ष ने भी मुझे दुख दिया है। इस दुख के साथ, मैं शांति और रियायत के पक्ष में हूँ। परंतु तथ्य यही है कि हर कहानी पूरी तरह से स्पष्ट नहीं होती। कोई भी कहानी एकतरफ़ा नहीं होती। मिडिल ईस्ट केवल होलोकॉस्ट की उपज नहीं है। 'इस्लाम से भी पहले वहाँ कौन था?', 'वहाँ क्या रंग थे?', 'वहाँ की जटिलताएँ क्या थीं?'; मिडिल ईस्ट इनकी उपज है और इसलिए सादा शब्दों में कह सकते हैं, 'मुझे आक्रमणकारी से अपना बचाव करना ही चाहिए।' शायद आक्रमणकारी, पहला आक्रमणकारी नहीं था।

शायद हमारा यही भाग्य है कि हम आपस में ही लड़–मरें। परंतु हमें इस स्याह–सफ़ेद में देखने की प्रवृत्ति से लड़ना होगा। ऐसा आपसी प्रेम और सद्भाव से ही संभव है। मैं ईमानदारी से कह सकता हूँ कि इस कक्ष में आज जितने भी लोगों से मिला, जितने भी लोगों की बातें सुनीं, उनमें से एक भी ऐसा नहीं लगा जिसके प्रति मैंने स्नेह का अनुभव न किया हो। स्नेह, क्योंकि मुझे लगता है कि ये वे लोग हैं जो सही रास्ते और समाधान खोजने की कोशिश कर रहे हैं। यदि हम इसे पाना चाहते हैं तो निफन के शब्दों में, केवल प्रेम और इसका प्रदर्शन ही एकमात्र उपाय है। इसे करने का अर्थ होगा कि हम हमें अपने साथ–साथ

दूसरों के दृष्टिकोण भी समझने होंगे। यदि हम यथासंभव निकट आ सकें तो हमारे लिए और उपाय खोजना भी सरल होता जाएगा।

प्रधान मंत्री क्रेटियन : मैं एक विषय पर सबका ध्यान दिलाना चाहूँगा। जब मैं इस परिचर्चा को सुन रहा था तो मैंने पाया कि कोई भी धर्म और राजनीति को अलग करने के बारे में बात नहीं कर रहा। मैं ऐसे समाज से आया हूँ, जहाँ आज से सौ वर्ष पूर्व, धर्म राजनीति पर हावी था। अब मेरे देश में राज्य और गिरजे के अस्तित्व को अलग कर दिया गया है। और मुझे आप सबकी बातें सुन कर लगा है कि धर्म ही समाज है। राजनीति प्रक्रिया पर धर्म का प्रभाव देखा जा सकता है। जिससे उसका दुरूपयोग बढ़ा है। मेरे अनुसार किसी व्यक्ति की आध्यात्मिकता उसकी निजी होती है। यह सर्जक के प्रति आपकी अपनी निष्ठा है। यह महत्वपूर्ण है परंतु यदि इसे राजनीतिक क्षेत्र में साकार किया जाए तो संघर्ष पैदा हो सकता है और आज मैंने चर्च को राज्य से अलग करने के माँग के बारे में नहीं सुना। जब आपके पास किसी भी धरती पर ऐसा सशक्त विभाजन हेाता है तो यह बहुत ही कठिन होता है। यही नाइजीरिया के राष्ट्रपति की समस्या है, जहाँ धर्मों पर राजनीति के वर्चस्व से समस्याएँ पैदा हो रही हैं। कोई भी धर्म या विश्वास, इस बात को मानने से कैसे इंकार कर सकता है कि किसी राज्य कीा संचालन किसी विश्वास या आस्था से नहीं जुड़ा होता।

प्रोफ़ेसर चांग : मेरा मानना है कि हमें धार्मिक मान्यताओं से मुक्त वैश्विक नीति की बात करनी चाहिए। परंतु लगता है कि आज सुबह की परिचर्चा ने केवल इतिहास के बारे में बात की है या हम यह जानने का प्रयास कर रहे हैं कि आज क्या हालात हैं और उसके बाद ही कोई व्याख्या की जाएगी? इतिहास की सहायता से यह जानना रोचक हो सकता है कि हम वर्तमान अवस्था तक कैसे आए और इसी संदर्भ में हमें जिहाद, मुजाहिदीन आदि के संदर्भो को देखना होगा। यह जानना होगा कि उनका विश्लेषण कैसे किया गया, उनका उपयोग, सदुपयोग या दुरूपयोग किस रूप में किया गया।

हम विएना में हैं इसलिए मैं 1530 ई. की बात करता हूँ, जब ओटोमन दलों ने हार के बाद इस जगह को छोड़ा। उस समय भी ओटोमन सुलतानों ने जिहाद शब्द का प्रयोग नहीं किया, परंतु गज्जियों की प्रणाली को अपनाया। गज्जी, इस्लाम के मोर्चों को बढ़ाने के लिए युद्ध करते थे। आपकी परिभाषा में, मुझे नहीं लगता कि उस समय वे इस्लाम की सीमाओं को बढ़ा रहे थे। परंतु वे सुलतानों के लिए बहुत उपयोगी रहे। जिनजियांग भी ख़बरों में रहा। उसने इस्लाम को अपनाया क्योंकि लोगों के एक दल ने 11वीं सदी में जिहाद छेड़ दिया था। वर्तमान तुर्किस्तान और उजबेकिस्तान के लोगों ने पूर्व पर धावा बोल दिया। उसी तरह के लोग बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म व अन्य धर्मों में विश्वास रखते थे। परंतु 11वीं से 15 वीं सदी के बीच हुए जिहाद ने जिनजियांग को मुस्लिम बहुल बना दिया। तो इस तरह हम देख सकते हैं इतिहास के साथ–साथ धार्मिक मान्यताएँ भी तय करती हैं कि देश को कैसे चलाया जाएगा।

राष्ट्रपति ओबासंजो : मेरे अनुसार धर्म केवल आपको यह नहीं सिखाता कि आपको मनुष्यों के बीच कैसे जीना चाहिए, भले ही उनका सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक झुकाव कोई भी क्यों न हो, इसके अतिरिक्त वह आपको धर्म की आज्ञापालन का साधन भी देते हैं। इस्लाम, ईसाई और यहूदी धर्म में मृत्यु के बाद जीवन को माना जाता है और आपके द्वारा जिए गए जीवन के आधार पर ही आपकी परख़ की जाती है। हिंदू व शिंटो धर्म में आप मरने के बाद, दोबारा आते हैं और अपने पिछले जीवन के कर्मों के अनुसार ही आपको जन्म मिलता है और आपको फिर से धर्म के अनुसार चलने का अवसर दिया जाता है। यदि आप ऐसा नहीं करते तो आप दंड के भागी होते हैं। मेरे लिए यह सही है और शायद दूसरों के लिए भी उचित होता होगा।

परंतु जब आप आ कर यह कहते हैं कि आपका धर्म मुझे क़ाफ़िर मानता है और आप अपने ग्रंथ के अंतिम निर्देश के अनुसार मुझसे लड़ना चाहते हैं तो फिर मेरे लिए यह चिंता का विषय हो जाता है। उस क्षेत्र के लिए, उस देश के लिए और उस स्थान के लिए चिंता का विषय हो जाता है, जहाँ से मैं हूँ। फिर यह वैश्विक रूप से चिंता का विषय हो जाता है। मेरा मानना है कि जब हज़रत मुहम्मद ने ऐसी बात कही होगी, उस समय की परिस्थितियाँ अलग थीं और तब से अब के हालात में बहुत बदलाव आ चुका है। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि वे वर्तमान युग में जीवित होते तो निश्चित रूप से, उनकी बातें और परामर्श ये न होते।

जैसा कि मैं अपने ईसाई भाईयों से कहता हूँ, यदि आज ईसा होते, तो वे गधे पर बैठ कर येरुशलम जाने की बजाए हैलीकॉप्टर से गए होते। हमें इसी परिवर्तन को ध्यान में रखना है। मेरी चिंता यह है कि यदि कुरान के इस हिस्से पर ग़ौर किया गया कि ईमान न लाने वालों के साथ जिहाद होना चाहिए, तो अफ्रीका के बहुत से देशों और ख़ासतौर पर पश्चिमी अफ्रीका के लिए संकट पैदा हो जाएगा। फिर वहाँ शांति स्थापना नहीं हो सकेगी। और हमें अपने–आपको यह सोच कर छलना नहीं चाहिए कि मेरे जैसे लोग, दोनों पक्षों में गंभीर बातचीत के लिए कोई अहम भूमिका नहीं निभा सकते। मुझे लगता है कि आप हमारी सहायता कर सकते हैं।

डॉक्टर अल सालेम : पहले, कुरान और सुन्ना की संयमित समझ–बूझ, धार्मिक नेताओं के मध्य युग से वर्तमान में ला रही है और वे इन दोनों को ही आधुनिक अर्थों में समझेंगे। अगर एक नई समझ ही पैदा करनी है तो इन धार्मिक नेताओं की आवश्यकता ही क्या है? नया जीवन है, सब कुछ नया है और अर्थशास्त्री व इंजीनियर इन धार्मिक नेताओं की तुलना में कहीं गहरी समझ रखते हैं। इस ग़लतफ़हमी की समस्या यह है कि हमारे पास चर्च व पादरी की तरह ऐसा कोई संदर्भ नहीं, जिसका सभी अनुसरण कर सकें। इस्लाम, में सभी धार्मिक नेता बन सकते हैं। यही हमारी समस्या है। हमारे पास चौदह सौ सालों का इतिहास है और यह बदल रहा है। यदि वे संदर्भ के आधार पर समझने लगे, तब तो प्रत्येक अपने हिसाब से

ही धर्म को बदल देगा। हर सेना, अपने ही संदर्भों की समझ के अनुसार लड़ती है। फिर कोई नियम नहीं रहते। इसलिए हमें अपने पाठ्य पर ही बने रहना होगा।

प्रोफ़ेसर सैकल : क्या आप कहना चाहते हैं कि सभी को उस पाठ्य पर केंद्रित रहना चाहिए, जिसे सातवीं सदी में, सातवीं सदी की अवस्थाओं के अनुसार लिखा गया, या हमें उस पाठ्य को, बदलते समय और हालात के साथ, इस्लाम के लिए लागू करना चाहिए? पैगंबर ने बदलते समय और हालात के हिसाब से इस्लाम को बदलने के लिए, उसके अनुयायियों के हाथों सौंपा था।

———————————————

5. नीति शास्त्र की पुनः प्राप्ति और निर्णय–निर्धारण में भूमिका

सत्र के अध्यक्ष : एच.इ. जॉर्ज वसीलियो

साइप्रस के भूतपूर्व राष्ट्रपति

1987 में, जब इंटर एक्शन परिषद ने प्रमुख धर्मों के लिए एक आम वैश्विक नीतिशास्त्र की अवधारणा का प्रचार आरंभ किया, तब से आज तक, यह अवधारणा सर्वसम्मत रूप से स्वीकार की जाने लगी है। कठिनाई यही है कि इसे राजनीतिक और आर्थिक निर्णय–निर्धारण में व्यावहारिक तौर पर कैसे लागू किया जाए।

पहले परिचयकर्ता, प्रोफ़ेसर किर्क हैन्सन ने इस जटिलता से भरी कठिनाई का वर्णन किया कि किस प्रकार इन सामान्य नीतियाँ को राजनीतिक और आर्थिक निर्णय–निर्धारण का मार्गदर्शन करना चाहिए। व्यवसाय में लाभ व नीति का संघर्ष निरंतर बना रहता है। कार्पोरेशन चाह कर भी एक नीति परक स्तर लागू नहीं कर पाते, प्रतियोगी गैर–लाभ, वित्तीय बाज़ार से आता दबाव आदि बाधाएँ बन जाते हैं। वे चाह कर भी मानवीय हितों के लिए कुछ नहीं कर पाते। सरकार में, तीनों पक्षों का संघर्ष सदा बना ही रहेगा – मानवतावादी, राष्ट्रीय व नेताओं के स्व–हित साधने की इच्छा। वक्ता के मन में यह प्रश्न था कि क्या कभी वास्तव में रानीति व अर्थशास्त्र में वैश्विक रूप से नीतिपरक आधार को लागू किया जा सकेगा? डॉक्टर मेट्टानंडो ने मरिगलसुत्त (थेरावद, दक्षिण बौद्धों द्वारा अभ्यास में लाई जाने वाली शुभ शकुन की प्राचीन अवधारणा) का वर्णन करते हुए नैतिकता की राष्ट्रमंडल अवधारणा का परिचय दिया। उन्होंने थाई सरकार के आगे प्रस्ताव रखा कि वे इसे नागरिक पहचान पत्र (सात वर्ष से अधिक आयु के प्रत्येक व्यक्ति को दिया जाता है) में लागू करें। उनका कहना था कि युवाओं तथा बच्चों को उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण के दौरान, उनकी स्वैच्छिक नीति परक गतिविधियों के लिए मान्यता दी जा सकती है।

एच.इ.शेख़ ए. अल–कुरैशी ने वित्तीय नीति शास्त्र पर अपने विचार रखे। हाल में ही उपजा, वैश्विक वित्तीय संकट, वित्तीय उद्योग में नीति संबंधी व्यवहार के पतन तथा ग्राहकों के प्रति किसी भी विश्वास संबधी उत्तरदायित्व के अभाव की देन था। लोभ के कारण हम दूसरों से वस्तुओं की तरह पेश आते हैं और मानवता को मानने की बजाए उनका शोषण करते हैं, उनके लक्ष्यों को अनदेखा कर देते हैं। महान धर्म वित्तीय क्षेत्र की भी सहायता कर सकते हैं। नीतियाँ अनिवार्य थीं और बुनियादी नीति संबंधी नियम घरों तथा स्कूलों में पढ़ाए जाने चाहिए, क्योंकि नियम और कानून, व्यक्तिगत निष्ठा का विकल्प नहीं हो सकते। उन्होंने बल दिया कि नैतिक मूल्यों के उत्थान से ही समाजों में फैली सांस्कृतिक निरंकुशता तथा विभाजन को दूर किया जा सकता है।

डॉक्टर हमज़ा अल सालेम ने प्रस्ताव रखा कि इस्लामी नीतिशास्त्र को मुक्त रखा जाना चाहिए और इस्लामी सरकारी नेता उन्हें निर्णय–निर्धारण प्रक्रिया में शामिल न करें। उन्होंने तर्क रखा कि इस्लामी नीति शास्त्र कुछ विशेष वर्जनाओं व सीमाओं से बँधे हैं और हिंसा व रक्तपात को दूर करने के लिए बनी, आम मानवीय नीति से सामंजस्य नहीं रखते। यदि इस्लामी नीति शास्त्र को इन पाबंदियों से मुक्त करना है तो धर्म की उन बातों को ख़ारिज़ करना होगा, जिन्हें सदियों से धर्म का हिस्सा बनाया जाता रहा है। इससे वह धार्मिक ढाँचा नष्ट होगा, जो आतंकियों को प्रेरित कर रहा है। उन्होंने तर्क दिया कि वहाबी पुकार के माध्यम से, मुस्लिम जगत में आने वाले दोषों में सुधार किया जा सकता है।

इस परिचर्चा के दौरान अनेक वक्ताओं ने यह इच्छा प्रकट की कि वे नीति को अभ्यास में लाना चाहते हैं। राजनीतिक नेताओं ने कहा कि केवल नीति ही पर्याप्त नहीं और उन्हें कायदे–कानून की मदद भी लेनी होगी क्योंकि मनुष्य तो सदा से ही लोभी रहा है और की प्रवृत्ति बदली नहीं जा सकती। राजनेता अक्सर दबाव में रहते हैं। रिश्वत के उन मामलों पर भी विस्तार से चर्चा हुई जिनमें अपना कर बचाने के लिए रिश्वत देने वाले व्यवसायों को दंडित नहीं किया गया। कुछ सरकारें वित्तीय उद्योगों के नियमन की मंजूरी कभी नहीं देंगी, उदाहरण के लिए, उन्हें भय रहता है कि इससे उनके शीर्षस्थ आर्थिक क्षेत्र को हानि हो सकती है। उन्होंने इस विषय में विचार किया कि नेताओं पर अधिक दबाव कैसे डाला जा सकता है कि वे और अधिक नैतिक रूप से पेश आएँ। एक ईमानदार किंतु सफल रोल–मॉडल चाहिए, जिसके लिए शिक्षा बहुत महत्व रखती है। इसके अलावा मीडिया, कानूनी संस्थाओं व विज्ञानों के बीच नीति की एक गहरी समझ हो ताकि कार्पोरेशन और नेता सार्वजनिक रूप से सबके सामने आ सकें। पारदर्शिता की आवश्यकता पर भी बल दिया गया।

निराशावादी स्वरों को प्रत्युत्तर देने के लिए यह आशा प्रकट की गई कि कुछ व्यक्तियों ने पिछले सुधारों को व्यक्तिगत स्तर पर छोटी संस्थाओं में लागू किया है और अपनी

वचनबद्धता को लोगों के सम्मुख लाने में सफल रहे हैं, जो चरण–दर–चरण राजनीतिक एजेंडा को भी प्रभावित करने में सफल रहा है। इस तरह चेतना का निर्माण हो रहा था। नीति परक मसलों पर, सामूहिक स्वर में संवाद होते रहने चाहिए क्योंकि ये अपना ही महत्व रखते हैं।

सरकार व व्यवसाय के लिए एक वैश्विक नीति से नीति परक निर्णय–निर्धारण तक

पहले परिचयकर्ता : प्रोफ़ेसर किर्क हैन्सन,

कार्यकारी निदेशक, मरक्कुला सेंटर फॉर एप्लाइड एथिक्स,

सैंटा क्लारा यूनीवर्सिटी, केलिफ, यू.एस.ए.

परिचय

सत्र का यह पत्र नीति–परक निर्णय निर्धारण पर आधारित है, मेरी पृष्ठभूमि व्यवसाय तथा संगठनात्मक नीति शास्त्र में रोमन कैथोलिक प्रोफ़ेसर के रूप में रही। आने वाले पृष्ठों में मैं बताने वाला हूँ कि एक आम वैश्विक नीति को सहमति के बावजूद, व्यावहारिक तौर पर राजनीतिक व आर्थिक निर्णय निर्धारण पर लागू क्यों नहीं किया जा सकता।

वैश्विक नीति के प्रचार में इंटरएक्शन परिषद का नेतृत्व बहुत ही प्रभावशाली रहा। केवल परिषद ने ही नहीं बल्कि संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य संस्थाओं ने भी इस बात पर बल दिया कि सभी धर्मों के लिए एक सामान्य नैतिक कार्यक्रम खोजने और उसे लागू करने से अधिक महत्वपूर्ण एजेंडा कोई नहीं हो सकता। यह सारी मानवता के लिए एक उपकार होगा। भले ही 1987 में, परिषद द्वारा इस मुद्दे को उठाए जाने के समय यह एक मूल सुधारवादी विचार रहा होगा परंतु अब इसने व्यापक रूप से लोगों की सहमति प्राप्त कर ली है। किंतु इतना ही पर्याप्त नहीं और इसे इस बात का सूचक नहीं माना जाना चाहिए कि यह एक सरल कार्य है। हर धर्म और राष्ट्रीय संस्कृति के पास अपनी नैतिक आचार संहिता का पारंपरिक ढाँचा होता है। और कुछ धर्मों में, मेरे रोमन कैथोलिक धर्म सहित; कभी–कभी दुभाग्यपूर्ण रूप से विभिन्न वर्गों के लोगों के अधिकारों व क्षमताओं के बीच भेद किए हैं, भले ही वे गुलाम हों या फिर दूसरे धर्म से जुड़े लोग। सौभाग्यवश, कैथोलिक धर्म तथा ईसाई धर्म ने पिछली सदी में सार्वभौमिक नीति तथा नीति परक सुझावों व सभी लोगों की धार्मिक स्वतंत्रता के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ लिया है।

वर्तमान में, ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं, जिनमें विभिन्न धार्मिक परंपराओं से जुड़े धर्मशास्त्री आपस में संवादरत हैं ताकि धर्मों के परस्पर मतभेदों व सामान्यताओं को

समझ सकें, उनके धर्म व नीति संबंधी मान्यताओं को जान सकें। इस परिवेश में, परिषद के सलाहकार हैंस कुंग द्वारा तैयार किया गया दस्तावेज़ 'मानवीय उत्तरदायित्व की घोषणा', इस बात का प्रतीक रहा है कि सद्भावयुक्त जन क्या नहीं हासिल कर सकते। विविध परंपराओं से आए धार्मिक नेताओं की यह सभा, इसी विज़न और नज़रिए का प्रदर्शन करती है।

नीति परक नियमों से नीति निर्णयों तक जाने में जुड़ी आम समस्याएँ

हमें एक साझी वैश्विक नीति से इस समझ की ओर जाना होगा कि वह नीति किस प्रकार राजनीतिक व आर्थिक निर्णय–निर्धारण का मार्गदर्शन कर सकती है और यह अपने–आप में एक जटिल कार्य है। राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों में नीति परक चुनाव संदर्भों, उपलब्ध संसाधनों तथा उन राजनीतिक व आर्थिक ढाँचों की परिपक्वता पर निर्भर करते हैं, जिनमें उन्हें बनाया गया है। किसी राजनीतिक व आर्थिक निर्णय–निर्धारण से जुड़ी आचार संहिता को लागू करना असंभव नहीं किंतु कठिन तो है।

संदर्भ या प्रसंग को सबसे चुनौतीपरक कठिनाई माना जा सकता है। नैतिक चुनाव इस बात पर निर्भर करते हैं कि इस जटिल हालात में अच्छाई को कैसे पाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, किसी देश के अपने ही नागरिकों के मानव अधिकारों का हनन, इस बात पर निर्भर करेगा कि किस प्रकार की मध्यस्थता से हालात बेहतर होंगे। एक परिस्थिति में, दूसरे देश सशस्त्र मध्यस्थता कर सकते हैं, दूसरे, नियम–कानून लागू किए जा सकते हैं या तीसरी परिस्थिति में केवल मौखिक तिरस्कार करना ही पर्याप्त होगा। ठीक इसी तरह, यदि व्यवसाय में आर्थिक गिरावट आए तो वह छँटनी कर सकता है, कर्मचारियों को दूसरे काम का प्रशिक्षण दे सकता है या फिर उन्हें अवकाश दे सकता है। कुछ मामलों में यह स्थिति कुछ समय के लिए हो सकती है, कुछ मामलों में, कर्मचारियों की उसी काम में पुनः बहाली के कोई आसार नहीं दिखते।

दूसरी चुनौतीपूर्ण समस्या यह है कि कर्ता की क्षमता व साधन क्या हैं। संसार के दूसरे हिस्से में सैन्य मध्यस्थता या बार–बार होने वाले संघर्षों की स्थिति में ऐसा कर पाना असंभव हो सकता है। कोई व्यवसाय यह पा सकता है कि उसके पास अपने सभी कर्मचारियों को बनाए रखने या नए सिरे से, दूसरे काम के लिए प्रशिक्षित करने की क्षमता नहीं है।

तीसरी चुनौती, विकास की अवस्था ही है। जिस समाज में धनी लोग होंगे वह सभी कर्मचारियों को पर्याप्त वित्तीय सहायता प्रदान करते हुए, उनकी मदद करने को अपना कर्तव्य मानेगी किंतु यदि समाज ही निर्धन है या इतिहास में विकासशील अवस्था में है, तो उसके पास ऐसी प्रेरणा का अभाव होगा। कुछ कंपनियों ने भी इसी बात को माना है।

उनका कहना है कि वे भी कर्मचारियों के प्रति अपने नैतिक दायित्व को समझती हैं परंतु उनकी ओर से सहायता तो उसी स्थिति में दी जा सकती है, जब फ़र्म परिपक्व अवस्था में हो और अपनी ओर से सहायता देने की स्थिति में हो। इस चुनौती को प्रत्युत्तर देने के लिए कुछ नैतिक नियम व स्तर विकसित करने होंगे, जिन्हें कोई भी व्यवसाय या सरकार, अपने विकास की किसी भी अवस्था के बावजूद, मानने के लिए विवश हो, परंतु कुछ ऐसे स्तर भी होंगे जो उन्हें उनकी अधिक परिपक्व अवस्था में ज़िम्मेवार ठहरा सकें।

व्यावहारिक तौर पर नीति परक निर्णय–निर्धारण तथा रोमन कैथोलिक प्रयत्न

रोमन कैथोलिकवाद में पोप, बिशप की राष्ट्रीय इकाईयों व अन्य चर्च नेताओं ने, पैपल सोशल एनसाइक्लिकल्स व राष्ट्रीय पादरी संबंधी वक्तव्यों के माध्यम से नीति, राजनीति व अर्थव्यवस्था के लिए नैतिक परंपरा को लागू करने की उचित पहल की चर्चा की है। 1891 के, पहले ऐसे पोप पत्र 'रीरम नोवरम' को पोप लियो तेरहवें द्वारा जारी किया गया। हाल ही में, 2009 में पोप बैनेडिक्ट सोलहवें द्वारा ऐसा पत्र जारी किया गया। पोप फ्रांसिस 1 ने, 24 नवंबर 2013 को 'एवेंजिली गॉडियम' नामक प्रबोधन दिया, इसमें अनेक राजनीतिक व आर्थिक प्रश्नों पर चर्चा की गई थी। रोमन कैथोलिक की नैतिक परंपरा के अनुसार, प्रबोधन को पोप पत्र के समान मान्यता नहीं दी जाती। यूनाईटेड स्टेट्स में, नेशनल कैथोलिक बिशप संगठन ने अस्सी के दशक में दो उल्लेखनीय पोप पत्र जारी किए जिनमें इस सभा से जुड़े विषयों पर चर्चा की गई थी। परमाणु प्रसार व शांति तथा आर्थिक न्याय। हालाँकि रोमन कैथोलिक चर्च में केंदीकरण और विकेंद्रीकरण की परिचर्चा के दौरान, वेटिकन ने यू.एस. व अन्य नेशनल बिशप कांफ्रेंस द्वारा उठाए गए ऐसे वक्तव्यों को दबा दिया।

पोप की ओर से आने वाले सामाजिक पत्रों की श्रृंखला में कई प्रमुख विषयों को स्थापित किया गया, जिनमें प्रत्येक मनुष्य का जीवन और गरिमा, परिवार का महत्व, समुदाय व सबकी भागीदारी; मानव अधिकार व दायित्व; निर्धनों व असहाय जन की सहायता; श्रम का मोल और कारीगरों के अधिकार; एक वैश्विक जगत में सबके साथ एकता; और भौतिक पर्यावरण के प्रति देख–रेख और सम्मान का भाव शामिल है। इन सभी प्रपत्रों में एक नियम है, पूरक या गौण; इसके अनुसार निर्णय और उनका क्रियान्वयन यथासंभव स्थानीय स्तर पर होना चाहिए।

पोप बैनडिक्ट सोलहवें द्वारा दिए गए पत्र में यह भी कहा गया है कि बाज़ार का अस्तित्व केवल उसके अपने लिए नहीं हो सकता और सारी मानवता की सेवा के लिए बाज़ार होना चाहिए। अमीर और गरीब के बीच की गहरी खाई पर चिंता प्रकट करते हुए पोप ने कहा

कि व्यावसायिक नेताओं को ऐसे निर्णय लेने चाहिए जो सभी अंशधारकों को लाभ पहुँचा सकें और उन्हें उपहार के नियम को ध्यान में रखते हुए, ऐसे आर्थिक ढांचे बनाने चाहिए कि सारी मानवता की सेवा हो सके। 2013 के प्रबोधन में, पोप फ्रांसिस 1 ने इस माँग पर बल दिया कि निर्णय निर्धारण के दौरान निर्धनों के हितों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए, उन्होंने बहिष्कार की अर्थव्यवस्था तथा धन की नई मूर्तिपूजा पर भी अपना खेद प्रकट किया।

आर्थिक नियमों में नीति परक निर्णयों का लागू करने से जुड़ी विशेष समस्याएँ

एक व्यवसाय नीतिशास्त्री होने के नाते, मैंने अपने पूरे जीवन में व्यवसाय निर्णय निर्धारण के समय, नीति परक नियमों को लागू करने की समस्या को संबोधित किया है। कई लोगों का कहना है कि व्यवसायों में प्रायः नैतिक मूल्यों की उपेक्षा करते हुए, लाभ बढ़ाने को ही वरीयता दी जाती है। यही तनाव वास्तव में है और समाधान करने के प्रयासों के बावजूद बना हुआ है।

नीति संबंधी व पूंजीवाद के इन मसलों को सुलझाने के लिए बहुत सारी एनजीओ व व्यवसायों द्वारा वैश्विक नीतियाँ अपनाई गई हैं, जो निश्चित वाणिज्यिक व्यवहारों को संबोधित करते हैं। इनमें, कर्मचारियों और वातवरण के लिए सप्लाई चेन स्तर, जल के प्रयोग व प्रदूषण से जुड़े वैश्विक पर्यावरणीय स्तर तथा भ्रष्टाचार आदि से लड़ने की वचनबद्धता शामिल है। यही आशा प्रकट की जाती है कि ये वैश्विक आचार संहिता तथा अन्य स्तर, वैश्विक व्यवसायों के सामने आ रही तीन बुनियादी समस्याओं को हल करेंगे।

पहली है प्रतियोगी दोष : व्यवसाय सहयोगी तथा विस्तृत नीति संबंधी तथा प्रबुद्ध व्यावसायिक अभ्यासों को अपना कर ही स्वयं को उत्तरदायी अनुभव कर सकते हैं और इस तरह वे स्वयं को प्रतियोगी क्षति से भी बचा सकते हैं। यथार्थ यही है कि कोई स्वैच्छिक वैश्विक आचार संहिता इस समस्या को हल नहीं कर सकती। कहीं न कहीं, कोई व्यवसाय पैसे बचाने के लिए, इन नियमों से खिलवाड़ करने को प्रस्तुत रहेगा। कोई न कोई देश कानूनी स्तर पर मात खाएगा तो कुछ कंपनियाँ और भी नीचे स्तरों पर उतर सकती हैं।

वित्तीय बाज़ारों का गहरा दबाव दूसरी समस्या कहा जा सकता है, जो निरंतर व्यावसायिक लाभों की मांग करते रहते हैं। कई व्यावसायिक नेताओं का मानना है कि यदि वे निर्णय–निर्धारण में नीति को भी ध्यान में रखते हैं तो यह उन्हें दीर्घकालीन लाभ पाने में सहायक होती है, वे अल्पकालीन प्रदर्शन को उच्च स्तरों पर बनाए रखने के विषय में

निर्णय लेते समय भ्रमित हो जाते हैं। उनके सामने मानवता की सेवा, अंशधारकों के हित तथा अर्थव्यवस्था आदि कई मुद्दे होते हैं।

कुछ देशों में इस विषय में कानून संबंधी अभाव आड़े आता है। यह तीसरी समस्या है। व्यावसायिक प्रबंधक ऐसे निर्णय नहीं ले पाते जो मानवता के लिए उपयोगी हो सकें। वे लोग बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स और प्रबंधकों के माध्यम से अंशधारकों के हितों को ही ध्यान में रखते हैं। हालाँकि व्यावसायिक या नीति परक फ़ैसलों के लिए थोड़ी गुंजाईश है, परंतु उन्हें भी अंशधारकों के दीर्घकालीन हितों से जोड़ा जाता है।

चौथी समस्या यह है कि अधिकतर कंपनियों ने माना है कि वैश्विक नीति को ले कर कोई सर्वसम्मति नहीं है। कंपनियों को अलग–अलग राष्ट्रीय संस्कृतियों की ओर से विभिन्न अपेक्षाओं का सामना करना पड़ता है जिससे संघर्ष पैदा होता है। ऐसी स्थिति में कई कंपनियाँ अपनी ओर से सारे दायित्व त्याग कर, केवल कानूनी मामलों पर ही ध्यान देने लगती हैं। अधिकतर वैश्विक कार्पोरेशन में कमोबेश यही नीति देखने में आ रही है।

वैश्विक स्तर पर नीतिपरक निर्णय–निर्धारण में प्रगति कैसे हो

इस निबंध में, मैंने पहले दर्जनों और सैंकड़ों स्वैच्छिक वाणिज्यिक आचार संहिता के नियमों का अध्ययन किया। इनके आधार पर प्रबंधक यह कह सकते हैं कि ये अंशधारकों के दीर्घकालीन हितों की रक्षा व बचाव का एक हिस्सा हैं।

कोई भी बल प्रयोग, राजनीतिक या आर्थिक मामलों में, वैश्विक नीति या धर्म संहिता को, निर्णय–निर्धारण प्रक्रिया में शामिल नहीं कर सकता। परंतु ये नियम तथा अन्य विकास इस प्रक्रिया में योगदान अवश्य दे सकते हैं।

यदि मानव अधिकार, पर्यावरणीय प्रदूषण, भ्रष्टाचार तथा उपभोक्ता अधिकार आदि मामलों में वैश्विक आचार संहिता को लागू करना है तो इन क्षेत्रों से जुड़े नियमों व कानूनों को सार्थक बनाने के लिए वैश्विक आंदोलन करना होगा। संयुक्त राष्ट्र, ओ. ई. सी. डी. तथा प्रांतीय आर्थिक एसोसिएशनों द्वारा ऐसे अभियानों को प्रोत्साहित किया जाता है। इनमें से संयुक्त राष्ट्र का 'ग्लोबल कांपैक्ट' सबसे सश्क्त पहल रहा है, जिसे आरंभ हुए दस वर्ष हो गए हैं जिसने कार्पोरेट व्यवहार के लिए दस नियम दिए हैं और हज़ारों कंपनियों व एसोसिएशनों को हस्ताक्षरकर्ताओं के रूप में साथ जोड़ा गया है। कुछ मामलों में तो यह और भी अधिक प्रभावशाली रहा जैसे अधिकतर औद्योगीकृत देशों में भ्रष्टाचार–विरोधी स्तर के रूप में मान्यता पाना। जैसा कि अपेक्षित है, नियमों का स्तरों के रूप में परिवर्तन बहुत ही समय ले रहा है और अनियमित भी है।

व्यवसायों को यदि इन नियमों के लिए कानूनी तौर पर बाध्य किया जाए तो वे बेहतर व्यवहार करेंगे और मानव कल्याण की ओर ध्यान दे सकेंगे, इसी तथ्य को मान्यता देने के लिए यू.एस. तथा अन्य देशों में 'कार्पोरेट कांपलियंस' नामक महत्वपूर्ण आंदोलन चलाया गया। इसे कई बार कार्पोरेट एथिक आंदोलन के नाम से भी जाना जाता है, परंतु वह नाम थोड़ा भ्रामक है। इस आंदोलन के अनुसार कार्पोरेट जगत के अभ्यास के लिए कई नियम शामिल हैं जैसे – कंपनी की आचार संहिता को अपनाना, शैक्षिक प्रयास, खोजबीन और अनुशासन से जुड़ी प्रविधियाँ। इन आचार संहिताओं पर बड़े कार्पोरेशनों द्वारा चर्चा हुई और इन्हें अपनाया भी गया। हालाँकि ऐसे प्रयासों के बावजूद कुछ लोगों का कहना है कि कार्पोरेट जगत की मनमानी बढ़ती ही जा रही है।

यू.एस. तथा अन्य देशों में जब से बोर्ड तथा व्यावसायिक प्रबंधकों की योग्यता पर कानूनी सीमाएँ लगाई गई हैं, तब से एक नए आंदोलन का जन्म हुआ, जिसने वैकल्पिक संचालन नियम दिए, इसमें सामाजिक कल्याण को ध्यान में रखते हुए 'बी कार्पोरेशंस' को मान्यता दी गई। पचास यूनाईटेड स्टेट्स में से लगभग आधे स्टेट्स ने 'बी कार्पोरेशन' के नियमों को अपनाया परंतु इन नियमों के अधीन आने वाले व्यावसायिक संगठनों का आकार व संख्या बहुत कम है।

अंततः, धार्मिक संस्थाओं ने राजनीतिक व आर्थिक निर्णय–निर्धारण में व्यावहारिक रूप से आचार संहिता लागू करने के प्रयासों पर बल दिया है। मेरी रोमन कैथोलिक परंपरा में, यह जागरूकता पाई जा रही है कि चर्च को व्यावहारिक निर्णय निर्धारण को संबोधित करना चाहिए परंतु इसे रोमन कैथोलिक परंपरा तथा कार्यक्षेत्र में अन्य परंपराओं से जुड़े लोगों को भी शामिल करना चाहिए। चर्च के नेता पहले से ही इस क्षेत्र में अनुभव रखते आए हैं इसलिए वे इन विषयों पर अपनी राय देने का अधिकार रखते हैं। वेरीटेट के कैरीटास में आर्थिक निर्णय–निर्धारण के समय पोप बेनेडिक्ट ने अपने परामर्श दिए, वेटिकन और अन्य रोमन कैथोलिक ईकाईयों ने अभ्यासकर्ताओं की सभाएँ प्रायोजित कीं ताकि एक उत्तरदायी व्यवसाय के विज़न को विस्तृत रूप दिया जा सके। उनमें से एक प्रयास, एक शिक्षा देता है, 'वोकेशन ऑफ बिज़नेस लीडर', इसे पोंटीफिकल कौंसिल फॉर जस्टिस एंड पीस द्वारा प्रकाशित किया गया। यह दस्तावेज़ उस संवाद को आगे बढ़ाता है कि वैश्विक आचार संहिता को राजनीतिक व आर्थिक निर्णय–निर्धारण का हिस्सा कैसे बना सकते हैं।

इस निंबध में बताए गए कार्य के दो आयाम हैं। पहला, राजनीति व वाणिज्य के जटिल संसार को वैश्विक नीति की सामान्य समझ कैसे दी जाए – ताकि वे ऐसे निर्णयों पर आ सकें, जो विशुद्ध रूप से सामान्य आचार संहिता पर आधारित हों। दूसरे, व्यक्ति को अपने से वचनबद्धता रखनी होगी कि वह नौकरशाही में नीतिपरक निर्णयों पर बल देगा। ये दोनों ही काम कठिन और अंतहीन हैं। राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्य तेज़ी से बदल

रहे हैं, जिनके लिए परिचर्चा होनी आवश्यक है कि आज की वैश्विक आचार संहिता को, आने वाले कल के विभिन्न संदर्भों में कैसे लागू किया जाएगा। हमारे संगठनों की प्रकृति में भी निरंतर बदलाव आ रहा है जिसके लिए निरंतर चिंतन की आवश्यकता है कि उन संगठनों को नीतिपरक चुनावों के लिए लगातार प्रेरित कैसे किया जाए।

ये यथार्थ हमें सुझाव देते हैं कि राजनीति और अर्थशास्त्र के लिए वैश्विक आचार संहिता को लागू करने का कोई सुनिश्चित और लंबे समय तक बने रहने वाला उत्तर नहीं हो सकता। इसके अलावा इन निरंतर चलने वाली प्रक्रिया में राजनीति व अर्थशास्त्र से जुड़े नेताओं की भागीदारी भी बहुत महत्व रखती है। यह निबंध आर्थिक मामलों के निर्णय–निर्धारण में वैश्विक नीति को लागू करने के संदर्भ में है। ऐसा एक भी नियम नहीं है जिसे मानवीय मध्यस्थता के समय हमेशा के लिए मूल रूप में लिया जा सकता हो जैसे सभी अधिकारों को समान रूप से प्रभावित करने वाले उत्तरदायी निर्णय–निर्धारण और हर दल द्वारा स्वीकार किए जाने वाले उत्तरदायित्व, इनके लिए निरंतर संवाद तथा विवेक की आवश्यकता होगी ताकि व्यक्तिगत मामलों व उभरते संदर्भों के बीच इनकी सार्थकता बनी रहे। जिस तरह व्यवसाय में लाभ व नीति में संघर्ष बना रहता है, उसी तरह सरकारों के लिए भी तीन तरह का संघर्ष जारी ही रहता है – मानवीय सरोकार, राष्ट्रीय हित तथा नेताओं के स्वार्थ। इनके कारण सदा तनाव बना रहेगा।

वित्तीय नीति

प्रपत्रः एच.इ.शेख़ अब्दुलअजीज़ अल–कुरैशी

साउदी अरेबियन मोनेटरी अथॉरिटी के भूतपूर्व गवर्नर तथा इंटरएक्शन कौंसिल के सदस्य

हमारे परस्पर संवाद के इस अवसर पर मैंने परिषद का गैर–राजनीतिक सदस्य तथा व्यवसाय व सिविल सेवा में लंबे करियर का अनुभवी होने के नाते, व्यवसाय तथा वित्त से जुड़ी नीतियों का विषय चुना। 2007 के वित्तीय संकट के दौरान नीतिपरक मूल्यों का अभाव ही प्रमुख कारण रहा जो हमें ऐसे संकट की ओर ले गया, जिससे संसार अभी तक पूरी तरह से नहीं संभल पाया। वित्तीय क्षेत्र से बाहर, नीतिपरक मूल्य केंद्र में नहीं होते क्योंकि व्यवसाय सेवाओं व सामान का उत्पादन करते हैं, जिन्हें ग्राहक चुन सकते हैं। मिसाल के लिए, अरग आप कार लेना चाहते हैं तो आप दो या तीन कारों को चला कर देखेंगे और फिर अपने लिए उपयुक्त कार का चुनाव करेंगे। घटिया कारें बनाने वाली कंपनी बाज़ार में नहीं टिक सकेगी। परंतु वित्त अलग चीज़ है क्योंकि यह विश्वास पर टिका होता है।

वित्तीय नीति शास्त्र

बैंकर हमेशा से इस बात को समझते आए हैं कि उनकी नीति परक प्रतिष्ठा ही उनके व्यवसाय को चलाए रखने का मूल है तो फिर व्यवसाय और ख़ासतौर पर वित्तीय आचार संहिता पूरी तरह से ध्वस्त क्यों हुई? संक्षेप में कहूँ तो मुझे यह अल्पकालिक लाभों के लोभ और बोनस संस्कृति का प्रभाव लगता है। हम व्यवसाय तथा वित्त में नीतिपरक मूल्यों की पुनः स्थापना के लिए क्या कर सकते हैं? मैं आपके सामने दो बिंदुओं को प्रस्तुत करना चाहूँगा

1.सकारात्मक तथा निष्क्रिय ईमानदारी व

2. नेतृत्व का महत्व

निष्क्रिय ईमानदारी का अर्थ है कि लोग कोई भी बेईमानी करने से बचते हैं। यह एक खेदजनक सत्य है कि अधिकतर लोग निष्क्रिय ईमानदार तो हैं परंतु उनमें सकारात्मक ईमानदारी का अभाव है। सकारात्मक ईमानदारी का अर्थ है कि कोई व्यक्ति नीतिपरक बने रहने के लिए सकारात्मक कदम उठाता है। कानून और नियम निष्क्रिय ईमानदारी को लागू कर सकते हैं और व्यवसाय में भी अनुपालन अधिकारी ऐसा करवा सकता है। परंतु सकारात्मक ईमानदारी मनुष्य के भीतर से आती है और उसके द्वारा सीखे गए मूल्यों पर आधारित होती है। इसे आप अपने रोल–मॉडल से सीखते हैं; समाज में ये आपके माता–पिता, अध्यापक, आपके प्रिय जन तथा व्यवसाय में आपके बॉस और विशेष तौर पर आपके पहले बॉस हो सकते हैं। हम केवल कानूनों के आधार पर अपनी आचार संहिता को भी लागू नहीं कर सकते : ये मूल्य और स्तर हमारे भीतर से भी आने चाहिए।

हाल ही में सामने आया वैश्विक वित्तीय संकट, बैंकरों के भीतर सामाजिक व नीति परक पूँजी के अभाव का ही नतीजा रहा है। हालाँकि ख़तरे वहन करने की घटी हुई क्षमता, दूसरों का लाभ उठाना तथा बाज़ार की बदलती दशाएँ भी इसके कारणों में शामिल थीं परंतु प्रमुख रूप से वित्तीय उद्योग में नीति परक आचरण का पतन हो गया था और ग्राहक के प्रति किसी तरह की वित्तीय जिम्मेदारी भी नहीं रही थी। उदहारण के लिए, सब–प्राइम लैंडिंग संकट में काम की गुणवत्ता से अधिक मात्रा पर ध्यान रहा, बंधक एजेंटों ने ऋणी की योग्यता देखने की बजाए अधिक से अधिक बंधक लाने पर जोर दिया। बैंकों ने उन्हें मंजूरी दी, ग्राहकों को कर्ज़ दिया गया और काग़जों को मॉर्टगेज़ पूल में बेचा गया और फिर वे विनेशकों को बेचे गए। ऐसे लोगों को भी ऋण दे दिए गए जो उन्हें उतार ही नहीं सकते थे। नतीजन, इस लालच के खेल में निवेशक ही बैंक के घटिया अभ्यासों के शिकार हो गए।

रेटिंग एजेंसियों की भूमिका भी केवल एक प्रतीकात्मक संबंध बन कर रह गई और उनके आपसी संबंध संदेहास्पद हो उठे। रेटिंग एजेंसियों ने भी अपनी तरह से काम किया वे उत्पाद को इस तरह पेश करतीं मानो उच्च वापसी के साथ एक बेहतर जोखिम शामिल हो। इस तरह रेटिंग के मामले में भी कई तरह की ग़लतफ़हमियाँ पैदा की गईं।

इस लोभी संसार में व्यवसाय आचार और कार्पोरेट मूल्यों को निरंतर चुनौती मिलती रहती है। यह सब काफ़ी हद तक बैंकों की कार्यवाही और काम करने के ढाँचे में दोषों पर भी निर्भर करता है। हमें बैंकों में अनैतिक अभ्यासों को रोकने के लिए कानूनों को नए सिरे से बनाना होगा। इन दिनों एथिकल बैंकिंग शब्द प्रचलन में है और सबसे अहम बात यह है कि ये सब आपके भीतर से उपजना चाहिए। बैंकों में स्टाफ प्रशिक्षण के साथ ही नैतिक मूल्यों को पोषित किया जाना ाहिए।

विश्वास तथा आचार नीति का संबंध

यदि विश्वास तथा आचार नीति के आपसी संबंध की बात की जाए तो सभी धर्म नैतिकता व आचार नीति की शिक्षा देते हैं। हम यहाँ महान धर्मों से अपने लिए सहायता ले सकते हैं। उदाहरण के लिए, इस्लाम न केवल कानूनी सुरक्षा प्रदान करता है बल्कि एक प्रभावी नैतिक तंत्र भी उपलब्ध करवाता है। यह एक जाना–माना तथ्य है कि मजबूत धार्मिक प्रतिबद्धता रखने वाले समुदायों में अपराध दर कम होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि धर्म हमें दूसरों को हमारे समान देखना सिखाता है और उनके प्रति उचित व्यवहार करने की शिक्षा भी देता है। दरअसल नैतिक मूल्य हमारे संपूर्ण कल्याण के लिए बहुत अधिक महत्व रखते हैं। कुल मिला कर कहा जाए तो आचार नीति के पाँच बुनियादी नियम हैं, जो सभी धर्मों में समान रूप से पाए जाते हैं :

–दूसरों को हानि न पहुँचाएँ

–परिस्थितियों को बेहतर बनाएँ

–दूसरों का सम्मान करें

–न्यायी बनें

–सबसे स्नेह रखें

ये मूल्य सभी संस्कृतियों में समान रूप से आदरित हैं और एक बेहतर समाज की रचना के लिए घर व पाठशालाओं में भी इनकी शिक्षा दी जाती है। जैसा कि हम जानते हैं, आचार नीति व नैतिक शिक्षा प्रायः धर्म से जुड़े होते हैं, परंतु पाठशालाएँ नीति संबंधी चिंतन तथा क्रियान्वयन को बढ़ावा दे सकते हैं। पाठशालाओं और कॉलेजों में कार्य से जुड़ी आचार

नीति सिखाई जा सकती है। वर्तमान में उपभोक्ता संस्कृति सिखा रही है कि 'लोभ अच्छा होता है', परंतु लोभ को जीवन का अच्छा मार्गदर्शक नहीं कहा जा सकता। लोभ में आ कर, हम भ्रामक भविष्य के नाम पर वर्तमान लाभों की अनदेखी कर सकते हैं, जैसे आम आदमी सुखद भविष्य के लोभ में आ कर, अपनी वर्तमान संपत्ति का ही नाश कर देता है या हम वर्तमान के छोटे आनंद के लोभ में भविष्य की सुरक्षा दाँव पर लगा देते हैं। लोभ सिखाता है कि हम दूसरों से भी ऐसे पेश आएँ मानो वे वस्तुएँ हों, हम उन्हें शोषित करते हैं और यह भूल जाते हैं कि वे भी हमारी तरह ऐसे व्यक्ति हैं जिनके लक्ष्यों को सराहा जाना चाहिए।

इस्लाम जीवन शैली के एक विस्तृत रूप में, संपूर्ण नैतिक तंत्र में व्याप्त है, जो एक ही ईश्वर में विश्वास तथा सृष्टि के सर्जक के विचार से उपजा है।

एमईएनए प्रांत में कार्पोरेट गवर्नेंस

एमईएनए (MENA) प्रांत में कार्पोरेट गवर्नेंस एक नई अवधारणा है। हालाँकि यह अभी शैशवावस्था में है परंतु कार्पोरेट शासन प्रणाली महत्वपूर्ण रूप से अग्रसर हो रही है। इससे प्रांत तो सही पथ पर चल रहा है परंतु चुनौतियों का भी अभाव नहीं है। सउदी अरेबिया में कार्पोरेट शासन प्रणाली के मूल नियमों (पारदर्शिता, नियमित रिपोर्टिंग और स्वतंत्र अंकेक्षण) को कड़ाई से लागू किया जाता है। वास्तव में, प्रामाणिक कार्पोरेट शासन प्रणाली महत्वपूर्ण सार्वजनिक नीति उद्देश्यों को पूरा करती है। अच्छी शासन प्रणाली वित्तीय संकट की बाज़ार संवेदनशीलता को घटाती है और दुर्बल शासन प्रणाली निवेशकों के भरोसे को तोड़ती है। कार्पोरेट शासन प्रणाली को लागू करने से सभी पर भार आता है (कानून बनाने वाले, व्यावसायिक नेता तथा सुधारक) और वे सभी इसके आर–पार सहज भाव से देख सकते हैं।

निष्कर्ष :

यदि आप किसी नीति को जानबूझ कर उपेक्षित करते हैं तो यह कोई रामबाण नहीं है। नियम और कानून व्यक्तिगत ईमानदारी या निष्ठा का विकल्प नहीं हो सकते, वे केवल निष्क्रिय ईमानदारी को ही प्रोत्साहित करते हैं। सक्रिय ईमानदारी उन आचार नीतियों से आनी चाहिए, जिनकी शिक्षा हम बचपन से ही अपने स्कूल और घर से पाते आए हों। यह बदलाव भीतर से आना चाहिए और कार्पोरेट जगत में ऐसे नेता होने चाहिए, जो मजबूत नैतिक आधार रखते हों। व्यावसायिक नेताओं और राजनेताओं को अपने जीवन में भी दिखाना चाहिए कि आचार नीति का पालन करने वाले लोग हैं। दूसरे शब्दों में, नेतृत्व आपके पद में नहीं, कामों पर लागू होना चाहिए। लोभ जीवन को चलाने के लिए अच्छा

मार्गदर्शक नहीं है और न ही इसे एक सफल व्यवसाय चलाने के लिए अच्छा मार्गदर्शक माना जा सकता है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यही है कि स्कूलों में आचार नीति को पढ़ाए जाने से नैतिक शिक्षा को एक नई पहल मिलती है। यह दर्शाता है कि किस तरह नीति पर आधारित मॉडल, मन की आदतों को प्रभावित करते हुए, छात्रों को प्रोत्साहित करता है कि वे अपने बारे में विचार करते हुए, एक अच्छा नैतिक न्याय विकसित कर सकें। उदारपंथी इसे सुधार विरोधी कदम कह सकते हैं परंतु सही मायनों में यही उचित पहल है। आधुनिक समाज में तेज़ी से फैल रही सांस्कृतिक निरंकुशता व नैतिक पतन को नैतिक मूल्यों के उत्थान से ही दूर किया जा सकता है, यही एकमात्र समाधान है। अंशधारक भी अपने कार्पोरेट के लिए इस विषय में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं, वे कंपनी की कार्यवाहियों पर नज़र रख सकते हैं और ख़रीददारी और निवेश निर्णयों को लेते समय, उक्त कंपनी की आचार नीति को भी ध्यान में रख सकते हैं, जिससे कंपनी पर एक सकारात्मक दबाव बना रहेगा।

परिचर्चा :

सभापति वसीलियो : व्यावहारिक रूप से यहाँ सभी जानते हैं कि नीति संबंधी व्यवहार के क्या नियम होते हैं। भले ही कुछ मतभेद हों परंतु प्रश्न बहुत ही सादा है। क्या चाहते हैं कि लोग अपनी सद्भावना से काम करें या रब्बियों, उपेदशकों या लामाओं से जानें कि उन्हें क्या करना चाहिए। या आप समाज में ऐसी अवस्थाएँ पैदा करना चाहते हैं, जो व्यवसायिक और राजनीतिक नेताओं पर दबाव डाल सकें, कि वे और अधिक नीतिपरक रूप में काम करें। मेरे मतानुसार, यदि हम लोगों को उनकी इच्छा के अनुसार काम करने दें तो ऐसा होने की संभावना बहुत कम है। उनमें से कुछ, जैसे गाँधी और मंडेला ने ऐसा व्यवहार किया और संसार को बदला परंतु यही पर्याप्त नहीं है। मैं इस चर्चा में इसी बिंदु को उठाना चाहता हूँ कि क्या हमें ऐसा माहौल बनाना चाहिए कि राजनीतिक व व्यावसायिक नेताओं पर आचार नीति के अनुसार काम करने का दबाव बनाया जा सके।

मैं सोच रहा था कि यदि किसी अंशधारक को यह बताया जाए कि कंपनी अपनी आचार नीति के कारण लाभ नहीं बना पा रही तो क्या वे इस बात की शिकायत करेंगे या जब आपको यह पता चलेगा कि कंपनी लाभ कमा रही है, तब आप केवल ताली बजा कर प्रशंसा करेंगे और इसके बाद आप उनसे कोई प्रश्न नहीं करेंगे। हालाँकि मैं आपसे पूरी तरह से सहमत हूँ कि हमें शिक्षा को ही इसका माध्यम बनाना होगा और यह तथ्य भी उतना ही खेदजनक है कि हम सब मनुष्य हैं, हमारी अपनी कमियाँ और दुर्बलताएँ हैं और हमें अपने पर और अधिक नियंत्रण साधना होगा।

चांसलर वरानित्सकी : कम से कम औद्योगीकृत देशों में, हमने पिछले दो सौ या तीन सौ सालों में काफ़ी प्रगति की है, जो कि आचार नीति पर आधारित रही, परंतु यहाँ इस नियम को भी आदर दिया गया कि 'सभी मनुष्य समान हैं'। इस प्रकार हमने अपने देशों में एकता को सशक्त बनाया। हमने सामाजिक सुरक्षा तंत्र बनाए, जो कि एक कल्याणकारी राज्य के बेहतर नमूने थे। हम ऐसे संसार में जी रहे हैं जहाँ सत्ता का निरंतर विभाजन होता रहता है, परंतु यहाँ आज इतने लोगों के विचार तथा रोचक व अमूल्य उपायों को जानने के बाद, मुझे किसी की स्मरण आ रहा है, जिन्होंने इस स्थान पर कहा था, 'आचार नीति व नियम मैडल के एक ओर हैं, परंतु जीवन में इन्हें लागू करना, व्यवस्था के दूसरी ओर आता है।' जैसा कि आज भी कहा गया, क्या राजनेताओं व निर्णय–निर्धारकों पर दबाव होना चाहिए कि वे अपने फ़ैसले लेते समय आचार नीति को ध्यान में रखें? संभवतः, 'हाँ', परंतु इस दबाव को व्यवस्थित कैसे किया जा सकता है?

और इसके साथ ही मेरे दिमाग में प्रजातांत्रिक तंत्र व समाजों से जुड़े कुछ बुनियादी प्रश्न भी आ रहे हैं। उदाहरण के लिए, यूरोप व उत्तरी अमेरिका में हमने बहुत सा असंतोष पाया, जो न केवल सड़कों पर उतरे लोगों में था बल्कि निर्णय निर्धारकों के विरुद्ध राजनीतिक संगठनों ने भी आवाज़ उठाई। यूरोप में, इससे यह प्रश्न पैदा हुआ, 'क्या हमारे पास अधिक नहीं होना चाहिए, जिसे हम अपने प्रतिनिधिपूर्ण प्रजातंत्र के नमूने के विपरीत प्रत्यक्ष प्रजातंत्र कहते हैं?' प्रतिनिधित्व पर आधारित प्रजातंत्र का अर्थ है कि जो लोग विविध संसदों में प्रतिनिधित्व करते हैं, क्या वे अब दबाव का शिकार हैं या नहीं? हमने अपने उन मित्रो की बातें भी सुनीं, जिन्होंने 'आचार नीति के दिखावे' के बारे में बात की। लगभग सभी पश्चिमी संसदों में उनके पास आचरण समितियाँ होती हैं, जो राजनेताओं के व्यवहार पर नियंत्रण रखती हैं। अब यह केवल एक पक्ष है।

दूसरा पक्ष यह है, इतना पा लेने के बाद भी, हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि हम मनुष्यों की समानता का स्तर पैदा करने में सफल रहे या नहीं। कई देशों में आज भी यह संभव नहीं है। जो लोग उस देश में पैदा हुए, जो दूसरे देशों आए, जो लंबे अरसे से उसी देश में रह रहे हैं; ये सब अंतर ही उन्हें समान स्तर पर नहीं आने देते।

तो मेरा प्रश्न यह है, 'वैसे तो निर्णय निर्धारण में आचार नीति का प्रयोग' एक रोचक व चुनौतीपरक विषय है, परंतु हम अपने प्रजांतत्र के बारे में नए सिर से विचार करते हुए, इसे लागू कैसे कर सकते हैं? अपने प्रजातांत्रिक तंत्रों व समाजों में क्रियान्वित कैसे कर सकते हैं? यू.एस. में टी पार्टी एक ताज़ा उदाहरण है, व्हाइट हाउस और कांग्रेस की कारवाईयों के प्रति असंतोष को प्रकट करता है। यूरोप में भी ऐसे अनेक आंदोलन हुए हैं और ऐसे कई संगठन हैं, जो अंत में, अपने मन को नहीं छिपाते कि प्रत्यक्ष प्रजातंत्र के विधियाँ – लोगों की अपनी इच्छा है। यूरोप के अन्य पूर्वी हिस्सों में, हम सड़कों पर चल रहे

वाद–विवाद व परिचर्चाओं को देखते हैं। हम इन्हें कैसे संभालते हैं? इच्छा और आचार नीति के मतभेद, निर्णय निर्धारकों पर दबाव डालने वाली आवश्यक परिस्थितियाँ आदि इस प्रकार व्यवस्थित नहीं की जा सकतीं, परंतु हम यह कह सकते हैं कि इससे हमारे तंत्रों की स्थिरता बनी रहती है। संभवतः आज के वक्ता हमें इस विषय में कोई उत्तर या संकेत दे सकें कि इस सभा से केवल इस सहमति के अलावा और क्या ले जाया जा सकता है कि निर्णय निर्धारित करते समय आचार नीति का अच्छा आधार भी उपस्थित होना चाहिए।

राष्ट्रपति ओबासंजो : राजनीतिज्ञ दबाव में हैं। उनमें से अधिकतर अपने मतदाताओं और उनके निर्वाचन क्षेत्रों से दबाव में हैं। यदि हम राजनेताओं को यह अवसर देना चाहते हैं कि वे आचार नीति से जुड़े नियमों का पालन करें तो उनके लिए इसमें कहीं न कहीं प्रोत्साहन भी शामिल होना चाहिए। हालाँकि मुझे नहीं पता कि वह प्रोत्साहन क्या हो सकता है या उसे मंजूरी कैसे दी जा सकती है। क्योंकि केवल यही एकमात्र उपाय है जिसके बल पर उन्हें नीतिपरक स्तरों तथा नियमों को बनाए रखने का दबाव दिया जा सकता है। यह एक आंतरिक प्रक्रिया है। बाहरी दबाव भी है, जिसे मैंने देखा है। जब कहा गया कि यूरोप और दूसरे कुछ व्यवस्थित समाजों में हालात में सुधार आया है, तो मैंने माना कि यह सच है, परंतु इसे ही पर्याप्त नहीं माना जा सकता।

कुछ वर्ष पूर्व, पीटर इगन और मैंने उस पर काम करना आरंभ किया, जिसे आज 'ट्रांसपिरेंसी इंटरनेशनल' के नाम से जाना जाता है। ओ.ई.सी.डी. कंपनियाँ, अपने देश में नहीं किंतु दूसरे देशों में दी गई रिश्वत के लिए कर में कटौती पाती थीं। हमें इसी विषय पर काम करना था। और बेशक कंपनियाँ कई संधियों के साथ सामने आईं परंतु इसके बावजूद आज भी बहुत ऐसे देश हैं, जो अपने कार्पोरेट को प्रोत्साहित करते हैं कि वे अपने देशों से बाहर भ्रष्टाचार को बढ़ावा दें। हम आचार नीति और स्तरों को कैसे लागू कर सकते हैं कि इन सब बातों को पूरी तरह से रोका जा सके?

सभापति वसीलियो : मैं बताना चाहता हूँ कि उन्होंने साइप्रस में एक नया कानून लागू करने के बारे में सोचा है, जो रिश्वत देने वालों को भी दंडित करता है। और किसे अधिक दोष दे सकते हैं? ग्रीक में, हमारे भूतपूर्व रक्षा मंत्री तथा अन्य अनेक कैद में हैं, क्योंकि जब उन्होंने जर्मन व दूसरी कंपनियों से नावें और बहुत सारास सामान खरीदा तो उन्हें बहुत सारा पैसा भी मिला। वे तो जेल में गए पर जिन्हें लाभ हुआ, वे आसानी से लाभ कमा कर बच गए। अगर हम वास्तव में एक बेहतर संसार में जाना चाहते हैं, तो हमें न केवल भ्रष्टों को दंडित करना चाहिए बल्कि भ्रष्ट करने वालों को भी दंड देने के बारे में सोचना चाहिए।

राष्ट्रपति ओबासंजो : भ्रष्टाचार एक दो–तरफ़ा व्यवहार है। यदि आप दोनों में से केवल एक को ही दंडित करते हैं, तो आप इस भ्रष्टाचार पर रोक नहीं लगा सकते।

प्रधान मंत्री क्रेटियन : कनाडा में हमारे ऐसे कानून हैं कि रिश्वत लेने–देने पर तो सज़ा हो सकती है पर अगर हम कनाडा से बाहर रिश्वत देते हैं कोई सज़ा नहीं मिलती। राष्ट्रपति ओबासंजो आपने सही कहा, यूरोप में बहुत समय से व्यवसाय को बढ़ाने के लिए रिश्वत को ज़रूरी समझा जाता रहा है और इस पर कर में छूट भी मिलती आई है। जब मुझे एहसास हुआ तो मैं सदमे में आ गया। वे इसे बदल रहे हैं या उन्होंने बदल दिया है। परंतु कनाडा में समस्या चल रही है और कुछ कार्पोरेट पर मुक़दमे भी चलाए गए हैं क्योंकि उन्होंने नाइजीरिया और दूसरे स्थानों पर रिश्वत दी है, और यह एक समस्या है। परंतु आपने कहा कि नियम और कानून से व्यवसाय पर भार आ सकता है, परंतु इसके लिए कुछ व्यावहारिक समाधान भी निकाले जा सकते हैं। मैं पिछले चालीस सालों से राजनीति में रहा हूँ और अब पिछले दस सालों से सब चीज़ों का निरीक्षण करता आ रहा हूँ।

शेख़ अल–कुरैशी ने 2008 के पतन की समस्याओं पर विचार किया, वहाँ शीर्षस्थ कानूनों के बारे में एक काम हुआ है, खासतौर पर इसका असर यू.एस.ए. में देखा जा सकता है। पहले के दिनों में, आप एक बैंकर थे इसलिए बैंकिंग का काम करते थे। आप बीमा कंपनी में थे, आप बीमा करते थे। आप दलाल थे, आप दलाली का काम करते थे और फिर मर्चेंट बैंकर भी हुआ करते थे। वे सब एक–दूसरे से अलग होते थे। वर्तमान में समस्या यह है कि ये सब आपस में घुल–मिल गए हैं, क्योंकि आज एक बैंकर बीमा भी बेच सकता है। पुराने ज़माने में, मेरे देश में वे ऐसा नहीं कर सकते थे। परंतु अब वे आरंभ कर रहे हैं। मैंने विरोध किया किंतु मेरे उत्तराधिकारी ने हामी नहीं भरी। तो जब आप एक बैंकर के पास जा कर कहते हैं, 'मैं तुमसे पैसा उधार लेना चाहता हूँ' तो क्या होता है, वह कहता है, 'हाँ, मिल सकता है पर आपको उधार लेने के लिए अपना जीवन बीमा करवाना होगा' या बैंकर कहेगा, 'मैं आपको उधार नहीं दे रहा पर बेहतर होगा कि आप अंश ले लें।' क्योंकि वे आपके उधार के ब्याज से कहीं ज्यादा पैसा शेयर में ही कमा लेगा।

इस तरह, हम इसे चार स्तंभ कहते थे, जो आपस में एक–दूसरे से अलग थे। हमने स्वतंत्रता के नाम पर उसे त्याग दिया। मेरे अनुसार, इससे हितों का निरंतर जारी रहने वाला संघर्ष आरंभ हो गया है। और अपने अनुभव से बताऊँ तो लोग यह दावा करने लगे हैं कि कनाडा के बैंकर बहुत अच्छे नहीं हैं। परंतु जब मैं प्रधानमंत्री पद पर था तो मैंने बैंकों के विलय के लिए हामी नहीं दी थी। कनाडा में नियम है कि आप एक बंधक में 80 प्रतिशत से अधिक इक्विटी नहीं रख सकते। परंतु यू.एस.ए. में हुआ यह कि वे भवन की

कीमत का 150 प्रतिशत उधार दे रहे थे, क्योंकि उन्हें लगा कि दस या बीस साल में कीमत में इतना उछाल तो आ ही जाएगा।

और सभी उस खेल में शामिल हुए, वे दलाल और बीमाकर्ता थे और उन सबके हित आपस में उलझ गए। वे सभी अल्पकालिक भी थे। अगर कोई पाँच साल के लिए बैंक का मैनेजर है तो उसे अंशों की कीमत जल्दी बढ़ानी होगी इसलिए वह पाँच सालों में सारे विकल्पों का प्रयोग करता है और जा कर फ्लोरिडा में एक बड़ा घर खरीद लेता है। इसलिए मुझे लगता है कि आचार नीति को मदद की ज़रूरत है। किसी भी बैंक के प्रेज़ीडेट को उसके द्वारा कमाए गए लाभ के आधार पर परख़ा जाता है। कई बार अंशधारक इस बात की परवाह तक नहीं करते कि उसने यह काम कैसे किया, जब तक उन्हें लाभांश मिलता रहता है, वे संतुष्ट रहते हैं।

परंतु हम व्यवसाय से जुड़े नियमों में बदलाव ला रहे हैं। संसार के अधिकतर देशों में रिश्वत लेने वालों को सज़ा होती हे। आज से बीस साल पहले ऐसा नहीं था। बीस साल पहले, इसके लिए कर में छूट होती थी। आज, जहाँ तक मैं समझता हूँ, अधिकतर देशों में इस काम के लिए कर पर कोई छूट नहीं होती।

इस तरह आचार नीति को कानूनों के साथ एकरेखीय होना चाहिए। अब कई देशों में यह कानून बना दिया गया है कि रिश्वत को व्यापार के खर्चे के तौर पर नहीं दिखाया जा सकता और न ही इसमें कर पर कटौती होगी। जब आप रिश्वत देते हैं तो आप भी रिश्वत पाने वाले की तरह ही दोषी हैं। यह मेरा विचार है और पूरे संसार में आचार नीति को कानून की मदद चाहिए क्योंकि जहाँ तक मेरा मानना है, मनुष्य तो हमेशा ऐसे ही रहेंगे और उनके लिए स्वयं को प्रलोभनों से बचाना इतना आसान नहीं होता।

चासंलर वरानित्सकी : मुझे भय है कि हम एक दायरे में कैद हो गए हैं। 1930 के दशक में, संसार के आर्थिक संकट के दौरान, अमेरिकी कांग्रेस ने 'ग्लास स्टीगल' कानून पास करते हुए, निवेश तथा वाणिज्यिक बैंकिंग को आपस में पूरी तरह से अलग कर दिया। यह एक बहुत अच्छा निर्णय था। कुछ दशकों के बाद, अमेरिकी बैंकर प्रेजीडेंट क्लिंटन के पास जा कर बोले, 'मिस्टर प्रेजीडेंट! निवेश तथा वाणिज्यिक बैंकिंग को आपस में अलग करने के बाद से हम वैश्विक रूप से विकास नहीं कर पा रहे।' इस तरह उन्होंने चरण दर चरण, इस कानून से मुक्ति पा ली परंतु इस विकास के बाद, सभी बड़े अमेरिकी बैंक न्यू यॉर्क में नहीं रहे, वे लंदन, टोक्यो, सिंगापुर आदि देशों में चले गए। इसके साथ ही, यू.के ने औद्योगीकृत देशों में पहले नंबर पर होने की ख्याति खो दी, इंफ्रास्ट्रक्चर की हानि हुई, ऑटोमोबाइल उत्पादन में गिरावट आई, मशीनों का निर्माण भी घट गया। इस तरह यू.के. में लंदन ही सबसे अधिक लाभ कमाने वाला वित्तीय स्थल था, वह निर्माण केंद्र

के तौर पर नहीं जाना जाता था। यही कारण है कि जब हम कानूनों की बात करते हैं, तो मैं पूरी तरह से आपके पक्ष में हूँ। उदाहरण के लिए, ब्रिटिश सरकार कभी कोई कानून लागू नहीं करेगी क्योंकि अगर उसने ऐसा किया तो अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय केंद्र के तौर पर, लंदन को हानि होगी। दूसरे, डिजीटल क्रांति हमें उस अवस्था में ले आई है, जहाँ वित्तीय बाज़ार पहले से अधिक प्रभावी हुए हैं, वे पहले से अधिक तेज़ी से काम करने लगे हैं। आपके पास जो था, आप उससे कहीं अधिक कमा रहे हैं। मैं आज आपके साथ यहाँ बैठा हूँ और मेरा एक भूतपूर्व सहकर्मी बैंकिंग से दलाली के काम में चला गया। हम यहाँ बैठे, आचार नीति पर परिचर्चा कर रहे हैं और वे एक बटन मात्र दबा कर, कुछ बिलियन डॉलर या यूरो या फिर किसी भी करेंसी को विएना से फ्रेंकफुर्त, सिंगापुर से टोक्यो और फिर उसी पल में वापिस विएना भी भेज देते हैं।

तीसरा, इस वैश्विक संसार में, जैसा कि हम जानते हैं, लोगों के वेतनों और पारिश्रमिकों में बहुत विषमता है। इस तरह औद्योगिक नेताओं को, यूरोप व यू.एस. के उच्च–पारिश्रमिक देने वाले देशों से हटा कर अपना उत्पादन, तीसरी दुनिया के देशों से करवाना पड़ता है। सरकारें तीसरी दुनिया के साथ इस विस्तार के लिए कर में छूट भी देती हैं। रिश्वत तंत्र को नहीं बल्कि निवेशों को कर व्यवस्था से लाभ हो रहा है। उन देशों में निवेश करना सरल है जहाँ वेतन और भत्ते बहुत कम हैं। और अगर आपको दोनों ही देशों से, कर में भी छूट मिल जाती है, तो आपका कोई कर भी नहीं देना पड़ता।

तो यह तीसरा बिंदु है कि राजनेता और निर्णय–निर्धारक दबाव में क्यों रहते हैं। क्योंकि केवल सीईओ ही उन्हें करों में लाभ के लिए विवश नहीं करते बल्कि यूनयिन भी उन्हें ऐसा करने को कहती हैं। क्योंकि यदि उनकी ऑर्डर बुक भरी होंगी तो यह यूनियन के लिए भी अच्छा होगा और रोजगार भी मिलेगा। और हम यहाँ आचार नीति की बात कर रहे हैं। मेरी शुभ कामना!

मिस बेंडियन–आर्टनर : मैं एक भूतपूर्व जज तथा विशेष रूप से आर्थिक अपराधों के मामले में अपराधिक जज के तौर पर, मैं इतना ही कहना चाहूँगी कि अगर हमारे व्यवसाय और खासतौर पर हमारे बैंकिंग तंत्र में और अधिक नैतिकता और आचार नीति होगी, तो विश्वव्यापी संकट का प्रश्न ही नहीं उठता। समस्या यह है कि हर दुर्व्यवहार अपराधिक मामला नहीं होता, जिसे दंडित किया जा सके। कई बार, यह केवल नैतिकता का ही मामला होता है। और कई बार नैतिकता के कोई नतीजे नहीं होते। यही समस्या है और लेग व कई बार मीडिया भी इसे नहीं समझती। मैं डॉक्टर साहब की बातों से सहमत हूँ क्योंकि यही वास्तविक समस्या है।

चासंलर वरानित्सकी : परंतु एक जज के रूप में, आप अपने करियर के दौरान केवल अपराधियों का ही सामना करती आई हैं, आपका सामना अच्छे लोगों से तो नहीं हुआ?

श्री श्री रवि शंकर : सन् 2010 में, हमने भारत में भ्रष्टाचार के विरुद्ध यह संघर्ष आरंभ किया, क्योंकि लोग अपने आसपास भीषण भ्रष्टाचार से घिरते चले जा रहे थे। यहाँ तक कि मृत्यु का प्रमाण–पत्र पाने के लिए भी लोगों को रिश्वत देनी पड़ती। जन्म का प्रमाण–पत्र पाने के लिए रिश्वत देनी पड़ती इसलिए हमने 'भ्रष्टाचार के विरुद्ध भारत' नामक आंदोलन का शुभारंभ किया, जहाँ हम सरकार को ऐसे कानून पास करने के लिए दबाव देते हैं, जिन्हें वे पिछले पंद्रह वर्षों से विलंबित करती आ रही है। भारत में ऐसे कानून हैं कि अनैतिक अभ्यास करने वालों को कठोर दंड दिया जा सकता है। परंतु उनका क्रियान्वयन नहीं हो पाता।

आपको लोगों को शिक्षित करना होगा कि वे वचनबद्ध हों और अपने सम्मुख कोई रोल–मॉडल रख सकें। आपको अपनी अंतरात्मा के भीतर झाँकना होगा। चरित्र निर्माण तथा जनता को आचार नीति व नियमों के पालन के लिए शिक्षित करना बहुत महत्व रखता है। अन्यथा कानून तभी सामने आएँगे, जब अपराध हो चुका होगा और फिर आप उन्हें दंडित करेंगे। परंतु यदि आप उनका बचाव करना चाहते हैं तो आपको झूठी ईमानदारी या निष्ठा का दिखावा करने की अपेक्षा सकारात्मक आचार नीति व सक्रिय ईमानदारी को अपनाना होगा। तो हमने एक काम किया। पूरे देश में की गई विशाल सभाओं के दौरान, हमने अधिकारियों को आमंत्रित किया कि वे रिश्वत न लेने का संकल्प ग्रहण करें। यह उपाय प्रभावी रहा।

महात्मा गाँधी ने देश में सादा जीवन पर बल दिया था, जो कि अब कहीं दिखाई नहीं देता। हमें इसे पुनः वापिस लाना होगा; लोगों के समक्ष एक रोल–मॉडल की स्थापना करनी होगी, जिसका वे अनुसरण कर सकें। यही बात पूरी तरह से समझ में आती है। लोगों की स्मृति बहुत ही अल्पकालिक होती है। जब वे यू.एस.ए. और भारत में, वित्तीय क्षेत्र में एक के बाद एक कांड देखते हैं तो हमें उन्हें याद दिलाना होगा कि इस तरह के छल व कपट आपको जेल की सलाख़ों के पीछे पहुँचा सकते हैं। परंतु एक ईमानदार रोल–मॉडल की स्थापना भी सफल और महत्वपूर्ण हो सकती है। दुर्भाग्यवश, युवा उद्यमियों को लगता है कि यदि उन्हें अधिक धनार्जन करना है तो अनैतिक साधनों का ही आश्रय लेना होगा। हमें युवाओं की इसी सोच और मानसिकता में बदलाव लाना है। इसे अच्छे उदाहरणों के माध्यम से ही सुधारा जा सकता है। इस तरह, व्यवसाय में आचार नीति को लाने के लिए, एक रोल–मॉडल की स्थापना करना अनिवार्य है। जो कंपनियाँ अच्छा काम करते हुए, बेहतर लाभ कमा रही हैं, वे एक रोल–मॉडल के तौर पर अपनी सफलता को प्रदर्शित करते हुए, लोगों को प्रेरित कर सकती हैं।

सभापति वसीलियो : शिक्षण एक अच्छा बिंदु है किंतु यही पर्याप्त नहीं है। भारत में, आप लोगों से कह सकते हैं कि वे बलात्कार न करें, परंतु आपको इसके लिए एक प्रबंधन की आवश्यकता होगी।

श्री श्री रवि शंकर : आपने बिल्कुल उचित कहा, हमें दोनों की ही आवश्यकता होगी : कानून व शिक्षा

डॉक्टर हाबाश : जब शेख़ अल–कुरैशी कहते हैं कि हमें अपने स्कूलों में आचार नीति की शिक्षा देनी चाहिए, तो मैं उनकी बात में अपनी ओर से कुछ बिंदु जोड़ना चाहूँगा। शिक्षा के क्षेत्र में कुछ करना, बहुत महत्व रखता है, परंतु आचार नीति की आम बुनियाद के बिना बहुत कुछ नहीं किया जा सकता। हम आचार नीति की बात कर रहे हैं, परंतु वह कौन है, जो कह सकता है, 'यह नैतिक–अनैतिक है या नीति के पक्ष या विपक्ष में है'। हम कुछ और उच्च संदर्भों की खोज में हैं, और मुझे लगता है कि इस बिंदु पर आने के लिए, हमें कड़ी मेहनत करनी होगी। हमें विशेष सभाओं का आयोजन करना होगा। हो सकता है कि हम इस सभा में अंतिम निष्कर्ष तक न आ सकें कि निर्णय–निर्धारण में वैश्विक आचार नीति को कैसे शामिल किया जा सकता है।

हम कुछ ऐसे विशेषज्ञों की खोज में हैं, जो एक साथ मिल कर, शब्द दर शब्द, पंक्ति दर पंक्ति, परिचर्चा करते हुए, एक नई साझी समझ को विकसित कर सकें और हमाारी पाठशालाओं में पढ़ाई जाने के लिए आचार नीति से जुड़ी नई वैश्विक समझ दे सकें। इसे धर्मों में आसानी से पाया जा सकता है। मैंने यह कच्चा ख़ाक़ा तैयार किया और इसे अपने हिंदू, ईसाई, बौद्ध व यहूदी मित्रों को दिया है।मेरा मानना है कि हमें मानवता के अंतिम संदर्भों तक आने के लिए कड़ा परिश्रम करना होगा। हर राष्ट्र, हर देश और हर प्रांत के पास कहने के लिए कुछ है। इस क्षेत्र में गंभीर गतिविधि के अभाव में, हम पूरे संसार में किसी दार्शनिक की तरह आचार नीति के बारे में बातें तो कर सकते हैं, परंतु किसी भी मसले को अपनी ओर से नैतिकता या अनैतिकता का जामा नहीं पहना सकते। सारी मानवता ईश्वर की संतान है और हम सभी ईश्वर के अधीन, एक परिवार की खोज में हैं और हमारा विश्वास है कि सारे परिवार, केवल एक ही पिता से संबंध रखते हैं परंतु हमें इस दिशा में कड़े प्रयास करने होंगे।

सभापति वसीलियो : हम अपनी ओर से कड़ा परिश्रम करेंगे, परंतु यह हमारे जीवनकाल में पूरा नहीं होगा, हमारे पौत्रों और प्रपौत्रौं के जीवनकाल में भी पूरा नहीं होगा।

प्रधान मंत्री मजाली : हमने 'निर्णय निर्धारण में आचार नीति' और विशेष तौर पर बैंकिंग और व्यवसाय के क्षेत्र में बहुत सारे विचार सुने। अब संसार के सबसे अधिक

प्रभावशाली लोग मीडिया से जुड़े हुए हैं। और दुर्भाग्यवश मीडिया की आचार नीति किसी न किसी रूप में, निर्णय निर्धारकों को निर्णय लेने में प्रभावित कर रही है। इस तरह हम जो भी बात करें, वह केवल निर्णय–निर्धारकों के लिए नहीं बल्कि मीडिया के लिए भी होनी चाहिए। दूसरा बिंदु है, कानून बनाने वाली सभा। संसद कानून बनाती हैं। यदि वे कानून बनाते हुए आचार नीति को ध्यान में रखें, तो मुझे लगता है कि वे इस क्षेत्र को प्रभावित कर सकते हैं। तीसरा बिंदु विज्ञान है। दुर्भाग्यवश, अब तक विज्ञान के क्षेत्र में आचार नीति के मामले को किसी ने नहीं उठाया है। जैसे ऐसी वस्तुओं के आविष्कार, जो लोगों के जीवनों को प्रभावित कर रहे हैं। इस तरह, मुझे लगता है कि हमें विज्ञान में भी आचार नीति के मसले पर ध्यान देना चाहिए।

डॉक्टर श्लेनसॉग : यहाँ हुई सारी बातचीत को सुनने के बाद, मैं आपको याद दिलाना चाहूँगा कि मेरे अनुसार हमें इस मामले में इतना निराश नहीं होना चाहिए। उदहारण के लिए, अगर आप पीछे मुड़ कर देखें, बीते चालीस–पचास वर्षों की ओर, तो ऐसे बहुत से बड़े सवाल हैं, जिन पर हमने बहुत प्रगति की है जैसे, इकोलॉजी, पश्चिमी जगत के समाजों में महिलाओं की स्थिति। वैसे शस्त्रीकरण के मामले में यह प्रगति पर्याप्त नहीं मानी जा सकती। हम पिछले चालीस–पचास सालों के दौरान इन सभी क्षेत्रों में सफल क्यों रहे? क्योंकि ये सब किसी एक व्यक्ति या छोटे संस्थानों से आरंभ हुए, जो इस विषय को अपने कार्यक्रमों में सबसे ऊपर लाए। फिर उन्होंने इसे धीरे–धीरे राजनीतिक एजेंडा के रूप में प्रस्तुत किया, सार्वजनिक रूप से चर्चा का विषय बनाया और राजनेताओं ने भी इन विषयों को राजनीतिक मसलों में शामिल किया। इसे हम चेतना निर्माण कहते हैं। चरण दर चरण। और मेरा मानना है कि व्यावसायिक आचार नीति के क्षेत्र में भी ऐसा ही है। आज से बीस वर्ष पूर्व, कोई भी बिज़नेस एथिक्स के बारे में बात तक नहीं करता था। परंतु अब यह अनेक विश्वविद्यालयों और कंपनियों में चर्चा का विषय है। तो मेरा कहना है कि हमें इन विषयों पर निरंतर अपनी आवाज़ उठाते रहना चाहिए और इंटरएक्शन परिषद ऐसा ही एक संगठन है, जो इस विषय को बहुत ही सशक्तता के साथ उठा सकता है।

मेरा दूसरा बिंदु, राष्ट्रपति ओबासंजो ने पूछा, "राजनेताओं के लिए प्रेरणा का स्त्रोत क्या हो सकता है या आचार नीति संबंधी व्यवहार के लिए क्या प्रेरणा हो सकती है?" यदि एक प्रभावी प्रेरणा की बात करें तो यह सार्वजनिक मत भी हो सकता है। जब मीडिया में चर्चा होगी, जब मीडिया में नीति संबंधी मामलों पर चर्चा होगी, जब समस्याओं के नीतिगत आयामों की समस्याओं पर चर्चा होगी तो हमारे पास इसे सार्वजनिक रूप से सबके सामने लाने और लोगों की राय जानने का अवसर होगा। कंपनियों और राजनेताओं के लिए

ज़रूरी है कि उनकी राय को जनता की स्वीकृति मिले। मुझे पूरा यकीन है कि हमें इन विषयों को मीडिया में बार–बार उठाने से बहुत मदद मिल सकती है।

तीसरा बिंदु है, टुबिन्जेन विश्वविद्यालय में, हमारे पास एक बिज़नेस एथिक्स संस्थान है और वहाँ हमारा फाउंडेशन भी है। इस विषय में वहाँ बहुत चर्चा होती और हमारे सामने दो मॉडल हैं, नया व पुराना मॉडल। पुराने मॉडल में नियमों और कानूनों की सीमाएँ हैं : जैसे, अनुपालन प्रबंधन व कार्पोरेट उत्तरदायित्व आदि। वह ठीक है; वह कारगर है। कई कंपनियाँ कई क्षेत्रों में दुरूपयोग को रोकती हैं। बिज़नेस एथिक्स में यह बिंदु बहुत महत्व रखता है।

परंतु अब चर्चा का नया विषय यह है कि 'यह पर्याप्त नहीं है, यह पर्याप्त नहीं है।' अगर हम अपने युवा पेशवेरों को व्यवसाय और राजनीति की शिक्षा देते रहे और उन्हें बताते रहे कि मनुष्य ऐसे होमो–इकनोमिक्स हैं, जो सदा अपने लाभों में वृद्धि चाहते हैं। यदि हम उन्हें मनुष्यों के इस दृष्टिकोण की शिक्षा देते रहे तो इस विषय में बदलाव नहीं ला सकेंगे। हमें उन्हें व्यवसाय के कार्यों पर एक नया नज़रिया पाने के लिए शिक्षित करना होगा जैसे राजनीति के कार्य और उनके दायित्व और भूमिकाएँ, तब हमें इस तंत्र में बदलाव लाने का एक मौका मिल सकता है। परंतु हमें केवल तंत्र में बदलाव का अवसर मिलेगा, हमें तंत्र से जुड़े नज़रिए में बदलाव लाना है और यही हमारी शिक्षा का विषय होना चाहिए। इस तरह, हमें बिज़नेस स्कूलों और विश्वविद्यालयों आदि में यही शिक्षा देनी आरंभ करनी चाहिए। हमें अभी बहुत दूर जाना है, परंतु हमें इसी तरह जाना होगा। हमारे पास कोई और विकल्प नहीं है।

सभापति वसीलियो : शिक्षा महत्व रखती है और हम सभी इस बात से सहमत भी हैं। परंतु यही काफ़ी नहीं और हमें इसके अलावा भी बहुत कुछ करना होगा। परंतु, हमारा रवैया निराशाजनक नहीं है। अगर हम निराश होते तो शायद आज हम सब इस परिचर्चा का हिस्सा न होते। हम जानते हैं कि इस बारे में प्रगति हुई भी है परंतु उसे ही पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

प्रधान मंत्री बदावी : हम एथिक्स यानी आचार नीति की बात कर रहे हैं क्योंकि यह एक महत्वपूर्ण मसला है। मेरे देश में यह मसला केवल सरकार और सिविल सर्विस का नहीं बल्कि अध्यापकों, पुलिस व बाकी सब से भी जुड़ा है। हम एथिक्स के महत्व पर बल देते हैं और यह देखते हैं कि अपने काम के लिए उत्तरदायी बनने के लिए उन्हें क्या करना होगा। यह महत्व रखता है पर अगर आप आचार नीति की बात करते हैं, तो इसका निर्धनता के संदर्भ में नाम नहीं लिया जाता। यह बहुत अहमियत रखता है।

लोग हमेशा निर्धनता की शिकायत करते हैं और जब आप निर्धनता की बात करते हैं तो वे इसका दोष बैंक, पेशेवर और अमीरों के सिर मढ़ देते हैं। वे सरकार से बहुत सारी चीज़ों की माँग रखते हैं क्योंकि वे संतुष्ट नहीं हैं। यह एक समस्या है। सुधार बहुत महत्व रखता है। बैंकों का सुधार महत्व रखता है। इस समय सुधार की बहुत ज़रूरत है और हमें ऐसे समाधानों के साथ सामने आना है जो जनता को संतुष्ट कर सकें। निर्धनता का तो नाश करना ही होगा।

श्री मुआमार : मुझे लगता है कि वैश्वीकरण एक समस्या है। जब स्टेम क्रांति की बात आती है तो सारा संसार एकजुट हो जाता है ताकि इस वैज्ञानिक स्टेम सेल समस्या से निपट सके। जब हमारे संप्रेषण की बात आती है तो हम कई जगह पिछड़ जाते हैं। हमने अभी तक पर्यावरण से जुड़े कई मसलों पर बात नहीं की जैसे अभी हम सोशल मीडिया से जुड़ी समस्या का भी सामना कर रहे हैं। हमारे लिए इस विषय में विचार करना बहुत महत्व रखता है क्योंकि यह तो शिक्षा से भी अधिक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली होता जा रहा है।

तो हम यह कैसे तय कर सकते हैं कि लोगों को प्रभावित करने के साधन कौन से हैं? मुझे लगता है कि इसमें स्कूल, परिवार, धार्मिक स्थल व मीडिया आदि का नाम ले सकते हैं। तो हम कुछ आम नियम कैसे बना सकते हैं जो सारे संसार को अपने साथ जोड़ सकें? संसार में आपसी हित भी आर्थिक हितों से प्रभावित हो रहे हैं। क्या हम इस बारे में कुछ कर सकते हैं? हमें अभी बहुत दूर तक जाना है और मुझे लगता है कि यह पहल हमें अपने से ही करनी होगी।

डॉक्टर मेट्टानंडो : थाइलैंड में नैतिक शिक्षा की समस्या पर बहुत चर्चा होती है। मैं मोरेलिटी और एथिक्स की सीनेट सबकमेटी से जुड़ा हुआ हूँ और हम मिल कर 'उत्तरदायी नागरिक' के विषय पर कार्यरत हैं, जिसमें हम इंटरनेट का प्रयोग करते हैं, हमने लोगों में सद्भावना के प्रचार के लिए कुछ कार्यक्रम किए हैं और समुदाय द्वारा, उन छात्रों को पुरस्कार भी दिए जाते हैं, जो सामुदायिक सेवाओं में शामिल होते हैं। हमें व्यवसाय जगत से भी योगदान मिलता है, जो मोबाइल फोन से जुड़ी एप्लीकेशंस के लिए अपना सहयोग देते हैं ताकि लोगों द्वारा समाज को दी गई हर गतिविधि के लिए उन्हें श्रेय दिया जा सके। इसे वेबसाइट पर रिपोर्ट किया जाता है और लोगों को समाजसेवियों की जानकारी मिलती है। इसे 'क्रेडिट सोशल सिस्टम' का नाम दिया गया है। इसे थाईलैंड में किया जा रहा है और हम उम्मीद करते हैं कि आई टी और सोशल मीडिया की मदद से हम और भी बेहतरी लाने में सफल होंगे।

सभापति वसीलियो : बहुत अच्छी बात है। हमारे पास बहुत अच्छे सुझाव आए परंतु एक और बात है, जिसमें सभी अपनी भूमिका निभा सकते हैं। हमें पारदर्शिता पर ध्यान देना होगा। राजनीति और व्यवसाय से जुड़े लोग यह रिपोर्ट दें कि उनके पास पैसा कहाँ से और किन साधनों से आया क्योंकि संसार के अनेक देशों यह पाया जाता है कि एक आम आदमी देखते ही देखते करोड़ों का मालिक बन जाता है। पता लगता है कि वह किसी सरकारी विभाग आदि में था। अगर उनके पास वार्षिक रिपोर्टिंग का तंत्र हो जो यह बता सके कि पैसा कहाँ से आया, तो इससे संसार के सुधार में बहुत मदद मिलेगी।

प्रोफ़ेसर हैन्सन : इन सभी प्रश्नों का एक उत्तर है, जिसमें ये सारी कार्य–प्रविधियाँ काम करेंगी। उत्तर है कि हमें सबको एक साथ आगे धकेलना होगा। जिसमें बुनियादी कार्पोरेट शासन संचालन, सार्वजनिक रिपोर्ट व पारदर्शिता आदि का नाम ले सकते हैं। सार्वजनिक दबाव और कार्पोरेट सहयोग के साथ ही इन नियमों को लागू करने के लिए दबाव दिया जा सकता है। लोगों में नियमों और कानूनों के लिए आम सहमति होनी चाहिए जिससे इस तरह के कानून बनेंगे और उनका पालन भी होगा, जैसा हमने हाल में कुछ देशों में होते हुए देखा। अभी हमें इन नियमों को लागू करना है और भ्रष्टाचार के मामलों पर अनुशासन की लगाम कसनी है। परंतु इस मामले में बहुत हद तक प्रगति हुई भी है।

इन सब बातों के बावजूद, अभी निजी कंपनी मालिकों की ओर से बहुत सारे रचनात्मक और नैतिक व्यवहार की उम्मीद बाकी है, जो अपने अंशधारकों पर अधिक बोझ डाले बिना, व्यवसाय को नैतिक रूप में चलाने की आवश्यकता को समझ रहे हैं और दूसरे अंशधारकों के हितों की भी रक्षा कर रहे हैं। यही 'रचनात्मक पूँजीवाद' तथा 'सजग पूँजीवाद' की आधार–रेखा है। अनेक कंपनियों में अपनी ओर से प्रयास जारी हैं। आशा की किरण दिख रही है परंतु इसे ही पर्याप्त नहीं माना जा सकता। हमें आगे भी नैतिक चिंतन के लिए दबाव बनाए रखना होगा। उत्तर यही है कि हमें ये सारे काम एक साथ जारी रखने हैं।

शिक्षा – मेरा पूरा जीवन पेशवरों को यह शिक्षा देने में बीता है कि उन्हें अपने व्यवसाय को उत्तरदायी तरीके से संभालना चाहिए। मैं कह नहीं सकता कि मैंने इस विषय में क्या प्रगति की। बेशक़ मेरे पास कोई आँकड़े नहीं पर इतना तो तय है कि मेरे छात्र मेरी बातों पर अमल अवश्य करते होंगे। इस तरह की शिक्षा पाने वाले छात्र अपने पेशेवर जीवन को सही रूप में देखते हुए, नैतिक रूप से काम करने की संभावना अवश्य रखते हैं।

अंत में, मैं डॉक्टर मजाली की बात पर गौर करना चाहूँगा। उनके अनुसार दूसरे क्षेत्रों की भी पेशेवर आचार नीति होती हैं। मुझे लगता है कि हमारे पास सरकार, मीडिया और एनजीओ; इन सबके लिए आचार नीति होनी चाहिए। इन सभी क्षेत्रों में, वैश्विक आचार नीति को लागू करने की चुनौती विद्यमान है। ये सभी आधुनिक समाज के महत्वपूर्ण संस्थान हैं

6. दिशा की ओर अग्रसर

सभापति : एच.इ. यासुओ फुकुदा, जापान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

अगर हम नौ बिलियन जनसंख्या की ओर देखते हैं तो सवाल यह पैदा होता है कि हम आचार व नीति पर आधारित मनुष्य प्रज्ञा को उत्पन्न कैसे करें, जो सबको शांति की ओर ले जा सके? हम सबके लिए वहनीय समाज की रचना कैसे कर सकते हैं? अंतिम सत्र में इन्हीं बातों पर चर्चा की गई। हालाँकि वे सब वक्ता अच्छी तरह जानते थे कि किसी एक सत्र में ऐसे कठिन विषयों पर कोई हल नहीं निकाले जा सकते, जिन पर सर्वसम्मति कायम की जा सके, ख़ासतौर पर तब, जब वे विषय विविध हों जैसे जनसंख्या विस्फोट, ऊर्जा, जल, भोजन, तकनीकी गुण व दोष। वैसे इस दौरान हमें ये संकेत और निर्देश अवश्य मिल गए कि हम मानवता के लिए एक बेहतर भविष्य की रचना कैसे कर सकते हैं।

पहले परिचयकर्ता, आदरणीय कोशिन ओटानी ने दूसरों के साथ समानुभूति और उनकी पीड़ा में सहभागिता और इस तथ्य पर अपनी चेतना को सजग करने की बात कही कि हमारा वर्तमान भविष्य पर गहरा प्रभाव रखता है। वैश्विक पूँजीवाद की भूख निरंतर उन प्राकृतिक संसाधनों को लील रही है, जिन्हें भावी संतति के लिए सुरक्षित रखा जाना चाहिए। आधुनिक समाज अपने ही किए के दुष्परिणामों को देख कर उससे पाठ लें, उसके लिए उनकी आत्म–सजगता बहुत महत्व रखती है, इस तरह वे अपने किए के परिणामों को देखने के बाद उसमें सुधार ला सकेंगे और अपने उत्तरदायित्व को अनुभव करेंगे। अपनी इच्छाओं को वश में रखने से आध्यात्मिक संपदा प्राप्त होगी। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि भावी पीढ़ियों, पौधों व पशुओं के अधिकारों के लिए मानवीय उत्तरदायित्व की सार्वभौमिक घोषणा होनी चाहिए।

दूसरे परिचयकर्ता : मैट्रोपोलिटन निफन का मानना है कि आचार नीति सत्य के ज्ञान, विवेक तथा मान्यता पर आधारित होती है। उन्होंने प्रेम व ईश्वर के न्याय के सशक्त नियमों का समर्थन किया। प्रेम ही मनुष्य के जीवन का शाश्वत व अनंत रूप है और इसे व्यक्तित्व की आंतरिक व्यवस्था के रूप में माना जाता है। मनुष्यों को ईश्वर के ही रूप में रचा गया इसलिए मनुष्यों के सह–अस्तित्व तथा आचार नीति के स्तरों के निर्माण के लिए आत्मसम्मान तथा दूसरों के प्रति प्रेम का होना अनिवार्य है। उन्होंने आशा प्रकट की कि हर सरकार इस विषय को पूरा सम्मान देगी। उनकी पूर्वी

आर्थोडॉक्स चर्च के अनुसार सहिष्णुता का अर्थ है, अपने ही व्यक्तित्व पर काम करना, उन्होंने बल दिया कि भावी पीढ़ी को कुछ मूल्यों के साथ सामने लाना ही होगा।

आदरणीय तुन अब्दुल्लाह हाजी अहमद बदावी ने बल दिया कि भावी पीढ़ियों के कल्याण का दायित्व राजनीतिक नेताओं पर है, जिन्हें अपने निर्णय निर्धारित करते समय मूल्यों पर पूरा ध्यान देना चाहिए। उन्होंने मलेशिया में, अभ्यास में लाए जाने वाले 'सिविलाइजेशन इस्लाम' के बारे में बताया, जो दस बुनियादी नियमों पर आधारित है जो इस्लाम के संयमित रूप पर बल देता है, इससे उन्हें नेृतत्व के स्तर पर निर्णय लेने में मदद मिलती है। उनका प्रमुख विषय यह था कि नेताओं के चुनाव दिखाते हैं कि वे किन मूल्यों को महत्व देते हैं और धर्म को व्यक्ति के भीतरी रूपांतरण में सहयोग देना चाहिए ताकि वह पूरे समाज में प्रतिबिंबित हो सके।

इस परिचर्चा के दौरान, राजनीतिक नेताओं पर द्वारा अनेक सुझाव दिए गए जैसे ऐसे शासन की खोज, जो केवल शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु ऊर्जा के प्रयोग को अनुमति दे, महिलाओं का सशक्तिकरण हो, विशाल परिवारों को दी जाने वाली वित्तीय मदद में कटौती हो, जन्म दर घटाई जाए, धन के अंतराल को भरा जाए, पश्चिम की 'बिक्री के लिए प्रजांतत्र' की प्रवृत्ति को संबोधित किया जाए।

उत्तरी अमेरिकावासियों का आध्यात्मिक दृष्टिकोण : मनुष्य व प्रकृति के बीच सामंजस्य की धारणा में विश्वास का परिचय दिया गया। यह पूर्वी एशियाई परंपरा के समान था, परंतु उस उपभोक्तावाद से बहुत अलग है, जो तेज़ी से प्रजातियों को विलुप्त कर रहा है। यह सुझाव दिया गया कि यदि ग्रह के साथ एक सह–अस्तित्व की एक संपूर्ण अवधारणा को समर्थन दिया गया तो इस तरह युवा पीढ़ी को पर्यावरण की रक्षा के लिए प्रेरित किया जा सकता है, इस तरह हमारी दुविधा का अंत होगा।

हालाँकि सबकी आम सहमति से ऐसा कोई उपाय सामने नहीं आया कि नौ बिलियन की जनसंख्या से कैसे निपटा जाए, परंतु सभी इसके विशाल दुष्प्रभावों से परिचित हैं। कुछ ने कहा कि अतीत में विकास के लिए अपनाए गए ढाँचे को दोहराया नहीं जा सकता। सबने मिल कर यह जानने का प्रयास किया कि क्या ग़लत था और इस बात पर बल दिया गया कि इन मसलों पर आवाज़ उठाना ही बड़ी चुनौती थी ताकि लोग समूह के इस विज़न पर ध्यान दे सकें। सहभागियों से अपेक्षा की गई कि वे संसार को अपनी ओर से बेहतर बनाने का प्रयास करेंगे। अब कुछ न करना, कोई विकल्प नहीं रहा।

संवाद व आपसी मेल–मिलाप के माध्यम से दूसरे धर्मों, संस्कृतियों व सभ्यताओं से सीख

परिचयकर्ता : एच.एचत्र आदरणीय कोशिन ओटानी, जोडो शिंशु होंगवान्जी–हा (प्योर लैंड सैक्ट, जापान)

लोगों की धार्मिक मान्यताएँ उस वातावरण व परिस्थिति में पनपती हैं, जिसमें उसका पालन–पोषण होता है। यह उनका आध्यात्मिक आधार बनता है, इसलिए उनके लिए प्रायः दूसरे धर्मों को समझना इतना सरल नहीं होता। मेरा मानना है कि हालाँकि धर्म कभी संघर्ष का कारण नहीं बन सकता। परंतु कई बार, दुर्भाग्यवश, यह इसे बढ़ा अवश्य सकता है। इस तरह सब कुछ इसी बात पर निर्भर करता है कि राजनेता व धार्मिक नेता तनावपूर्ण व संघषपूर्ण परिस्थितियों में धर्म का उपयोग कैसे करते हैं, इस तरह परिणाम पूरी तरह से बदल सकता है।

अगर हमें शांति स्थापना के लिए विभिन्न धर्मों व पृष्ठभूमियों से आए दृष्टिकोणों को ग्रहण करना है तो इनके लिए एक समान आधार बनाना होगा। भले ही वे एक–दूसरे की मान्यताओं की अवधारणाओं को न समझ सकें। परस्पर विवेक तथा चिंतन को पहचान देने से ही उनके बीच एक नाता बनेगा, संवाद बनाए रखने की योग्यता विकसित होगी और वे एक–दूसरे का सम्मान करना सीखेंगे। तब आई. ए.सी. की मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौमिक घोषणा सही मायनों में एक प्रभावी मापदंड होगी और संयुक्त राष्ट की मानव अधिकारों की घोषणा को भी बल मिलेगा।

मानवता के भविष्य का चिंतन

दूसरे विश्व युद्ध के बाद जब संयुक्त राष्ट्र आदि ने मानव अधिकारों की घोषणा की तो ऐसा लगने लगा मानो कि संसार निकट आ रहा था और साथ ही मानवता से जुड़े अन्य कई विचार भी ठोस रूप लेने लगे, हालाँकि यह केवल पूर्वी और पश्चिमी ब्लॉक में ही विभाजित हो कर रह गया। वे गहरे तनाव के बीच आपस में ही प्रतियोगिता करने लगे और अपने ही समाज का सुधार उनका लक्ष्य रह गया। वैसे अब मौजूदा हालात बदले हैं,,' जब तक हम आरामदेह हैं...।' आर्थिक वैश्वीकरण, देश की सरकार की स्थिरता व नागरिकों के कल्याण के लक्ष्य का अनादर करता है और संपदा का बहुत ही असमान विभाजन भी करता है।

इन दिनों वैश्विक पूँजीवाद वैज्ञानिक तकनीक का दुरूपयोग कर रहा है, संसार से इसके प्राकृतिक संसाधन छीन रहा है और साथ ही वे संसाधन भी लुटाए जा रहे हैं, जिन्हें भावी पीढ़ी के लिए बचाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, यह भी कहा जा सकता है हम अपने दायित्वों से मुख मोड़ रहे हैं जैसे पर्यावरणीय विनाश व पर्यावरणीय प्रदूषण, आने वाली पीढ़ियाँ भी इन्हें इसी रूप में पाएँगी। बड़े खेद से कहना पड़ता है कि जापान में भी ऐसे लोग हैं जो उदासीन भाव से कहते हैं, 'आने वाली संतति अपने–आप ही देख लेगी क उसे हमारे न्यूक्लियर पावर प्वाइंटों से निकले कचरे का निपटान कैसे करना है।'

मनुष्य इस समय भविष्य की चिंता छोड़ कर, केवल अपने ही बारे में सोचने वाला जीवन बनता जा रहा है, उसे अपने हित और कल्याण के सिवा कुछ नहीं सूझता, उसकी ये प्रवृत्ति बदलना वास्तव में बहुत कठिन है। यदि बौद्ध दृष्टिकोण से देखा जाए, तो एक व्यक्ति की असंयमित आत्म–प्रचार की इच्छज्ञ न केवल चिंता और उद्वेग का कारण बनती है, यह आधुनिक समाज की हिंसक प्रवृत्ति को रोकने में भी सफल नहीं हो पाती। यदि हमें अपनी इच्छाओं व लोभ पर रोक लगानी हो तो आत्म–सजगता से बेहतर तो कुछ हो ही नहीं सकता। यदि हमें इस आत्म–सजगता को सामने लाना है तो हमें अपने कार्यों के नतीजों व प्रभावों पर ध्यान देना होगा, भले ही ये कितने भयावह और दुखद क्यों न हों।

यदि हमारी वैश्विक अर्थव्यवस्था में आचार नीति का अभाव होगा, तो हमारे जानने से पहले ही, ये अन्य देशों व आने वाली पीढ़ियों पर भारी दायित्व लाद देंगी।

मैं आशा करता हूँ कि प्रत्येक धर्म मानवता के एक बेहतर के लिए अपनी ओर से कुछ लक्ष्य प्रस्तुत कर सकेगा। एक शिन बौद्ध अनुयायी होने के नाते, मैं एक ऐसे समाज का प्रस्ताव सामने रखना चाहूँगा जिसमें व्यक्ति, दूसरे व्यक्तियों के साथ मिल कर जीते हुए, आध्यात्मिक संतोष व संपूर्णता प्राप्त कर सके। इसका अर्थ होगा कि एक ऐसा भरा–पूरा समाज, जो भौतिक संपदा के मामले में किसी भी पक्षपात से परे हो, दूसरों की पीड़ा का अनुमान रखते हों, आपस में सब कुछ बाँटने व परस्पर सहयोग का भाव रखते हों। सशस्त्र संघर्ष व हिंसा व आचार नीति से रहित वैश्विक अर्थव्यवस्था न केवल समकालीन जगत की हानि कर रहे हैं बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी विशालकाय समस्याएँ पैदा करेंगे। जिस युग में संयुक्त राष्ट्र के मानव अधिकारों की घोषणा हुई, संभवतः वे अपने युग की सीमाओं के कारण पूरी तरह से लोगों के सामने नहीं आ सके, वे भावी पीढ़ियों पर पूरी तरह से अपने ध्यान को केंद्रित नहीं कर सके और न ही वर्तमान में अधिकारों को मूल स्वर दे पा रहे हैं। यदि हम स्वयं को आधुनिक समाज के उत्तरदायी नागरिक मानते हैं तो हमें इंटरएक्शन परिषद की

सार्वभौमिक दायित्वों का मान रखते हुए, पशुओं व पौधों के अधिकारों के साथ–साथ भावी पीढ़ी के अधिकारों को भी अपना समर्थना देना चाहिए। इसी नियम के आधार पर, मैं इंटर एक्शन के मानव अधिकारों की घोषणा में अपनी ओर से यह मत शामिल करने का प्रस्ताव रखता हूँ।

पहले, जब विज्ञान और तकनीक इतने विकसित नहीं थे तो प्रकृति की सीमाएँ भी थीं। इस तरह लोगों की भौतिकवादी इच्छाओं पर नियंत्रण रहता था। वहीं दूसरी ओर, मौखिक रूप से वर्णित आचार संहिता केवल बाहरी संयम है, जिसमें किसी तरह के दंड का भी प्रावधान नहीं है। इन्हें प्रभावी बनाने के लिए, हमें इन्हें अपने भीतर उतारना होगा।

हमें विकासशील देशों में सशस्त्रीकरण, परमाणु संयंत्र दुर्घटना, निर्धनता की त्रासदी तथा सैन्य विवादों से उत्पन्न हुए विनाश व दुख का सामना करना चाहिए। यदि हमें कुछ नहीं दिखता, यदि हम आज के संसार में लोग व उनकी पीड़ा को नहीं देख पाते तो हो सकता है कि हम उन्हें अपने ही समान मनुष्य न समझते हों। वर्तमान में, हमारे लिए यह बहुत महत्वपूर्ण हो गया है कि हम दूसरों की पीड़ा के साथ समानुभूति प्रकट करें और इस तथ्य पर अपनी चेतना को गहन बनाएँ कि वर्तमान भविष्य पर गहरा प्रभाव डालता है। अगर इस बिंदु को मस्तिष्क में रखा जाए जेनेटिक इंजीनियरिंग के माध्यम से परमाणु ऊर्जा का विकास व उसे लागू करना तथा जीवन से खिलवाड़, इस विषय पर खुल कर चर्चा और जाँच होनी चाहिए क्योंकि ये मुद्दे मानवता के भविष्य से संबंध रखते हैं और ये हमारी आने वाली संतति पर बहुत गहरे दुष्प्रभाव डालेंगे।

इसके अतिरिक्त, यह भविष्यवाणी की गई है कि इस सदी के अंत तक, हमारे पास लगभग नौ बिलियन जनसंख्या होगी और विश्व जनसंख्या में इतनी वृद्धि भी एक ऐसा मसला है, जो मानवता के भविष्य से जुड़ा है। दूसरे शब्दों में, जनसंख्या विस्फोट भावी आर्थिक विषमताओं का कारण बनेगा, उदाहरण के लिए भोजन का गंभीर संकट उत्पन्न हो सकता है। और हमारी आचार नीति से रहित इच्छाएँ, वैश्विक स्तर पर प्राकृतिक पर्यावरण को नष्ट कर देंगी। अब समय आ गया है कि हम मानवता की ऐतिहासिक प्रज्ञा को शामिल करें, जो हमें सिखाती है कि यदि हम अपनी इच्छाओं को वश में करेंगे, तो इससे हमें आध्यात्मिक संपदा की प्राप्ति होगी।

राजनीति, अर्थव्यवस्था तथा धार्मिक व दार्शनिक विचारों का एकमात्र उद्देश्य यही था कि मल रूप से लोग एक शांतिपूर्ण समाज में प्रसन्नतापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें। इसका आरंभ करने के लिए, हमें वैश्विक आचार नीति को अपनाना होगा, जिसे इंटरएक्शन परिषद ने मानवता के सामूहिक विवेक का नाम दिया है। यह वास्तव में

एक बहुत बड़ा काम है। इसे पाने के लिए, सभी धार्मिक व आदर्शवादी नेताओं को अपना कर्तव्य निभाते हुए, अपनी मान्यताओं, धारणाओं व सांस्कृतिक दृष्टिकोण के अनुसार वैश्विक आचार नीति को अपनाना चाहिए, भले ही उनकी संस्कृति और आचार नीति एक अखंड मान्यता पर आधारित हो अथवा नहीं! जब हम इस दायित्व को पूरा करेंगे, तब ये घोषणा सांस्कृतिक विवधिता से भी परे जाते हुए, सारे संसार में व्याप्त होगी और अपनी पूरी शक्ति के साथ प्रकट होगी।

वैश्विक संसार एकता के लिए एक चरण

दूसरे परिचयकर्ता : आदरणीय मैट्रोपोलिटन निफन

मास्को में पैट्रियाक ऑफ एंटियॉक के पादरी

प्राचीन काल से ही, दार्शनिक व धार्मिक व्यक्ति इस तथ्य के साथ संघर्ष करते आए हैं कि आप नीतिसम्मत किसे कहते हैं? पूरे संसार में, हर समाज ने अपनी ही परिस्थितियों के अनुसार अपनी ही परिभाषाएँ और नियम बनाए हैं।

मेरे लिए, आचार नीति को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है : धार्मिक व गैर–धार्मिक। दोनों ही नैतिक सत्य, विवेक व अनुभववाद तथा मान्यता के तीन स्त्रोतों से भरपूर हैं। मूल्यों के तंत्र का निर्माण ही इनके बीच सबसे बड़ा अंतर है। मूल्यों के किसी भी धार्मिक तंत्र में, ईसाई धर्म सहित, जिसके बारे में मैं बात करना चाहता हूँ, परम सिद्धांत पाए जाते हैं।

गैर–धार्मिक आचार नीति में आप बिना किसी दायित्व के स्वतंत्रता पाते हैं। फ्रेंच भौतिकविद् रेने लिखते हैं, "जब तक कि परम का अस्तित्व नहीं है, तब तक इसे अनिवार्य मान कर क्यों न अपनाया जाए?" परंतु उनका पालन–पोषण धार्मिक आचार नति के साथ हुआ, इसलिए वे आगे लिखते हैं, 'विशेष रूप से, जब मैं दूसरों को हानि नहीं पहुँचाता।' परंतु यदि इसे तर्कसंगत व क्रमागत होना है तो हमें वही कहना चाहिए जो दोस्तोवस्की का नायम अपने उपन्यास अपराध व दंड में कहता है : "यदि ईश्वर का अस्तित्व नहीं है तो हर चीज़ की अनुमति है।"

उदाहरण के लिए, इतिहास में हम पाते हैं कि कोई भी गैर–धार्मिक दार्शनिक तंत्र, अच्छे व बुरे तथा मनुष्य के अंतःकरण के स्वभाव के मापदंड का वर्णन नहीं कर सकते। मैं अनेक वर्षों तक सोवियत यूनियन में रहा और देखा कि उन्होंने किसी तरह एक

अधार्मिक समाज बनाने का प्रयत्न किया। यह एक विशालकाय परियोजना थी जिसके लिए विशेष दार्शनिक अवधारणा उत्पन्न की गई, जो सब कुछ वर्णित करती थी जैसे सृष्टि के आरंभ से ले कर अंत तक की कथा, केवल इसमें आचार नीति का अभाव था। मार्क्सवादी दर्शन भी असफल हो गया क्योंकि यह नहीं बता सका कि अंतरात्मा क्या है और हर मानव सभ्यता में अच्छे और बुरे की अवधारणा क्यों पाई जाती है। इसे उद्‌भव तथा नैतिक शिक्षा के संबंध में वर्णित, नज़रिए से वर्णित करना लगभग असंभव है।

धर्मनिरपेक्ष, गैर–धार्मिक नीति अंतःधार्मिक या अंतर्राष्ट्रीय संघर्षों का समाधान नहीं कर सकती क्योंकि वे सदा निजी और प्रासंगिक नैतिकता से जुड़े होते हैं और ऐसा ही भविष्य में भी होता रहेगा।

हममें से कोई भी यह शिकायत नहीं करता कि भौतिकी के नियम हमारी आजादी में बाधा देते हैं, परंतु उन्हें पढ़ने के बाद, हम उन्हें उसी तरह अपने लाभ के लिए प्रयुक्त करना चाहते हैं जैसे हमें नैतिक शिक्षाओं के साथ करना है। धार्मिक चेतना इस बात को अच्छी तरह समझती है कि जो प्रकृति के भौतिक नियमों के लिए उचित है, वही सर्जक द्‌वारा स्थापित नैतिक नियमों के लिए भी उचित है। वे हमारी स्वतंत्रता को बाधित नहीं करते बल्कि हमें नैतिक रूप से मुक्त करते हैं, हमें नैतिक नियमों को लागू करना चाहिए। इसके लिए हमें अच्छे और बुरे का ज्ञान होना जरूरी है और यह तभी संभव है, जब हमारे स्थिर परम सिद्‌धांत हो।

सारे इतिहास के दौरान, संसार में बहुत कुछ बदल गया है – समाज विकसित हुए हैं। वर्तमान में तकनीकी प्रगति मंत्रमुग्ध कर रही है। ऐसा लगता है जैसे ये प्रगति मानवीय या नैतिक समस्याओं को हल नहीं करती। परंतु इसके विपरीत, यह नए आचार नीति निदेर्शों, जैव नीति, चिकित्सा नीति, नीति में नैतिक पक्ष आदि की माँग उत्पन्न करती है।

बाइबिल की आचार नीति सामाजिक विकास पर आधारित नहीं, ये प्रेम और ईश्वर के न्याय के सशक्त नियमों पर आधारित है। प्रेम ही मनुष्य के जीवन का शाश्वत आधार और दिव्य आरंभ है, जो अस्थायी रूप से जीवन की सांसारिक समझ देता है। यह परिस्थितिवाद का दर्शन नहीं, जहाँ प्रेम और प्रेम से जुड़ी हर बात को अनिश्चित और व्यक्तिपरक माना जाता है। यह एक प्रकार से नामवाद का विरोधी है, नियमहीनता, जिसमें हेराक्लिटस का यह मत शामिल है कि आप एक ही नदी में दो बार अपना पैर नहीं रख सकते, और कोई भी सदा एक से रहने वाले परम सिद्‌धांत नहीं होते। बाइबिल के धार्मिक चिंतन में, प्रेम को व्यक्तित्व की एक आंतरिक व्यवस्था माना जाता है, जहाँ न्याय एक बाहरी व्यवस्था है। ईसाईयों की मान्यता है कि ईश्वर बुराई पर

विजय पाते हैं। संभवतः, पहली प्रतिक्रिया आश्चर्य से भरपूर होगी, क्योंकि अपने आसपास देखते ही, हम भयंकर विनाशों, हत्याओं, हिंसा व सांस्कृतिक विरासत के विनाश को देख सकते हैं। ईसाईयों के दृष्टिकोण से ये बस हमारे व्यक्तिपरक अनुभव हैं। हमारे निजी जीवन या किसी राज्य की आंतरिक सीमाओं या ग्रह में जो भी घटता है, वह हमारे आंतरिक जगत में है। यदि आधुनिक भाषा में कहें, यह एक आभासी यथार्थ है। हम शोक करते हैं, सहानुभूति दिखाते हैं, हम प्रसन्न होते हैं, हम आभार प्रकट करते हैं या कोसते हैं, यह केवल हमारा व्यक्तिपरक बोध है। परंतु यदि इतिहास व मेटा हिस्ट्री की बात करें तो निश्चित रूप से संसार में ईश्वर की, बुराई पर विजय देख सकते हैं।

हम मानते हैं कि मनुष्य ईश्वर की छवि के रूप में एक विशेष मूल्य रखता है। उससे उसका निजी मूल्य छीना नहीं जा सकता और समाज, राज्य व हमारे द्वारा उसे पूरा आदर दिया जाना चाहिए। निजी मर्यादा के साथ एक कीमत जुड़ी होती है, जो इस आधार पर कम या अधिक हो सकती है कि एक व्यक्ति अपने भीतर ईश्वर की छवि को कितना विकसित कर सकता है। तो जब तक हम ईश्वर के साथ हैं, सत्य और न्याय के लिए लड़ रहे हैं, तब तक मनुष्य का व्यक्तित्व मनुष्य की मर्यादा व गरिमा से मंडित रहेगा।

मैं जिस चर्च से जुड़ा हूँ, उसके अनुसार आत्म–सम्मान तथा दूसरों के प्रति सम्मान का भाव, आचारनीति से जुडे स्तरों को बनाने के लिए अनिवार्य है।

अधिकतर देशों में आचार नीति, नैतिक शिक्षा व सद्गुणों आदि का धार्मिक आधार रहा है। यहाँ तक कि नास्तिक शासनों का दावा करने वाले भी उन धार्मिक व आचार नीति से जुड़े नियमों को तोड़ नहीं सके, जिनके बीच उनका पालन–पोषण हुआ। उदाहरण के लिए, नास्तिक सोवियत यूनियन में, जब भी किसी व्यक्ति को राजदूत के पद पर बिठाया जाता तो वह तलाक नहीं ले सकता था और अपने जीवन काल में एक विवाह ही कर सकता था।

हम चाहते हैं कि किसी भी देश के कानून और राजनीतिक नेताओं द्वारा मनुष्य को पूरा सम्मान मिले। राज्यों द्वारा सुनिश्चित मानव अधिकार, प्रत्येक नागरिक की मर्यादा व गरिमा को निर्देशित करते हों। इन अधिकारों को नैतिकता से अलग करने का अर्थ होगा, अपवित्रीकरण, क्योंकि अमर्यादित गरिमा हो ही नहीं सकती। इस प्रकार, हम किसी भी व्यक्ति के अधिकारों व स्वतंत्रता को पहचान देते हैं क्योंकि वे मानवीय मर्यादा को उठाने में सहायक होते हैं।

देश में सत्ता प्रमुख तथा कानून बनाने वाले चाहते हैं कि उनके छोटे से परिवार पूरी मर्यादा व सम्मान के साथ जी सकें। यदि वे इसी इच्छा को पूरे देश पर लागू करें तो कितना अच्छा होगा। सभी देशवासी उनके लिए एक परिवार के समान हैं, जो आचार नीति से बने ढाँचे में जीना चाहते हैं। निजी और सार्वजनिक निर्णय लेते समय यह अनिवार्य है कि किसी भी देश की वैश्विक राज्य नीति का प्रचार किया जाए।

मुझे लगता है कि नीतिगत स्तरों का एक ढाँचा बनाना अनिवार्य है क्योंकि आधुनिक संसार में इनके अर्थ कुछ धूमिल पड़ने लगे हैं। सहिष्णुता का आधुनिक मॉडल सिखाता है कि कोई व्यवहार अनुचित नहीं होता, जबकि पारंपरिक ईसाई सहिष्णुता, सत्य की पूरी समझ के साथ अच्छा पड़ोसी बनने की सीख देती है। इसका अर्थ है कि हम दूसरों की मान्यता और विश्वास को बनाए रखने की अनुमति देते हैं परंतु इसके साथ ही हमें यह भी पूरा अधिकार है कि हम अच्छे और बुरे पर अपनी राय दे सकें। सहिष्णुता का आधुनिक मॉडल यह धारणा पैदा करने का ख़तरा खड़ा करता है कि लोगों की मान्यताओं के अंतर महत्वपूर्ण नहीं हैं।

हम जिस सहनशीलता का उपदेश देते हैं, वह चाहती है कि हम उनके प्रति भी द्वेष न रखें, जो आपको उचित नहीं मानते। सहनशीलता का अर्थ है, अपने ही व्यक्तित्व में निरंतर सुधार करना। यह सीखना बहुत अहमियत रखता है कि हमें आक्रामक रवैए के साथ, किसी के भी प्रति नकारात्मक नज़रिया नहीं दर्शाना चाहिए। इस तरह, ईसाई धर्म तथा आर्थोडॉक्स चर्च के दृष्टिकोण से, सहनशीलता की उचित अवधारणा है – प्रेम का सम्मान – जो कि सभी मनुष्यों के सह–अस्तित्व के लिए अनिवार्य है।

हमें अपने बच्चों का अच्छे और बुरे की शिक्षा देते हुए पालन करना होगा परंतु उन्हें यह भी सिखाना होगा कि वे दूसरों से भेदभाव न करते हुए, ईश्वर की छवि को अपने भीतर उतारने का प्रयास करेंगे। हमें कट्टरता से अपने पारंपरिक मूल्यों की रक्षा करनी होगी परंतु साथ ही यह संकल्प भी चाहिए कि भावी पीढ़ी हमसे ऐसी स्थिर व स्पष्ट अवधारणाओं की विरासत पाएगी, जो विविधताओं से भरे इस जगत में विश्वसनीय सहयोग दे सकेंगी।

परिचर्चा:

सभापति फुकुदा : यह सत्र हमारे चांसलर हेल्मुट श्मिट द्वारा रखे गए प्रश्न से आगे बढ़ा कि संभवतः आने वाले समय में विश्व की जनसंख्या नौ बिलियन के आसपास होगी। उन्होंने चिंता प्रकट की कि हम ऐसे संसार का सामना कैसे कर

सकेंगे। हम इस विषय पर विचार करना चाहेंगे और साथ ही हमें यह भी सोचना चाहिए कि अब से हमारी जीवनशैली कैसी होनी चाहिए।

धर्मों व राष्ट्रों के शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के बारे में, आदरणीय ओटानी और निफन के प्रदर्शनों में कुछ बिंदु सामान्य रहे, जो भविष्य के लिए बहुत महत्व रखते हैं और मैं आशा प्रकट करता हूँ कि धार्मिक नेता इस विषय को और आगे बढ़ाएँगे।

वहीं दूसरी ओर, बहुत से ऐसे मसले हैं जो महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ व्यावहारिक भी हैं जैसे ऊर्जा का प्रश्न, जो हमारे दैनिक जीवन, उद्योगों तथा आर्थिक गतिविधियों के लिए अनिवार्य है। ऊर्जा के प्रश्न के साथ ही बहुत सारी समस्याएँ उभरी हैं और हमें इस मसले पर, आने वाले दशकों को ध्यान में रखते हुए चर्चा करनी होगी। खाद्य समस्या भी मनुष्य के लिए बहुत महत्व रखती है। और इसके साथ ही जनंसख्या विस्फोट हमारे लिए जल की समस्या को भी गंभीर रूप में सामने लाने वाला है। विज्ञान और तकनीक की प्रगति प्रभावशाली रही है। सूचना तकनीक भी प्रगति पर है, परंतु हम यह पहले से नहीं कह सकते कि यह किस स्तर तक जाएगी। औद्योगिक क्षेत्र भी उत्पादन बढ़ने से प्रगति कर रहा है। ये सभी सवाल पैदा करते हैं कि ये हमारे समाज और उसके जीवन को कैसे प्रभावित करेंगे। अहम सवाल है कि हम ऐसे बदलावों के बीच, मनुष्यजाति को कैसे बनाए रख सकते हैं, जिससे मानव अधिकार, शांति व न्याय जैसे प्रश्न भी सामने आते हैं।

आशा करता हूँ कि आप सबकी मध्यस्थता में ये सभी प्रश्न भी उठाए जाएँगे। इसके अतिरिक्त, जीवन तकनीक के वश में है, जो मेरे अनुसार एक भारी विषय है, जिसमें यह प्रश्न भी शामिल है कि समाज को इसे किस सीमा तक अपनी घुसपैठ करने की अनुमति देनी चाहिए?

कल, शिक्षा के महत्व पर चर्चा हुई और इसे समस्या समाधान का एक पक्ष भी कहा गया। हमें समाज, राष्ट्र और मानव जाति के लिए यह प्रश्न पूछना चाहिए, "हमें किस प्रकार की शिक्षा चाहिए और आचार नीति ऐसी शिक्षा में अपनी क्या भूमिका निभा सकती है?" इस वैश्विक समाज में, ज्ञान का प्रसार अनिवार्य है। मुझे लगता है कि अगर हम सभी आपस में एक साझा पहचान पैदा कर सकते कि हमें आचारनीति का पालन करते हुए कैसा जीवन जीना चाहिए, तो यह बहुत अच्छा होता। परंतु वास्तविकता में तो इससे ठीक विपरीत हो रहा है। अगर इस सभा से ऐसे कुछ निर्देश सामने आ सके तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। निःसंदेह, हमें बहुत सारे प्रश्नों के उत्तरों को अगली आने वाली सभाओं के लिए छोड़ना होगा, परंतु मैं चाहूँगा कि धार्मिक नेता

हें कुल मिला कर निर्देश दें ; धर्म इस प्रकार की समस्याओं के लिए कैसे समाधान दे सकते हैं।

डॉक्टर कोशरू : हम जिस संसार में जी रहे हैं, उसके प्रति हमारा नैतिक दायित्व अब वह नहीं रहा, जो पहले हुआ करता था। दोनों ही आदरणीय वक्ताओं ने जिस महत्वपूर्ण बिंदु को उठाया, उसमें आंतरिक शांति व इस बात पर बल दिया गया कि हम अपनी इच्छाओं को कैसे वश में रख सकते हैं क्योंकि यही इच्छाएँ घातक परिणामों की जननी बनती हैं। परंतु हम यह भी जानते हैं कि वैश्वीकरण, मनोरंजन उद्योग, विज्ञान तथा तकनीक की उन्नति, अर्थव्यवस्था, बैंकिंग और वित्त से इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं। इसलिए प्रत्येक को सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ना होगा। हमे अपनी समस्या के समाधान का प्रबंध करना चाहिए या उन हालात पर ध्यान देना चाहिए, जिनमें हम रह रहे हैं।

दूसरा विषय परमाणु ऊर्जा से जुड़ा है। जी, परमाणु सशस्त्रीकरण एक ज़रूरी मसला है जो सारे समाज को नष्ट कर सकता है। परंतु अगर हम नौ बिलियन लोगों की ओर बढ़ रहे हैं, तो केवल परमाणु ऊर्जा ही हमारे लिए काम आ सकती है क्योंकि हमारे पास तेल, गैस व ऊर्जा के अन्य साधनों का अभाव होगा। परमाणु ऊर्जा को विविध नियंत्रणों में रखा जाना चाहिए, परंतु इसे आधुनिक जगत में ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत बनना होगा। विशेष तौर पर तब, जब हम नौ बिलियन जनसंख्या की ओर बढ़ रहे हैं।

प्रधान मंत्री क्रेटियन : आदरणीय चांसलर हेल्मुट श्मिट ने कल कहा कि नौ बिलियन की जनसंख्या हमारे लिए समस्या का कारण होगी। परंतु ऐसा होगा क्योंकि नियंत्रण के उपायों के बावजूद ये बढ़ती ही जा रही है। यह बढ़ती रहेगी और निश्चित रूप से जीवन प्रत्याशा की समस्या होगी। आज हम निर्धनता की बात कर रहे हैं और कल हमें भुखमरी के बारे में बात करनी होगी। क्योंकि हम इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए भोजन का प्रबंध करना होगा और फिर जल का संकट पैदा होगा। विश्व के कई हिस्सों में गंभीर जल संकट है। हमने क्यूबेक नगर में, इस बारे में बात की थी ताकि जल संकट के बारे में अनुमान लगा सकें। वहाँ भोजन के उत्पादन से संबंध नहीं रखता। पर जैसा कि हमने उस समय चर्चा की थी, चीन और मिडिल ईस्ट में जल संकट पैदा हो सकता है क्योंकि उनके पास बहुत कम पानी है और इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं। इस तरह बढ़ती जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए, हमें इन सभी समस्याओं पर चर्चा करना आरंभ कर देना चाहिए।

मुझ से पहले आए वक्ता ने परमाणु ऊर्जा के बारे में बात की। केवल परमाणु ऊर्जा ही ऐसी ऊर्जा है जिससे किसी तरह का प्रदूषण नहीं होता। सारी समस्या इसकी सुरक्षा से जुड़ी है। फिर जब कोई ऊर्जा का उत्पादन करता है तो सभी भयभीत होते हैं क्योंकि हम नहीं जानते कि कहीं वे उसका प्रयोग हथियार बनाने के लिए तो नहीं कर रहे, जैसे इरान में हुआ। इस ग्लोब को एक शासन पद्धति बनानी होगी, यह अनमुति देनी होगी कि जो भी बिजली पैदा करने के लिए परमाणु ऊर्जा बनाना चाहे, वह इसे बना सकता है, उन्हें राजनीतिक रूप से अड़चनें डालने से बचना होगा क्योंकि ऊर्जा का उपयोग दूसरे साधनों के लिए किया जा रहा है।

प्रधान मंत्री वान आख़त : इस परिचर्चा को यह रूप भी दिया जा सकता है, 'हम इस विश्व को नौ बिलियन की जनसंख्या तथा उन सभी विनाशों से कैसे बचा सकते हैं, जिन्हें आने से कोई नहीं रोक सकता?'। अब थोड़े से सादे बिंदु उठाना चाहता हूँ। आप सभी जानते हैं और यह कोई नया समाचार नहीं है कि ज्यों–ज्यों विकासशील देशों में कल्याण के स्तर ऊपर उठते हैं, जन्म दर नीचे जाती है। हम सभी यह जानते हैं, परंतु यह अभी पूरी तरह से कारग़र नहीं है। दूसरा बिंदु है, महिला सशक्तिकरण। हम बार–बार इस विषय में बात करते हैं, परंतु यह उतनी तेज़ी से आगे नहीं जा रहा, हालाँकि इसके फलस्वरूप महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा के प्रबंध सामने आए हैं।

तीसरे, हम सभी को अपने रेडियो स्टेशन, टी वी स्टेशन या वह सब बंद कर देना चाहिए, क्योंकि वे पर्यावरण विनाश से होने वाली समस्याओं को घटाने का प्रयत्न कर रहे हैं। और यहाँ उपस्थित सभी विद्वानों के सामने शीशे की तरह साफ़ है कि एक विनाश तेज़ी से आगे आ रहा है। केवल इसके बारे में चीख़–पुकार मचाने से कुछ नहीं होगा। लोगों को ज़ल्दी ही यह सीख लेना होगा कि धरती अब और दबाव सहन नहीं कर सकती। यह एक गंभीर मसला है और आने वाली पीढ़ियों को भी इसके विषय में सचेत किया जाना चाहिए। जलवायु में बदलाव, अगर हमें गल गोर को विश्व का नेता चुनना हो, तो आने वाले दशकों तक, मेरा वोट उनके लिए ही होगा। यह एक सादा सा कारण है और लंबे समय तक बहुत से लोगों ज़िंदगी और मौत का प्रश्न रहेगा।

और एक पूरी तरह से अलग बात, मैं एक यूरोपियन देश से हूँ। हम यूरोप में अकेले नहीं हैं। लोक हितकारी राज्य में हम वित्तीय सहयोग देते है। और इससे वाकई बड़े परिवारों को प्रोत्साहन मिलता है। यह एक भला काज है जिससे कई संतानों के माता–पिता को मदद मिलती है क्योंकि उनके लिए अकेले सब कुछ करना आसान नहीं होता पर सवाल यह पैदा होता है कि क्या अब समय नहीं आ गया है कि इस तरह की आर्थिक सहायता या कीमतों में छूट देनी बंद नहीं कर देनी चाहिए? समस्या यह है कि इसके कारण दूसरे

वित्तीय निष्कर्ष सामने आ सकते हैं, जो उत्पादन को हतोत्साहित कर सकते हैं और बच्चों पर इसका और भी बुरा असर हो सकता है।

मेरे प्रिय सह–सभापति, आपने बिल्कुल सही कहा। जल संकट को ध्यान में रखा जाए तो हम बहुत तेज़ी से एक बड़ी समस्या की ओर जा रहे हैं, यह सारी मानवजाति के लिए घोर संकट होगा क्योंकि हम पहले से ही शुद्ध जल की समस्या से जूझ रहे हैं। हमारी सारी तकनीकी योग्यताओं के बावजूद, हमारे प्रयास अभी अधूरे हैं और जल से विलवीकरण करने की प्रक्रिया भी बहुत महँगी है।

और अंत में, सुधीजन द्वारा दिए गए सुझाव को मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौमिक घोषणा में शामिल किया जा सकता है। परंतु अगर हमें इस पर कोई ठोस कार्य करना है तो हमें राज्य को भी उसके कर्तव्य निवर्हन में शामिल करना चाहिए ताकि वे भावी पीढ़ियों के लिए अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें।

सभापति फुकुदा : हमने अभी एक ऐसा वक्तव्य सुना, अगर वे एक नेता होते तो निश्चित रूप से मतदाता उन्हें ही वोट देते। यह बहुत ही बढ़िया था और हमें ऐसे ही वक्तव्य बनाने चाहिए। जिनमें सभी बातें सारगर्भित रूप में प्रस्तुत की गई हों।

प्रोफ़ेसर सैकल : प्रधान मंत्री क्रेटियन ने भोजन व जल–सुरक्षा का मसला उठाया और प्रधान मंत्री वान आख़्त ने पर्यावरणीय विनाश की बात की। मेरा मानना है कि भोजन और जल सुरक्षा का मसला जलवायु में परिवर्तन से जुड़ा और इसे स्वतंत्र रूप से नहीं लिया जा सकता और भूमंडलीय तापक्रम में बढ़ोतरी हमारे लिए एक बड़ा संकट बन कर सामने आ रही है। इन मसलों पर तभी काम हो सकता है, जब हम वैश्विक स्तर पर धन संबंधी परियोजनाओं को नए सिरे से विभाजित कर सकें। आज, आठ लोगों के पास विश्व की आधी धन संपदा है। ऐसे साधन अपनाए जाने चाहिए जो इन सभी समस्याओं को अंतःपरस्पर व अंतःसंबद्ध रूप में देख सकें।

और इसके लिए, हमें एक नई अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्था की ज़रूरत होगी। ये ऐसी समस्याएँ नहीं जिन्हें केवल इंटरएक्शन परिषद ही सुलझा सकेगी। परंतु वह अपनी सभा में इन समस्याओं को उठा सकती है और अपनी घोषणाओं का हिस्सा बना सकती है। हमें इन मसलों को उन लोगों तक पहुँचाना होगा जो वाकई अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्थाओं पर काम करते हैं। हमें प्रभावी रूप से, इन लोगों का ध्यान इस ओर खींचना होगा।

प्रधान मंत्री फ्रेज़र : अस्सी के दशक से, धन की असमानता में तेज़ी से वृद्धि हुई है। हम इस तथ्य से इंकार नहीं कर सकते कि यूरोप, उत्तरी अमेरिका या विश्व के किसी

दूसरे देश में रहने वाले ये बहुत धनी व्यक्ति, वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप, विनियमन में हुई ढील की उपज हैं। अब सभी इस ओर चल रहे हैं, क्योंकि हमसे कहा गया कि ऐसा करना सार्वभौमिक रूप से अच्छा था और निःसंदेह इसके लाभ भी सामने आए हैं।

परंतु विश्व के लगभग प्रत्येक देश में, किसी ने भी धनी और निर्धन की इस बढ़ती खाई को पाटने का कोई ठोस प्रयत्न नहीं किया है। ऐसा एक भी पश्चिमी देश नहीं, जो इन विभाजनों के कारण संकट न उठा रहा हो। यूनाईटेड स्टेट्स में, मेरे देश में भी धनी और अधिक धनी होते जा रहे हैं और मध्यमवर्गीय व्यक्ति के लिए अपने रोज़मर्रा के जीवन को चलाना और अपने परिवार के लिए कुछ कर पाना कठिन होता जा रहा है। अब, यह एक विश्वव्यापी समस्या बन गई है। अब वैश्विक कार्पोरेटों की ताकत, उन सरकारों से कहीं अधिक हो गई है, जिनके अधीन वे काम करते हैं, क्योंकि उनके पास अधिक धनराशि है। उनके पास अकूत संपदा है।

इसी प्रवृत्ति के साथ, हम देख रहे हैं कि कई देशों में, धन प्रजातंत्र को भी प्रभावित कर रहा है। हम कह सकते हैं कि कुछ देशों में प्रजातंत्र बिकने के कग़ार पर है और क्या अब भी उसे प्रजातंत्र कह सकते हैं? मैं विश्वास से नहीं कह सकता कि आज कितने देशों में सच्चा प्रजातंत्र है क्योंकि धन इस विषय में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि किसकी जीत हुई और कौन हारा। कार्पोरेट और धन का प्रभाव, किसी ग़लत व्यक्ति को भी जीत का सेहरा पहना सकता है। अगर हमें नौ बिलियन जनसंख्या वाले इस संसार को आचार नीति पर आधारित विवेक सौंपना है तो विनियमन द्वारा वैश्विक समस्याओं का समाधान करना होगा और उन कार्पोरेटों के बढ़ते प्रभाव को संभालना होगा जो इस समय सरकारों से भी अधिक प्रभावशाली पद पर हैं।

सभापति फुकुदा : क्या कोई ऐसा धार्मिक नेता है, जो इस विषय में बात करना चाहे कि इस जटिल संसार को धार्मिक दृष्टिकोण से कैसे संभाला जा सकता है? मानवजाति अपने लिए धन चाहती है किंतु धन का अत्यधिक प्रयोग कई प्रकार की विषमताएँ उत्पन्न कर सकता है, संघर्ष का कारण बन सकता है। अगर हम केवल अपनी सुविधा को ही ध्यान में रखें तो कई पर्यावरणीय संकट भी सामने आ जाते हैं। वैसे तो प्रजातंत्र को सरकार का सबसे बेहतर रूप कहा जाता है परंतु दूसरे लोगों की सुनें तो पता चलता है कि इस तंत्र में निर्णय लेने में समय लगता है या यह पॉपुलेरिज़्म की ओर ले जा सकता है। क्या यह शासन चलाने का बहुत अच्छा तरीका कहा जा सकता है? आप अपनी सद्भावना के साथ जो भी करते हैं, उसके विपरीत तथ्य भी सामने आ जाते हैं। अगर आप में से कोई धार्मिक दृष्टिकोण के साथ इन विषयों पर चर्चा कर सके तो मैं आभार मानूँगा।

डॉक्टर मेट्टानंडो : एक बौद्ध कहावत के अनुसार, बुद्ध ने एक भविष्यवाणी की थी कि आने वाले समय में दुनिया की जनसंख्या तेज़ी से बढ़ेगी परंतु लोगों का जीवन उच्चस्तरीय होगा और धनी व निर्धन के बीच समानता होगी। आपस में कोई भेदभाव नहीं होगा और मानवजाति आपस में सभी विसंगतियों को मिटा लेगी। यह बुद्ध ने कहा था इसलिए कुछ बौद्ध जनसंख्या के अधिक होने पर कोई बहस नहीं करते, परंतु उनका मानना है कि अेत में एक अच्छे और न्यायी समाज की रचना होगा, जिसमें अधिक जनसंख्या भी उच्च गुणवत्ता से भरपूर जीवन जी सकेगी।

रब्बी डॉक्टर रोसन : दो हज़ार वर्ष पूर्व, एक रब्बी फ़ैसला लिया गया था कि अगर अकाल पड़ा, तो तुम संतान उत्पन्न नहीं करोगे। यह अधिक जनसंख्या के संकट के प्रति एक विचित्र और विवादित धार्मिक प्रतिक्रिया थी। यहाँ तक कि इससे पूर्व भी, बाइबिल में लिखा है कि मनुष्य इस संसार का दायित्व संभालते हुए, इसका अभिभावक बने, इसका पोषण करे। इस तरह यह साफ़ है, समस्या यह नहीं है कि हम अधिक जनसंख्या के जिस संकट से जूझ रहे हैं, उसके लिए कोई धाार्मिक उपाय है या नहीं। हमारे पास इस जनसंख्या का पेट भरने के लिए संसाधनों का अभाव है और शांति व सह–अस्तित्व की समस्या के साथ–साथ यह संकट भी गहराता जा रहा है।

यह मसला केवल धार्मिक नेतृत्व का नहीं है। यह और भी बड़ी समस्या है। दरअसल, यह सृजन की समस्या है। हम एक अंसपूर्ण ब्रह्माण्ड में जी रहे हैं और इस बारे में नहीं जानते कि यह कैसे उभरा या कैसे रचा गया। तालमुद में कहा गया है कि नियम, कानून और नैतिक शिक्षाएँ देवदूतों के लिए नहीं, ये असंपूर्ण मनुष्यों के लिए बनाए गए। और मनुष्यों को ही उनका पालन करते हुए, उन्हें विकसित करना चाहिए।

इस समस ऐसी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, जो संभवतः अपने समय की सबसे बड़ी चुनौतियों में से हैं। और शायद हम इस बारे में भी सुनिश्चित नहीं हो पा रहे कि इन्हें कैसे सुलझाया जाना चाहिए। भले ही पहले लाठी और पत्थरों और अब जेट और बमों की बात हो, यह चुनौती निरंतर बनी हुई है और हमें इन समस्याओं का हल खोजना ही होगा, चाहे वह भौतिकवाद हो या वित्तीय नियंत्रण, भोजन हो या जनसंख्या, प्रकृति हो या युद्ध; ये मनुष्य के लिए निरंतर एक चुनौती बने रहेंगे।

हम इस समय राजनीतिक शरणार्थियों व आर्थिक प्रवासियों के मामले में उलझे हुए हैं। मानवतावादी चुनौती बहुत विशाल है। जो कोई भी अल्पसंख्यकों के विकास और प्रवास के बारे में अध्ययन करता हो, वह देख सकता है कि लाग किस तरह इन चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। कुछ सौभाग्यशाली रहे जो पश्चिमी देशों के लोकहितकारी क्षेत्र में पहुँच गए। अधिकतर शरणार्थी संघर्ष करने के लिए विवश हैं, अपने और अपने परिवारों का पेट

पालने के लिए संकट झेल रहे हैं और जानते हैं कि उन्हें स्वयं ही आगे बढ़ने का साहस संजोना होगा। इससे अक्सर मेजबान समाजों को लाभ होता है। परंतु कई बार इससे संस्कृति संकट भी पैदा हो जाता है जो बदतर हालात बना देता है। यह भी एक चुनौती है जो हमारे भीतर से सबसे श्रेष्ठ को बाहर लाने के स्थान पर बुराई को भी बाहर ला सकती है।

नोहा के जलप्लावन के अनेक प्राचीन संस्करण मिलते हैं, यह मानवता द्वारा सहे गए पहले संकट का दर्ज़ इतिहास है। कहानी का बाइबिल संस्करण विनाश को मानव की असफलता से जोड़ता है। फिर भी यह आशा का प्रकटीकरण है। हमारे पास एक और अवसर है और देखना यह है कि हम इससे लाभ उठा पाते हैं या नहीं।

परंतु आप और मैं, हम दोनों यह बात अच्छी तरह जानते हैं कि इस कक्ष के बाहर बहुत से लोग ऐसे हैं जो इसमें रुचि नहीं रखते। वे अपने डेस्कों पर बैठे, नोट कमा रहे हैं। वे वातावरण को प्रदूषित कर रहे हैं, सोने की खदानें खोद रहे हैं और मानवीय परिणामों की परवाह किए बिना धरती से सारी सामग्री निकाल रहे हैं। वे निर्माण और सेवाओं के लिए दूसरे मनुष्यों का शोषण कर रहे हैं।

हमारे पास जो अनुचित के लिए एक स्पष्ट दृष्टिकोण है। चुनौती यही है कि अधिक से अधिक लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाए। और ऐसा हमेशा से रहा है, चाहे वे मूसा हों, बुद्ध हों, जीसस हों या फिर मुहम्मद! उन्होंने सदा इन मसलों पर अपनी आवाज़ उठाई। वे सदा यही कहते रहे और कितनी बार उनकी बातें भी अनुसनी कर दी जातीं। परंतु हर पीढ़ी, हर समाज और हर समूह में ऐसे लोग सामने आते हैं, जिनके सामने एक विज़न होता है और वे अपनी बात न सुनी जाने की ग्लानि को पीछे धकेलते हुए, अपनी कुंठा को छिपाते हुए, विज़न के साथ बने रहते हैं। यही चीज़ हम धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों को प्रेरणा देती है। उन लोगों के नज़रिए को नहीं सुना गया, उन्हें उपेक्षित किया गया, उन्हें जान से मार दिया गया क्योंकि उन्होंने जो कहा वह गैर–लोकप्रिय या गैर–आरामदेह था।

हम व्यावहारिक रूप से यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि हम रातों रात सब कुछ बदल देंगे। परंतु हमें अपने विरोध का स्वर जारी रखना होगा। हमें बार–बार अपनी बातों पर बल देना होगा, इन्हें दोहराना होगा। हमें उन मूल्यों के लिए खड़ा होना होगा, जिनके बारे में, आज इस कक्ष में बात की गई। और यह हम पर ही निर्भर करता है कि हम यहाँ से जाने के बाद, संसार को बेहतर बनाने के लिए अपनी ओर से क्या प्रयत्न कर सकते हैं। कुछ न करना, यह कोई विकल्प नहीं है। और हम नहीं जानते कि हम अपने प्रयत्नों से क्या–क्या पा सकते हैं। हमें शांत नहीं रहना चाहिए।

मेट्रोपोलिटन निफन : हम बच्चों के जन्म को, ईश्वर के आशीर्वाद के रूप में लेते हैं। हम अब समस्या से जूझ रहे हैं कि हम नौ बिलियन की जनसंख्या का पेट कैसे भरेंगे? चर्च में विश्वास रखने के कारण, मेरा मतलब रोमन कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट व आर्थोडॉक्स से है; हमारा मानना है कि ईश्वर मदद करेगा। वह ईश्वर की छवि में रचे गए लोगों को अकेला नहीं छोड़ेगा, इस सभा में हम चर्चा कर सकते हैं कि इस मान्यता के लिए क्या करें। यह चर्च की एक विशुद्ध मान्यता है। और हम मानते हैं ईश्वर अपनी रचना की रक्षा स्वयं करता है।

प्रोफ़ेसर चांग : मैं आज बोलते हुए थोड़ा संकुचित हूँ क्योंकि मैं न तो कोई धर्मशास्त्री हूँ और न ही किसी विशेष धर्म से जुड़ा हूँ। परंतु मैं एक ऐसे समाज से हूँ, जिसे कंफ्यूशियस समाज कहा जाता है, कंफ्यूशियस पंरपरा। पिछले ढाई हज़ार सालों से हर छात्र को इस पंथ की शिक्षा दी जाती है।

जब महान पथ का अभ्यास होगा तो यह संसार सबका होगा। अच्छे लोग चुने जाएँगे और योग्य लोगों को काम मिलेगा। वचन निभाए जाएँगे और आपसी सामंजस्य बना रहेगा। इस तरह लोग केवल अपने माता–पिता को ही माता–पिता या केवल अपनी संतान को ही संतान नहीं मानेंगे। बच्चों की देखरेख होगी और बूढ़ों को उनका पूरा सम्मान मिलेगा। अगर किसी सामान की ज़रूरत नहीं होगी तो लोग उन्हें सड़कों पर छोड़ देंगे, उन्हें अपने घरों में नहीं रहेंगे। ऊर्जा या ताकत, यदि व्यक्ति द्वारा अभ्यास में न लाई गई तो वह उसके लिए नहीं होनी चाहिए। जब सभी प्रसन्न होंगे तो यह महान पथ पाया जा सकता है। यह एक धर्मनिरपेक्ष दार्शनिक कंफ्यूशियस का लक्ष्य था। फिर उन्होंने कहा, 'उस स्तर को पाने से पहले, उस महान सामान्य लक्ष्य को पाना है, अल्पसंख्यों की समृद्धि।' और अब वर्तमान चीनी सरकार मानती है कि वर्ष 2050 तक चीन इस लक्ष्य को पा लेगा। महान सामान्य लक्ष्य अभी बहुत दूर है।

मेरा निजी वक्तव्य है कि भारत की जनसंख्या 1.1 बिलियन के लगभग है और चीन की जनसंख्या लगभग 1.3 बिलियन के करीब है, जो कुल मिला कर 2.5 बिलियन बनते हैं। हमने आर्थिक विकास के जो मॉडल देखे हैं, अगर भारत और चीन उन विकास मॉडलों का वैसा ही प्रयोग करें तो हम जानते हैं कि हमारे सीमित संसाधनों के लिए गहरी प्रतियोगिता आरंभ हो जाएगी। उस समय उन सभी आचार नीतियों की भी उपेक्षा होगी, जिनके विषय में बात करने के लिए हम एकत्र हुए हैं। इस प्रकार, मेरा यह मानना है कि भले ही धार्मिक दृष्टिकोण से न देखा जाए या दो हज़ार साल के बाइबिल सदंर्भ भी न लिए जाएँ, पर केवल एक तार्किक मानवतावादी रवैया ही पर्याप्त होगा, हमें विकास के नए साधनों के बारे में विचार करना चाहिए, प्रारंभिक विकास मॉडल – जो मॉडल अठाहरवी, उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में चलता रहा, उसे अब केवल इन दो देशों द्वारा नहीं दोहराया नहीं जा

सकता। अभी हमारे पास इंडोनेशिया है, ब्राजील है, सारा अफ्रीका है। तो सारी मानवता के कल्याण तथा इस ग्लोब पर रहने वाले सभी लोगों के लिए, हमें आर्थिक विकास के अलग मॉडल के बारे में सोचना चाहिए। मैं राजनीतिक तंत्रों की बात नहीं कर रहा। हमें अपनी इच्छाओं पर रोक लगानी होगी ताकि हम ही अकेले सारे जल और संसाधनों का प्रयोग न करें। यह एक इंजीनियर का रवैया है। प्रोफ़ेसर एक्सवर्दी आपका आभार, इस विषय और सत्र के लिए धन्यवाद, आपने धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं से आग्रह किया कि वे हमारे लिए इन समस्याओं के कुछ समाधान प्रस्तुत करें। मैं कोई धार्मिक नेता नहीं, केवल एक नियमवादी हूँ परंतु मैंने उत्तरी अमेरिका में पहले कुछ राष्ट्रों के साथ काम करते हुए बहुत समय बिताया है। यहाँ भले धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टिकोण में ऐसा न हो, किंतु हमारे कबीलों में, हज़ारों सालों की पुरानी धार्मिक और आध्यात्मिक परंपराएँ हैं, वे उन मूल्यों के बहुत निकट हैं जो अभी आदरणीय ओटानी जी ने उठाए।

जब हम अपने ग्रह और संसाधनों की बात करते हैं तो हमारे कबीले यह मान्यता रखते हैं कि मनुष्य को अपने आसपास के परिवेश, धरती और जल के साथ एकात्म होना चाहिए; वे मानते हैं कि मनुष्यजाति धरती के दोहन के लिए नहीं बनी। मनुष्य की जाति उस महान आत्मा के चक्र का एक अंश है, यह उससे अंतःसंबंध रखती है। यह एक अलग दृष्टिकोण है, आध्यात्मिक दृष्टिकोण, जो उस उपभोक्तावाद से अलग है, जो यह कहता है कि ग्रह हमारी प्रजातियों की इच्छा पूर्ति के लिए बना है।

हमें अपनी इच्छाओं के भार तले, दूसरी प्रजातियों को नहीं दबाना चाहिए, हम ऐसे संसार की रचना कर रहे हैं, जहाँ वे नहीं रह सकते। यह समस्या साफ़ तौर पर देखी ज सकती है। जनसंख्या बढ़ने के साथ–साथ हालात और भी बदतर होते जा रहे हैं क्योंकि संसाधन घटते जाएँगे और उनके लिए प्रतियोगिता बढ़ती जाएगी।

इस तरह, हम इन दो बातों का मेल कैसे कर सकते हैं क्या हमारी धार्मिक या आध्यात्मिक मान्यता कोई रोक लगा सकती है? क्या यह हमें किसी तरह इस दुविधा का कोई दार्शनिक या आध्यात्मिक हल दे सकती है? अगर आप भी हमारे कबीलों की मान्यता पर विश्वास रखें तो आपको मानना होगा कि जल, धरती और वायु आदि भी मनुष्य की तरह महत्व रखते हैं और साथ ही यह भी मानना होगा कि जीवन के इन तत्वों का प्रतिनिधित्व हमारे कानूनी पर्यावरणीय तंत्र में भी होना चाहिए।

यह एक बड़ी ही अलग सी नीति और दृष्टिकोण है, जिसके आदर्श रूप को पाने के बारे में सोचा तक नहीं जा सकता। यह अवधारणा तो हमारी खपत, और अधिक खपत की अवधारणा से बिल्कुल अलग है। समस्या दिन–ब–दिन विकराल रूप ले रही है और केवल एक ही आशा की जा सकती है कि आने वाले समय में युवा पीढ़ी उत्तरी अमेरिका और

यूरोप के इन देशों से मिले इन मूल्यों को जाने और पर्यावरण के संरक्षण के लिए आगे आए। जो आचार नीति यह कहती है कि पेड़, पहाड़, नदी और धरती; ये सब हमारी तरह ही हैं तो इसका अर्थ है कि हमें अपनी खपत में कमी लानी होगी। यदि हम अपनी सोच, 'मैं और अधिक चाहता हूँ, मुझे भय है कि मुझे कम मिल रहा है' को नहीं बदलते तो ऐसा कर पाना कठिन होगा। जिस दिन हम धरती को भी अपनी तरह मान देने लगेंगे, उस दिन पर्यावरण का संरक्षण कोई बहुत बड़ा संकट नहीं रहेगा।

प्रोफ़ेसर चांग : मैं कहना चाहूँगा कि मनुष्य व प्रकृति का सामंजस्य, मनुष्यों का आपसी सामंजस्य तथा अपने साथ सामंजस्य भी कंफ्यूशियस दर्शन ही है

प्रोफ़ेसर हैन्सन : मैं केवल आपको रोमन कैथोलिकवाद के बारे में कुछ बिंदु बताना चाहता हूँ, जो कि पर्यावरणवाद और जनसंख्या से संबंध रखते हैं। मैं कोई धर्मशास्त्री नहीं, मैं तो कैथोलिक चर्च के सामाजिक व आवर्ती अध्ययन का छात्र हूँ। ये दस्तावेज़ पोप के नाम से, वेटिकन से जारी होते हैं। इसमें व्यावहारिक मामलों में लागू होने वाली आचार नीति की चर्चा होती है। उनमे से पहला पोप लियो आठवें के नेतृत्व में, 1891 में श्रम काननू पर आया था। हाल ही में जो दस्तावेज़ आए हैं, उनमें पर्यावरण की बात की गई है। यह आंदोलन ओल्ड टेस्टामेंट से चला आ रहा है, जिसमें पर्यावरण पर स्वामित्व न रखते हुए, उसका सरंक्षण करने की बात की गई है। दस्तावेज़ो में, रोमन कैथोलिक चर्च से जुड़े बहुत से लोगों ने अपने विचार रखे जो चर्च और पर्यावरणवाद के संबंध को नए सिरे से परिभाषित करना चाहते थे। इस तरह एक रोचक प्रक्रिया के साथ चर्च ने इस विषय में रुचि लेना आरंभ किया। नियम किसी रूप में सामने आते हैं, वह तो समय ही बताएगा किंतु पिछले पंद्रह सालों से उनके दस्तावेज़ों में पर्यावरण की चर्चा होने लगी है और ईसाई तथा आध्यात्मिक पर्यावरणवाद पर भी बल दिया जाने लगा है, जो आध्यात्मिक नियमों का ध्यान रखता है।

दूसरा विकास जनसंख्या के मसले से जुड़ा है। हाल ही के सालों में कैथोलिक चर्च का एक विवादित निर्णय रहा, 1968 के आवर्ती अध्ययन में पोप ने कहा कि कृत्रिम गर्भ निरोधी साधनों पर लगी पाबंदी जारी रहेगी। पोप छठे द्वारा स्थापित कमीशन ने अनुशंसा की कि कृत्रिम गर्भनिरोध को अनुमति दी जानी चाहिए। बहुत से आम लोगों व पादरियों की भी यही राय थी किंतु पोप ने नहीं मानी। नए पोप इस बारे में विचार कर रहे हैं, हालाँकि अभी यह देखना बाकी है कि वे किसी नतीजे पर आते हैं। उन्होंने दुनिया के रोमन कैथोलिक बिशप से कहा कि वे दूसरे लोगों से इस बारे में चर्चा करने के बाद, उन्हें अपनी रिपोर्ट दें और बताएँ कि जन साधारण इस विषय में क्या राय रखते हैं।

यू.एस. में एक यह तथ्य यह भी सामने आया है कि 88 प्रतिशत कैथोलिक महिलाओं ने गर्भ निरोधक साधनों का प्रयोग किया, जो कि बाकी जनसंख्या के साथ ही यही प्रतिशत है, जिससे यह पता चलता है कि पोप द्वारा लगाई गई पाबंदी को आम जनता ने नहीं माना। क्या वेटिकन पोप इस बात को जानने के बाद अपना निर्णय बदलेंगे, अभी इस बारे में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता परंतु इस विषय पर बातचीत का आरंभ भी एक महत्वपूर्ण मोड़ है। जो कैथोलिक गर्भ रोधी साधनों का प्रयोग कर रहे हैं, वे बढ़ती जनसंख्या के प्रति अपने नैतिक दायित्व की पूर्ति कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त और भी बहुत से लोग हैं जिन्होंने अपने निजी कारणों से इन साधनों का प्रयोग किया है। इस तरह अभी कैथोलिक चर्च की ओर से इस विषय में संवाद जारी है।

सभापति फुकुदा : हमारे सामने जो समस्याएँ और आने वाले भविष्य पर उनका क्या प्रभाव होगा, उनके उत्तर केवल परिचर्चा के माध्यम से नहीं दिए जा सकते। परंतु हम जो भी करें, हमें उसमें अति नहीं करनी चाहिए। आज दोपहर के सत्र में सामंजस्य और संयम पर ही चर्चा हुई। धर्म मनुष्य जाति की उत्तरजीविता के लिए विवेक स्फटिक के समान है। उस नज़रिए से, यहाँ धार्मिक नेताओं की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए आप सबको पूरी सक्रियता से अपने विचार प्रस्तुत करने चाहिए। यहाँ हो रही सारी परिचर्चा का सार प्रस्तुत करना सरल नहीं है, परंतु हम आशा करते हैं कि हम आपके कुछ सुझावों को अपना कर, उन्हें नीति निर्धारण के समय प्रयुक्त करेंगे।

———————————————————

भाग तीन

टुबिन्जेन इंटरफेथ संवाद से चुने गए दस्तावेज़

'विश्व राजनीति में विश्वों के धर्म एक कारक के रूप में'

7–8 मई 2007, टुबिन्जेन, जर्मनी

तीन अब्राहमिक धर्म

ऐतिहासिक उथल–पुथल – वर्तमान चुनौतियाँ

सेवानिवृत्त प्रोफ़ेसर हान्स कुंग का भाषण

1. स्थायी केंद्र व आधारशिला

2. युग–निर्माण संबंधी घोर परिवर्तन

3. वर्तमान चुनौतियाँ
4. एक वैश्विक नीति के लिए योगदान देने वाले तीन धर्म

परिचय :

हम इस संदेह के संकट से घिरे हैं – इस बार यह यहूदियों का नहीं बल्कि मुसलमानों का है। मानो वे सब अपने धर्म के प्रभाव से उत्तेजित हो कर, हिंसक हो उठे हों। जबकि इसके विपरीत ईसाई, अपने धर्म की शिक्षा के अनुसार अहिंसक, शांतिप्रिय और स्नेही जान पड़ते हैं...यह एक अच्छी बात है!

निःसंदेह समस्याएँ बहुत सी हैं, यूरोप में बड़े मुस्लिक अल्पसंख्यकों की समस्या है, पर अगर ईमानदारी से बात करें, बेशक हम एक प्रजातांत्रिक संवैधानिक शासन होने के नाते बलपूर्वक किए जाने वाले विवाह, महिलाओं के शोषण, प्रतिष्ठा के नाम पर की जाने वाली हत्याओं तथा मनुष्य के आदर–मान के नाम पर किए जाने वाले अन्य नृशंस अत्याचारों के विरुद्ध हैं। परंतु बहुत से मुस्लिम भी इस मिशन में हमारे साथ हैं। वे भी इस तथ्य से कष्ट पा रहे हैं कि सबको ही आलोचना का शिकार बनना पड़ रहा है। वे स्वयं को इस्लाम की कट्टर तस्वीर का हिस्सा नहीं मानते, क्योंकि वे इस्लामिक धर्म के निष्ठावान नागरिक बने रहना चाहते हैं।

अगर ईमानदारी से बात करें, जो लोग इस्लाम को अपहरणों, आत्मघाती हमलों, कार बम धमाकों तथा कुछ आतंकियों द्वारा सिर काटने की घटनाओं का दोषी मानते हैं, वे ही कैदियों के साथ हुए अत्याचारों और बुरे व्यवहार व यू.एस. सेना द्वारा किए गए हवाई हमलों तथा टैंक हमलों (केवल इराक में ही लाखों जानें गईं) के लिए ईसाई धर्म व यहूदी धर्म का दोषी ठहराते हैं। युद्ध के तीन साल बाद अमेरिका के नागरिकों को भी विश्वास हो गया है जिन्होंने तेल के लिए युद्ध तथा मिडिल ईस्ट में प्रभुत्व को प्रजातंत्र की लड़ाई और आतंकवाद के ख़िलाफ़ लड़ाई का नाम दिया, वे संसार को छलने का प्रयास कर रहे हैं, हालाँकि वे ऐसा करने में सफल नहीं रहे।

2003 के तीसरे वैश्विक आचार नीति व्याख्यान में, यूएन के सैक्रेट्री–जनरल कोफ़ी अन्नान ने कहा था, "अगर मैं, एक ईसाई होने के नाते यह नहीं चाहूँगा कि आप मुझे धर्मयोद्धाओं के कार्यों से परखें, तो मुझे भी दूसरों को परखते समय सावधानी बरतनी

होगी कि कहीं मैं उन्हें, धर्म के नाम पर आतंक फैलाने वालों के साथ तो नहीं देख रहा।"

इसलिए मैं आपसे पूछ रहा हूँ : क्या हमें अदले का बदला की प्रवृत्ति पर ही चलना चाहिए, जो हमें संकट के सिवा कहीं नहीं ले जा सकती?

नहीं, हमें हिंसा और युद्ध के लिए बुनियादी रवैए में बदलाव लाना होगा। और लोग हर जगह इसे मानते हैं, चाहते हैं। हालाँकि कुछ अरब और यूएस देशों में वे लोग सत्ता से आक्रांत हैं और अंधी सरकारें मीडिया के कारण दिग्भ्रांत हुई पड़ी हैं।

धर्मयोद्धाओं ने मध्ययुग से तथा वर्तमान में भी क्रॉस को मुसलमानों और यहूदियों (स्पेन) के विरुद्ध युद्ध का चिन्ह माना। ईसाई व मुस्लिम धर्म ने इतिहास में अपने आक्रामक तौर पर अपना प्रभाव बढ़ाया और अपने विपक्षी को ताकत से कुचल दिया। उन्होंने शांति की नहीं, युद्ध की नीति का प्रचार किया इस तरह यह समस्या और भी जटिल हो गई है।

हम सभी सूचना और जानकारी के सागर में गोते खा रहे हैं और ऐसे में हमारा संतुलन खो बैठना स्वाभाविक ही है। कई बार धर्मों से जुड़े विद्वानों को भी कहते सुना जा सकता है, 'वन वृक्षों को नहीं देख पाता।' तो उनमें से कुछ, अब बृहत्तर प्रसंगों में समाजशास्त्र पर चर्चा ही नहीं कर पाते क्योंकि अब वे इस योग्य ही नहीं रहे। मेरा मानना है कि हमें बदलावों को मानने के लिए कुछ नई श्रेणियाँ बनानी होंगी।

मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म का यह अध्ययन करें। अगर मैं सटीक रूप में बताना चाहूँ तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि हम तीन जटिल प्रश्नों पर चर्चा करेंगे।

– स्थायी केंद्र व आधारशिला, ऐसा क्या है जिसे बेशर्त संरक्षण दिया जाना चाहिए

– युग–निर्माण संबंधी घोर परिवर्तन, क्या बदला जा सकता है।

– वर्तमान चुनौतियाँ, जिन कामों को करने का दायित्व हमारा है।

– स्थायी केंद्र व आधारशिला, ऐसा क्या है जिसे बेशर्त संरक्षण दिया जाना चाहिए

यह एक बहुत ही व्यावहारिक प्रश्न है : हमारे प्रत्येक धर्म में, ऐसा क्या है, जिसे बेशर्त संरक्षण दिया जाना चाहिए। तीनों धर्मों में अतिवादी स्थितियाँ हैं : 'कुछ नहीं, बस इसे ही

संरक्षण दिया जाना चाहिए।' जबकि दूसरे कहते हैं, 'सब कुछ, सब कुछ का संरक्षण किया जाना चाहिए।'

– पूरी तरह से धर्मनिरपेक्ष ईसाई कहते हैं कि कुछ भी संरक्षित नहीं किया जाना चाहिए : वे ईश्वर या ईश्वर के पुत्र में विश्वास नहीं रखते, वे चर्च की अपेक्षा करते हैं और उनके प्रवचनों व धार्मिक उत्सवों से अलग रहते हैं।

अधिक से अधिक, वे ईसाई धर्म की सांस्कृतिक विरासत को संभाल सकते हैं : यूरोपियन कैथेड्रल्स या जोहान सैबेस्टियन बाक; ऑर्थोडॉक्स पूजन पद्धति के सौंदर्य शास्त्री या विरोधाभास के तौर पर पोप, एक प्रतिष्ठित व्यवस्था के स्तंभ रूप में पोप, हालाँकि वे उसकी काम संबंधी नैतिकता तथा अधिकारवाद को नकारते हैं।

परंतु पूरी तरह से धर्मनिरपेक्ष यहूदी भी कहते हैं कि किसी भी चीज़ को संरक्षित नहीं किया जाना चाहिए : वे अब्राहम के ईश्वर तथा कुलपति, वे उसके वचनों पर विश्वास नहीं करते, वे सिनेगॉग प्रार्थनाओं की उपेक्षा करते हैं और अल्ट्रा–आर्थोडॉक्स की खिल्ली उड़ाते हैं।

उन्हें अपने यहूदी धर्म के लिए एक आधुनिक विकल्प मिल गया है, जिसमें धर्म शामिल नहीं है – स्टेट ऑफ़ इज़रायल और होलोकास्ट की अपील। इससे भी एक यहूदी पहचान बनती है और धर्मनिरपेक्ष यहूदियों की एकता झलकती है किंतु प्रायः इसके साथ ही यह अरब के ख़िलाफ आतंक को भी जायज़ ठहराती है, जो मानव अधिकारों का हनन करता है।

–और पूरी तरह से धर्मनिरपेक्ष मुस्लिम भी कहते हैं कि किसी चीज़ को संरक्षित नहीं किया जाना चाहिए। वे एक ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं रखते, वे कुरान नहीं पढ़ते, उनके लिए मुहम्मद पैगंबर नहीं और वे शरीआ को भी नकारते हैं; इस्लाम के पाँच स्तंभ उनके लिए कोई भूमिका नहीं रखते।

इस्लाम को इसके धर्म से अलग कर, राजनीतिक इस्लामवाद, अरबवाद तथा राष्ट्रवाद के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है।

अब आप निश्चित रूप से समझ गए होंगे कि इस 'कोई संरक्षण नहीं' की विपरीत प्रतिक्रया में 'सब कुछ संरक्षण' को भी सुना जा सकता है। सब कुछ उसी तरह संरक्षित होना चाहिए, जैसे पहले कभी हुआ करता था।

"कैथोलिक नियमों व सिद्धांतों में जरा सा भी परिवर्तन नहीं होना चाहिए; यह सारा ढाँचा रोमन परंपरावादियों के लिए बनाया गया है।"

“हलाखा के एक शब्द की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए; हर शब्द के पीछे एडोनई की रज़ा है, अल्ट्रा आर्थोडॉक्स यहूदियों का विरोध करो।”

“कुरान के एक भी शब्द की उपेक्षा नही होनी चाहिए; प्रत्येक शब्द में अल्लाह छिपा है”, अनेक इस्लामिक मुसलमानों का कहना है।

आप देखिए : यहाँ तो पहले से ही सारे संघर्ष तय हैं, वे केवल तीनों धर्मों में नहीं बल्कि हर जगह उपस्थित हैं। जहाँ भी कहीं आक्रामक रूप दर्शाना हो, वहाँ ये काम आते हैं। परंतु वास्तविकता इनकी दुखदायी नहीं है। अधिकतर देशों में, अगर राजनीतिक, आर्थिक या सामाजिक कारक न हों तो ये अतिवादी स्थितियाँ बहुमत नहीं रखतीं। देश और काल के अनुसार, हमेशा ऐसे यहूदी, ईसाई और मुसलमान रहे हैं, जो भले ही अपने धर्म के प्रति आलसी या अज्ञानी होते हैं किंतु किसी भी तरह, यहूदी, ईसाई और मुस्लिम धर्म व जीवन में सब कुछ नहीं छोड़ना चाहते। वहीं दूसरी ओर, वे सब कुछ रखने को भी तैयार नहीं; बहुत से कैथोलिक रोम की बहुत सी नैतिक शिक्षाओं व सिद्धांतों को नहीं अपनाना चाहते और बहुत से प्रोटेस्टेंट बाइबिल के हर वक्तव्य को शब्दशः नहीं लेते; यहूदी अपने धर्म ग्रंथ के हर शब्द को नहीं मानते; और मुस्लिम शरीआ के सभी निमयों का पालन नहीं करते।

हो सकता है : अगर हम उन ऐतिहासिक रूपों व प्रकटीकरणों को नहीं देखते और हर धर्म के केवल आधारभूत ग्रंथ को ही लेते हैं – जैसे हम हिब्रू बाइबिल, न्यू टेस्टामेंट और कुरान को लें, इसमें कोई संदेह नहीं कि धर्म में अपनाए जाने वाले नियम, मौजूदा नियमों जैसे नहीं हैं और यहीं से एक केंद्र बनता है, धर्म के इस सार को धार्मिक ग्रंथों के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। तो यहाँ एक व्यावहारिक सा प्रश्न सामने आता है : हम सभी के धर्मों में सबको निरंतर बांध कर रखने वाला तत्व कौन सा होना चाहिए। यह तो साफ़ है कि सब कुछ संरक्षित नहीं होना चाहिए, केवल उसे ही संरक्षित किया जाना चाहिए जो धर्म का केंद्र, उसका सार और मूल विश्वास है। जॉन तेईसवें ने दूसरी वेटिकन परिषद में एक बहुत ही अच्छा व्याख्यान दिया था, जिसमें मैं अपने प्रिय सहकर्मी जोसेफ रेटज़िंगर के साथ धर्मशास्त्रीय सलाहकार के तौर पर उपस्थित था, जो अब पोप बैनेडिक्ट सोलहवें के पद पर हैं। हम वहाँ दो किशोर धर्मशास्त्रियों के रूप में उपस्थित थे! पर आप मुझसे और अधिक बुनियादी प्रश्न पूछें और मैं आपको ठोस किंतु संक्षिप्त उत्तर देने का प्रयत्न करूँगाः

आप मुझसे पूछ सकते हैंः

1. अगर ईसाई धर्म की आत्मा को बचा कर रखना है तो क्या संरक्षित किया जाना चाहिए? मेरे अनुसार ऐतिहासिक, साहित्यिक या समाजशास्त्रीय बाइबिल आलोचनावाद जो भी आलोचना, व्याख्या या हस्तक्षेप करे, ईसाईयों के आधारभूत ग्रंथ व हिब्रू बाइबिल के संदर्भ में देखे गए न्यू टेस्टामेंट के सार रूप में इसी विश्वास को मान्यता दी जानी

चाहिए कि जीसस एक मसीहा हैं और अब्राहम के एक ईश्वर के पुत्र हैं, जो आज भी ईश्वर की उसी आत्मा के माध्यम से कार्यरत हैं।'जीसस ही मसीहा, ईश्वर तथा ईश्वर का पुत्र है', इस स्वीकृति के बिना कोई ईसाई संप्रदाय या धर्म नहीं हो सकता। जीसस क्राइस्ट का नाम 'न्यू टेस्टामेंट के केंद्र' के ओज को प्रकट करता है। जिसे स्थिर अर्थ में नहीं समझा जाना चाहिए।

आप पूछ सकते हैं :

2. अगर यहूदी धर्म को उसका सार नहीं खोना तो उसे क्या बचा कर रखना चाहिए?

मेरा उत्तर : मेरे अनुसार ऐतिहासिक, साहित्यिक या समाजशास्त्रीय बाइबिल आलोचनावाद जो भी आलोचना, व्याख्या या हस्तक्षेप करे, हिब्रू बाइबिल के संदर्भ में इसी विश्वास को मान्यता दी जानी चाहिए कि एक ईश्वर तथा इजरायल के लोग एक हैं। इस वक्तव्य के बिना कोई इजरायली पंथ, हिब्रू बाइबिल या यहूदी धर्म नहीं हो सकता, 'अदोना ही इजरायल का ईश्वर है और इजरायल उसके बंदे हैं!'

और आप पूछ सकते हैं

3. और अगर इस्लाम को उसके असली रूप में बचा कर रखना हो तो क्या संरक्षित किया जाना चाहिए?

मेरा उत्तर : कुरान के अलग–अलग सुरा को एकत्र करने, व्यवस्थित व संपादित करने की प्रक्रिया कितनी भी जटिल क्यों नहीं थी। सभी ईमान लाने वाले मुसलमानों के लिए, कुरान अल्लाह का शब्द और ग्रंथ है। और भले ही मुसलमान मक्का सुरा और मदीना सुरा के बीच कोई अंतर पाते हों या उसकी अलग व्याख्या देख रहे हों तो भी कुरान का संदेश पूरी तरह से स्पष्ट है। "अल्लाह के सिवा कोई अल्लाह नहीं, और मुहम्मह उसके पैगंबर हैं।"

यह इजरायल के लोगों का ईश्वर से विशेष संबंध है (जो यहूदी धर्म का सार है।), यह यह जीसस का उसके ईश्वर और उसके पिता से विशेष संबंध है (जो ईसाई धर्म का सार है), यह कुरान का अल्लाह तथा धर्म के केंद्र से विशेष संबंध है, जो इसके आसपास ही बनता और पनपता है। इस्लामिक लोगों के इतिहास के बावजूद, यह इस्लामिक धर्म की बुनियादी अवधारणा रहेगी जिसे कभी बदला नहीं जा सकता।

इन तीनों धर्मों के जिन विशिष्ट लक्षणों को बचाया जाना चाहिए, उनमें कुछ तो समानता है और कुछ ऐसा है, जो उन्हें आपस में अलग करता है।

– यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म में क्या समानता है?

एक ईश्वर तथा अब्राहम के एकमात्र ईश्वर में विश्वास, जो दयालु, महिमामयी तथा सभी मनुष्यों का संरक्षक और न्यायकर्ता है। विश्व इतिहास और व्यक्तिगत जीवन का चक्रीय दृष्टिकोण नहीं बल्कि अंत की ओर निर्देशित ; पैग़म्बरी आकृतियों, एक नियमों से बंधा ढाँचा तथा सामान्य आचार संबंधी स्तर।

–और इनमें क्या अंतर है?

यहूदी धर्म – इजरायल ईश्वर के लोगों की धरती है (इजरायली के लिए अनिवार्य)

ईसाई धर्म – जीसस ईश्वर का मसीहा और पुत्र है

इस्लाम धर्म – कुरान अल्लाह का शब्द और क़िताब है।

इन तीनों धर्मों के मूल में यह तथ्य समान रूप से पाया जाता है:

– प्राचीनकाल से ही मूल रूप

– सदियों से लंबे इतिहास की निरंतरता

– भाषा, लोगों, संस्कृतियों तथा देशों के बावजूद एक पहचान

हालाँकि, यह केंद्र, यह आधार, धर्म का यह सर कभी एकांत में नहीं रहा। यह समय–समय पर अपने–आपको बदलती माँग के अनुसार परिवर्तित करता रहा है। टोनीबी : चुनौतियाँ व प्रतिक्रियाएँ! धर्मशास्त्रियों, इतिहासविद्ों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए यह बहुत महत्व रखता है कि वे ऐतिहासिक कालक्रम के अनुसार, पद्धतिबद्ध धर्मशास्त्रीय मेल प्रस्तुत करें, जिसके बिना एक ठोस आधार तैयार कर पाना असंभव होगा।

2. युग–निर्माण संबंधी घोर परिवर्तन, क्या बदला जा सकता है।

जब भी युग निर्माण संबंधी परिवर्तनों की बात की जाती है तो समय–समय पर, समाज, विश्वास से जुड़े संप्रदाय, विश्वास की घोषणा आदि के माध्यम से तीनों धर्म, इस मूल केंद्र की नए सिर से व्याख्या करते आए हैं। ईसाई, यहूदी तथा इस्लाम धर्म का यह इतिहास असाधारण रूप से प्रभावशाली रहा : धर्म से जुड़े विश्व इतिहास की नई चुनौतियों की प्रतिक्रिया के बदले में, पहले थोड़ा किंतु ईसाई व इस्लाम धर्म के मामले में तेज़ी से परिवर्तन आया, जिसमें धार्मिक परिवर्तनों की पूरी श्रृंखला देखी जा सकती है, दीर्घकालीन रूप से ये बदलाव क्रांतिकारी आदर्श परिवर्तन बन कर सामने आए। यह अवधारणा मैंने एक वैज्ञानिक इतिहासविद् थॉमस एस. कुन्ह, से सीखी है, 'द स्ट्रक्चर ऑफ साइंटिफिक

रिवोल्यूशन' (1962): "कोपरनिकन क्रांति में क्या बदलाव हुआ? सूरज, चाँद और सितारे तो वही हैं परंतु हममें बदलाव आया हैः हमारा उन्हें देखने का नज़रिया, हमारा वैश्विक नज़रिया – उसमें एक आदर्श बदलाव आया है। सारे मूल्यों, मान्यताओं व प्रविधियों में बदलाव आया है। सारे संप्रदायों द्वारा दिए गए सिद्धांतों में बदलाव आया है।" मैं इसी सिद्धांत को पहले चर्च के इतिहास और फिर दूसरे धर्मों पर लागू करूँगा। सुधार में क्या परिवर्तन आया? ईश्वर, क्राइस्ट तथा ईसाई धर्म की आत्मा वही रही किंतु लोगों के दृष्टिकोण, आदर्शों व मान्यताओं में बदलाव आया।

पैराडिग्म विश्लेषण की मदद से महान ऐतिहासिक ढाँचों और रूपांतरणों को जाना जा सकता है, हमें उनके बुनियादी चल व निर्णायक अचल कारकों पर एक साथ ध्यान देना होगा। इस तरह, हम किसी एक धर्म के लिए, ऐसा ढाँचा तैयार कर सकते हैं, जो यह बताएगा कि युग निर्माण के संदभ में उस धर्म में क्या और कैसे बदलाव आए।

युग निर्माण संबंधी आदर्श ढाँचे के लिए, मैंने ईसाई धर्म के इतिहास का प्रयोग में लाते हुए निम्न अध्ययन प्रस्तुत किया हैः

–आरंभिक ईसाई धर्म के लिए यहूदी सर्वनाश संबंधी प्रतिमान

– क्रिश्चयन एंटीक्विटी का सार्वभौमिक हेलेनिस्टिक प्रतिमान

–मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक प्रतिमान

– सुधार के लिए प्रोटेस्टेंट प्रतिमान

–तर्क व प्रगति पर आधारित आधुनिकता का प्रतिमान

–पश्च–आधुनिकता का सार्वभौमिक प्रतिमान

पहली अंतर्दृष्टि : हर धर्म एक स्थिर सत्ता के रूप में प्रकट नहीं होता, जिसमें सब कुछ वैसा ही होगा, जैसा कि पहले हुआ करता था। इसकी बजाए, प्रत्येक धर्म एक जीवित और विकासशील यथार्थ के रूप में सामने आता है, जो अनेक युग निर्माण संबंधी परिवर्तनों से हो कर गुज़रा है। यहाँ एक निर्णायक अंतर्दृष्टि यह है कि प्रतिमानों को वर्तमान तक लाया जा सकता है और यहूदी व इस्लाम धर्म के लिए भी मूल्यवान होगा। इसे आगे की पंक्तियों में दर्शाया गया है। यह सटीक 'विज्ञानों' के संदर्भ में विपरीत हैः पुराने प्रतिमानों को गणित व प्रयोग के माध्यम से झूठा सिद्ध किया जा सकता है' : नए प्रतिमानों के संदर्भ में लिए गए निर्णयों को, दीर्घकाल में साक्ष्यों द्वारा विवश किया जा सकता है। परंतु आप धर्म और कला के क्षेत्र में पाएँगे कि, वस्तुएँ अलग होती हैं; धर्म, नैतिकता व अनुष्ठानों के मामलों को गणित या प्रयोगों से हल नहीं किया जा सकता। इस तरह यह आवश्यक नहीं कि धर्म

के पुराने प्रतिमान या आदर्श यूँ ही ओझल हो जाएँगे। वे नए प्रतिमानों के साथ, सदियों तक बने रह सकते हैं जिनमें नए और पुराने नियमों व प्रतिमानों का बहुत सुंदर मेल होता है।

बः इसी तरह, मैंने यहूदी धर्म में भी यहूदी धर्म के इतिहास के स्थूल–प्रतिमान तैयार किए हैं:

– शासन निर्माण से पूर्व कबीलाई प्रतिमान

–राजधानी का प्रतिमान : राजसी युग

–धर्म तंत्र का प्रतिमान : पोस्ट–एक्सिलिक यहूदीवाद

– मध्ययुगीन प्रतिमान : रब्बी और सिनेगॉग

–आधुनिक प्रतिमान –सम्मिश्रण

– पश्च–आधुनिकता का सावभौमिक प्रतिमान

दूसरी अंतर्दृष्टि : धर्मों की स्थिति का अनुमान लगाने के लिए विभिन्न प्रतिमानों की निरंतरता तथा आपसी बैर का पता लगाना बहुत महत्व रखता है। यह दूसरी महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि है, क्यों? वर्तमान में, एक ही धर्म के लोग, विभिन्न आदर्शों या प्रतिमानों के बीच जीते हैं। वे निरंतर जारी रहने वाली बुनियादी अवस्थाओं तथा ऐतिहासिक तंत्रों द्वारा गढ़े गए हैं। उदाहरण के लिए, ईसाई धर्म में आज भी कुछ कैथोलिक ऐसे हैं, जो आध्यात्मिक रूप से तेरहवीं सदी में जी रहे हैं। पूर्वी आर्थोडॉक्स के प्रतिनिधि चौदहवीं सदी की आध्यात्किता में जी रहे हैं। और अब भी कुछ प्रोटेस्टेंट, सोलहवीं सदी के नियमों में ही प्रसन्न हैं, जो कोपरनिक्स और डार्विन से भी पहले के सुधारवादियों के साथ हैं।

अगर आज हम यहूदी और इस्लाम धर्म के प्रति देखें तो यह निरंतरता वहाँ भी विद्यमान है और लोग अलग–अलग आदर्शों के बीच जी रहे हैं।

ठीक इसी प्रकार, कुछ अरब अब भी एक महान अरब साम्राज्य का सपना देखते हैं और सारे अरब निवासियों को एक अरब राष्ट्र के तले देखना चाहते हैं, जिसे पैन–अरबवाद का नाम दिया गया है। दूसरे व्यक्ति, लोगों को अरबवाद में नहीं इस्लाम में एक देखना चाहते हैं। वे पैन–इस्लामवाद के प्रवर्तक हैं। कुछ अल्ट्रा–आर्थोडॉक्स यहूदी मध्ययुगीन यहूदीवाद में अपना आदर्श देखते हैं और इजरायल के आधुनिक शासन को भी नकारते हैं। इसी प्रकार, कुछ यहूदी डेविड और सोलोमन के साम्राज्य की सीमा में अपना शासन चाहते हैं, जो केवल कुछ दशकों तक ही रहा।

स. सन् 2006 में, ऑनवर्ल्ड ऑक्सफोर्ड द्वारा प्रकाशित, मेरी इस्लाम संबंधी पुस्तक में, इस्लाम के इतिहास का स्थूल–प्रतिमान ढाँचा प्रस्तुत किया गया हैः

–मौलिक इस्लामिक समुदाय का प्रतिमान

– अरब साम्राज्य का प्रतिमान

– विश्व धर्म के रूप में इस्लाम का क्लासिक प्रतिमान

– उलेमा और सूफ़ियों का प्रतिमान

– आधुनिकीकरण का इस्लामिक प्रतिमान

– पश्च–आधुनिकीकरण का सार्वभौमिक प्रतिमान।

तीसरी अंर्तदृष्टि : यह अंतिम व दीर्घकालीन विशेषता, भूतपूर्व धार्मिक प्रतिमानों की निरंतरता व बैर ही, धर्मों के बीच व धर्म के लिए परस्पर संघर्ष का कारण है और यही विभिन्न प्रवृत्तियों, दलों, तनावों, विवादों व युद्धों का कारण भी है। तीसरी अंतर्दृष्टि, जो कि यहूदी, इस्लाम और ईसाई धर्म के लिए पैदा होतीी है, वह यह है कि यह धर्म अपने मध्य युगों के लिए कैसी प्रतिक्रिया देता है और यह आधुनिकीकरण के लिए क्या प्रतिक्रिया देता है, जहाँ तीनों धर्म अपने–अपने रक्षण में जुटे दिखते हैं। सुधारवाद के बाद ईसाई धर्म को एक और प्रतिमान बदलाव से गुजरना पड़ा, प्रबोध। फ्रेंच क्रांति तथा नेपोलियन द्वारा एनलाइटमेंट का अनुभव पाने के बाद यहूदी धर्म में सुधार हुआ, इसने धार्मिक सुधार का अनुभव भी पाया। इस्लाम किसी भी धार्मिक सुधार से नहीं गुजरा और वर्तमान में भी, इसकी आधुनिकीकरण व इसके मूल तत्वों, अंतःकरण व धर्म की आजादी, मानव अधिकारों, सहिष्णुता तथा प्रजातंत्र के साथ विशेष तौर पर समस्याएँ हैं।

3. वर्तमान चुनौतियाँ

आप स्वयं इनका अनुभव पा सकते हैं :

आधुनिक प्रतिमानों व आदर्शों को मानने वाले अनेक यहूदी, ईसाई व मुसलमान दूसरों के साथ बेहतर व्यवहार करते हैं, वे उन लोगों की तुलना में बेहतर हैं जो आज भी धर्म के पुराने आदर्शों से जुड़े हैं। इसके विपरीत, मध्य युग में जकड़ा रोमन कैथोलिकवाद, काम संबंधी नैतिकता के मामले में, इस्लाम व यहूदी धर्म के मध्ययुगीन तत्वों से मैत्री भाव रख सकता है। (कैरो, यूएन जनसंख्या सम्मेलन, 1994)

जो लोग शांति और समाधान चाहते हैं, वे आलोचनात्मक और स्व–आलोचनात्मक प्रतिमान विश्लेषण को अनदेखा नहीं करेंगे। तभी इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर दिए

जा सकते हैंः ईसाई धर्म के चल और अचल तत्व कौन से हैं, इनमें निरंतरता और अनिरंतरता कहाँ है? इनमें सहमति और विरोध कहाँ है? यही चौथी अंतर्दृष्टि है। सारे धर्म, सारे सार और धर्म की बुनियाद में ऐसा क्या है, जिसे संरक्षित किया जाना चाहिए। केवल स्थिर तत्वों को लेते हुए, अस्थिरता को त्याग देना चाहिए। प्रत्येक धर्म में केवल उन नियमों को ही मान्यता दी जानी चाहिए जो उसके मूल रूप से जुड़े हों, बाकी सबको बदलते समय और परिस्थितयों के अनुसार छोड़ा जा सकता है।

वैश्वीकरण के इस युग में, धार्मिक भ्रांति के बीच, प्रतिमान विश्लेषण एक वैश्विक केंद्र पाने में सहायक होगा। इस प्रश्न से परे, हम स्वयं को एक ऐसी स्थिति में पाते हैं जहाँ अंतर्राष्ट्रीय संबंधों, पश्चिम व इस्लाम के संबंध तथा तीन प्रमुख धर्मों – यहूदी, इस्लाम तथा ईसाई धर्म को नया रूप व आकार देने के सारे मार्ग बंद हो जाते हैं। विकल्प स्पष्ट हैंः धर्मों का आपसी बैर, सभ्यताओं का टकराव, राष्ट्रों का युद्ध या फिर सभ्यताओं के बीच संवाद तथा देशों के बीच आपसी शांतिपूर्ण संबंध। मनुष्यजाति के इस गंभीर संकट के दौरान घृणा, बैर और शत्रुता के नए बाँध बनाने से बेहतर होगा कि आपसी भेदभाव की इन पत्थर की दीवारों को ढहा दें और आपसी संवाद और ख़ासतौर पर इस्लाम के साथ संवाद के सेतु बनाएँ।

4. तीनों धर्म व वैश्विक आचार नीति में इनका योगदान

इस सेतु निर्माण के लिए आवश्यक है कि ये विभिन्न प्रतिमानों वाले तीनों धर्म, जो कि सदियों से बदलते आए हैं, इन्हें वैश्विक आचार नीति के लिए एक साथ लाया जाए। ऐसा करने से ही एक सेतु निर्माण संभव हो सकेगा।

मनुष्य पशु जगत से विकसित हो कर ही मनुष्य बना है, उसने मानवीय या अमानवीय रूप से बर्ताव करना भी सीखा है। परंतु यदि विवेक का प्रयोग न हो तो उसके भीतर बैठा पशु फिर जागृत हो जाता है। और मनुष्य समय–समय पर अपने–आपको मनुष्य बनाए रखने के लिए ही प्रयत्नशील रहा है।

इस प्रकार, सभी धर्मों, दार्शनिक व आदर्शवादी विचारधाराओं में मानवता को बनाए रखने के लिए कुछ नीति संबंधी नियम हैं, जो आज भी उतने ही महत्वपूर्ण और प्रासंगिक हैं, जो कभी पहले रहे होंगे।

– 'तुम्हें किसी को मारना नहीं चाहिए – या किसी को सताना, घायल करना या किसी के साथ बलात्कार करना भी उचित नहीं है।', या सकारात्मक शब्दों में : 'जीवन के प्रति सम्मान का भाव रखो।' यह अहिंसा की संस्कृति तथा सारे जीवन के प्रति सम्मान की वचनबद्धता है।

– 'तुम्हें चोरी नहीं करनी चाहिए या दूसरों के शोषण, भ्रष्टाचार व रिश्वत आदि में शामिल नहीं होना चाहिए।', या सकारात्मक शब्दों में, 'पूरी ईमानदारी के साथ व्यवहार करो।'यह सहिष्णुता की संस्कृति के लिए एक वचनबद्धता तथा सामाजिक व्यवस्था है।

– तुम्हें झूठ नहीं बोलना चाहिए – दूसरों को धोखा देते हुए, उनके साथ छल नहीं करना चाहिए' या सकारात्मक शब्दों में, ''सत्य कहो और सच्चा आचरण करो।' यह सहिष्णुता की संस्कृति तथा एक सच्चाई से भरे जीवन की वचनबद्धता है।

– और अंततः 'तुम्हें काम संबंधी नैतिकता से बचना चाहिए – या अपने साथी के साथ बुरा बर्ताव छल नहीं करना चाहिए, उसका शोषण नहीं करना चाहिए।', सकारात्मक शब्दों में, ' एक–दूसरे को प्रेम और सम्मान दो।' यह समान अधिकारों तथा स्त्री व पुरुष के बीच साझेदारी की संस्कृति की वचनबद्धता है।

ये चार नीतिसम्मत नियम , जो कि पतंजलि में पाए जाते हैं, वे बौद्ध ग्रंथों में भी शामिल हैं और इसके अलावा हिब्रू बाइबिल, न्यू टेस्टामेंट व कुरान में भी हैं, जो दो बुनियादी नीति सम्मत नियमों पर आधारित हैंः

–सबसे पहले तो एक सुनहरा नियम है, इसे ईसा से भी कई सदियों पहले, कंफ्यूशियस ने बनाया और सभी महान व धार्मिक परंपराओं में पाया जाता है। हालाँकि इसमें कहा गया, 'दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार मत करो, जो तुम उनसे अपने लिए नहीं चाहते।' यह बुनियादी नियम अनेक कठिन परिस्थितियों में सहायक सिद्ध होता है।

– सुनहरे नियम को मानवता के नियम का समर्थन मिलता है। 'प्रत्येक मनुष्य भले ही बूढ़ा हो या जवान, स्त्री हो या पुरुष, बच्चा हो या बड़ा – विकलांग हो या ईसाई, यहूदी हो या मुसलमान, उसके साथ अमानवीयता से नहीं बल्कि मानवीयता के साथ पेश आना चाहिए।'

इन बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि साधारण मनुष्य आचार नीति या वैश्विक आचार नीति अरस्तू या थॉमस आदि की आचार नीतियों की तरह नहीं बनाई गई, इसमें कुछ बुनियादी मूल्य, मापदंड तथा रवैए शामिल हैं, जो मनुष्य के जीवन और समाज को व्यक्तिगत रूप से एक नैतिक आधार देते हैं।

निःसंदेह यह नीति तथ्यों के विरुद्ध जाती है : मानवता के प्रति इस कर्तव्य का निर्वाह एक बार में नहीं हो जाता। इस बारे में बार–बार स्वयं को याद दिलाना होगा। जैसा

कि कोफ़ी अन्नान ने, टुबिन्जेन में, 2003 में दिए गए ग्लोब एथिक भाषण में कहा थाः ' परंतु अगर किसी धर्म या संप्रदाय के शब्दों को केवल इसलिए नकारा जा सकता है कि इसके कुछ अनुयायियों ने कुछ अनुचित कहा है या कुछ मूल्यों को केवल इसलिए त्याग दिया जाना चाहिए कि कुछ लोग उन्हें स्वीकार नहीं करते, तो ऐसा करना अनुचित होगा।'

मैं उन्हीं शब्दों के साथ अपनी बात समाप्त करना चाहूँगा जिनके साथ संयुक्त राष्ट्र के जनरल सैक्रेट्री ने अपने भाषण का समापन करते हुए कहा थ : 'क्या हमारे पास अब भी सार्वभौम मूल्य हैं? जी, हमारे पास हैं, परंतु हमें उनका नाजायज़ लाभ नहीं उठाना चाहिए।'

उन्हें सावधानी से पढ़ा और समझा जाना चाहिए।

उनका रक्षण किया जाना चाहिए।

उन्हें सशक्त बनाया जाना चाहिए।

और हमें अपने भीतर इन मूल्यों के साथ जीने की इच्छा उत्पन्न करनी होगी – इन्हें अपने निजी जीवन, अपने स्थानीय और राष्ट्रीय समाज तथा विश्व में स्थान देना होगा।

राजनीतिज्ञ की आचार नीति पर

एच.इ. सभापति श्री हेल्मुट श्मिट

टुबिन्जेन विश्वविद्यालय, 8 मई 2007

सबसे पहले, प्रिय हैन्स कुंग, मैं आपको धन्यवाद देना चाहूँगा। मुझे आपका निमंत्रण पा कर हार्दिक प्रसन्नता हुई, मैं नब्बे के दशक के आरंभ से ही, वैश्विक एथिक परियोजना से जुड़ा हुआ हूँ। हो सकता है कि 'ग्लोबल एथिक' शब्द सुनने वालों को थोड़ा महत्वाकांक्षी लगे किंतु, परंतु लक्ष्य और हल करने का यह काम, सही मायनों में बहुत अनिवार्य और महत्वाकांक्षी ही है। संभवतः इस बिंदु पर मैं कह सकता हूँ कि पाँचों महाद्वीपों के देशों व राज्यों के प्रमुखों ने मिल कर अपने लिए कुछ नियम और नीतियाँ बनाई हैं, जो कि 1987 के इंटर एक्शन परिषद की नीतियों से काफ़ी हद तक मिलती–जुलती हैं। हालाँकि अभी हमारे काम को अपेक्षाकृत

बहुत अधिक सफलता नहीं मिल सकी। इसके विपरीत, हैन्स कुंग और उनके मित्रों की उपलब्धियाँ उल्लेखनीय रही हैं।

मैं इस काम के लिए एक सच्चे मुसलमान को धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने मुझे सबसे पहले, सभी धर्मों में छिपे समान मूल्यों को पहचानने और जानने की प्रेरणा दी। अनवर अली सदात, मिस्र के राष्ट्रपति थे, उन्होंने मुझे तीनों अब्राहमिक धर्मों की विशद जानकारी देते हुए बहुत सी समानताओं का वर्णन किया और साथ ही उनसे जुड़े नैतिक मूल्यों के बारे में भी बताया। वे जानते थे कि सभी धर्मों में शांति स्थापना को महत्व दिया गया है। मिसाल के लिए, यहूदियों के ओल्ड टेस्टामेंट के स्त्रोतों, माउंट पर ईसाई प्रवचन तथा मुस्लिम कुरान के चौथे सुरा का नाम ले सकते हैं। उनका मानना था कि अगर लोग भी आपस में इन समान मूल्यों को पहचाान लें ; काश राजनीतिक नेताओं को ही धर्मों से जुड़ी इन विशेषताओं का ज्ञान हो जाए तो दीर्घकालीन शांति की स्थापना की जा सकती थी। उन्हें इस विषय में पूरा विश्वास था। कुछ वर्ष पूर्व, मिस्र के राष्ट्रपति के रूप में, उन्होंने इस निष्ठा को पूरा करने के लिए कुछ कदम उठाए और स्टेट ऑफ इज़रायल की राजधानी और संसद का दौरा किया, जो पिछले चार सालों के दौरान उनके शत्रु रहे थे, उन्होंने वहाँ शांति स्थापना के बारे में बात की।

मैंने अपनी इस अवस्था तक आते–आते अपने माता–पिता, भाई–बहन और बहुत से दोस्तों से बिछुड़ने का दुख झेला है, परंतु धर्मांध कट्टरवादियों द्वारा सादत की हत्या ने मुझे भीतर तक दहला कर रख दिया। मेरे मित्र सादत को केवल इसलिए मार दिया गया क्योंकि उन्होंने शांति के नियम का पालन किया था।

मैं अभी इस नियम की बात पर वापिस आता हूँ, परंतु यह भी बताना चाहूँगा कि हम केवल एक घंटे के इस भाषण के माध्यम से इतने विशाल और जटिल विषय पर अपने विचारों को नहीं समेट सकते। यही कारण है कि आज मुझे केवल महत्वपूर्ण मुद्दों पर ही केंद्रित रहना होगा, जिनमें धर्म व राजनीति का संबंध, राजनीति में विवेक व अंतःकरण की भूमिका और अंत में, समझौता करने की आवश्यकता तथा निरंतरता व समयनिष्ठा के अभाव को शामिल किया जाएगा।

1.

अब शांति के नियम की बात करते हैं। शांति का वचन, उन सभी नैतिक शिक्षाओं का मूल अंग है, जो एक राजनेता को निश्चित रूप से सीखनी चाहिए। यह एक देश की घरेलू नीति, समाज और विदेश नीति पर समान रूप से लागू होता है। इसके साथ–साथ, अन्य नियम और नीति वचन भी हैं। इसमें स्वाभाविक रूप से 'सुनहरा नियम' भी शामिल है, जो विश्व के सभी धर्मों में सिखाया व पढ़ाया जाता है। इमेनुएल कांट ने इसे नए सिरे से गढ़ा और इसका रूप

बन गया, 'वही करो, जो अपने लिए चाहते हो' यह सुनहरा नियम सब पर लागू होता है। मैं नहीं मानता कि राजनेताओं के अतिरिक्त किसी पर विभिन्न बुनियादी नियम लागू होते हैं।

हालाँकि, सार्वभौमिक नैतिकता के प्रमुख नियमों से एक स्तर नीचे, विशेष परिस्थितियों या अवसरों के लिए बहुत से विशेष संस्करण हैं। डॉक्टरों के लिए बनी हिप्पोक्रेटिक शपथ के बारे में विचार करें या फिर जज द्वारा ली जाने वाली व्यावसायिक शपथ या फिर व्यावसायिक लोगों, बैंकरों, कर्ज़ लेने वालों या सैनिकों द्वारा ली जाने वाली शपथ।

मैं न तो कोई दार्शनिक हूँ और न ही कोई धर्मशास्त्री, इसलिए मैं अपनी ओर से ऐसा कोई प्रयास नहीं करूँगा कि आपको कोई राजनीतिक आचार नीति सौंपते हुए, प्लेटो, अरस्तू या कंफ्यूशियस से प्रतियोगिता करूँ। जाने कितने समय महान लेखक और विद्वान राजनीतिक आचार नीति के बहुत से तत्वों को एक साथ लाते आए हैं, जिनके कई बार बहुत विवादित परिणाम भी रहे। आधुनिक यूरोप में, यह दौर मैकीवली या कार्ल स्मिथ से ह्यूगो, मैक्स वैबर या कॉर्ल पॉपर तक चला, वहीं दूसरी ओर, मैं केवल कुछ अंतर्दृष्टियाँ सौंपने तक ही सीमित रहूँगा। जिन्हें मैंने एक राजनेता और एक राजनीतिक प्रचारक के रूप में पाया – जिनका अधिकतर हिस्सा मेरे अपने देश तथा दूर व पास के पड़ोसी देशों के बीच संबंधों में बीता।

इस बिंदु पर मैं अपना यह अनुभव भी देना चाहूँगा कई देशों में राजनीति के साथ ईश्वर का नामोल्लेख करना अपनी इच्छा पर होता है। हाल ही में जब फ्रांस और नीदरलैंड में जनमत संग्रह हुआ तो बहुत से लोगों का, ईश्वर के संदर्भ का अभाव भी एक निर्णायक उद्देश्य बना। जर्मन संविधान में, प्रस्तावना में ईश्वर का वर्णन आता हैः 'ईश्वर के सम्मुख अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजग...।' और दूसरी बार आर्टीकल 56 में, शपथ के शब्द आते हैंः 'ईश्वर! मेरी सहायता करे।'। इसके तुरंत बाद, बेसिक लॉ कहता है, ' किसी धार्मिक पुष्टि के बिना भी शपथ ली जा सकती है। दोनों ही स्थानों पर इसे व्यक्तिगत रूप से नागरिक पर ही छोड़ा गया है कि वही तय करे, वह कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट, यहूदी या मुस्लिम; किसी धर्म से अपने–आप को जोड़ना चाह रहा है।

बेसिक लॉ की बात करें, तो बहुत सारे राजनीतिज्ञों ने ही मिल कर इसे 1948/49 में तैयार किया था। कानून के अधीन, प्रजातांत्रिक व्यवस्था में, नेता और उनके विवेक, संवैधानिक नीति में निर्णायक भूमिका निभाते हैं, इनमें किसी विशेष धार्मिक स्वीकृति या लेखन का हाथ नहीं होता।

हमने हाल में ही अनुभव पाया, किस तरह सदियों के बाद, होली सी ने, सत्ता की राजनीति के चलते, गैलीलियो के तर्क से जुड़े निर्णय को बदला। आज हम देख रहे हैं कि मिडिल ईस्ट में किस तरह धार्मिक और राजनीतिक शक्तियाँ रक्तरंजित युद्ध में लगी हैं और किस तरह सारे नियमों व विवेक को ताक पर रख दिया गया है। जब 2001 में, कुछ धर्माधों ने अपने ही

प्राण ले लिए और न्यू यॉर्क में उन तीन हज़ार लोगों को पूरा यकीन था कि वे ईश्वर की सेवा कर रहे थे; नास्तिकता के लिए सुकरात को मृत्युदंड! वह भी अतीत में करीब ढाई हजार साल पहले की बात है। यह तो स्पष्ट है, धर्म और राजनीति तथा विवेक के बीच यह संघर्ष मानवीय अवस्था का दीर्घकालीन कारण है।

2.

संभवतः मैं यहाँ अपने निजी अनुभव को भी शामिल कर सकता हूँ। मैं नाज़ी काल में पला–बढ़ा; 1933 के आरंभ में, मैं केवल चौदह साल का था। मेरी आठ साल की अनिवार्य सैन्य सेवा के दौरान, मैंने ईसाई चर्च पर अपनी निष्ठा बनाए रखी कि वे अपेक्षित कदम उठाएँगे। हालाँकि 1945 के बाद मैंने महसूस किया कि चर्च न तो नैतिकता की स्थापना कर सके और नही उन्होंने प्रजातंत्र और संवैधानिक अवस्था की बहाली की। मेरी अपनी चर्च रोमनों के लिए पॉल के धर्मपत्र से संघर्षरत थी।

इसकी बजाए वीमर काल के कुछ नेताओं ने अपनी ओर से महत्वपूर्ण प्रयास किए जिनमें एडिनर, शूमेकर, ह्यूस व अन्य का नाम ले सकते हैं। इसके बाद लुडविग एरहार्ड और अमेरिकन मार्शल एड की आर्थिक सफलता जर्मनी को संवैधानिक राज्य के पक्ष में स्वतंत्रता और प्रजातंत्र की ओर ले जाने में सफल रही। इसे मानने में कोई लज्जा नहीं, कार्ल मार्क्स के बाद, हमने जाना कि आर्थिक यथार्थ राजनीतिक नीतियों को प्रभावित करता है। भले ही इस निष्कर्ष में आधा सत्य ही शामिल हो परंतु तथ्य यही है कि अगर शासन चलाने वाली सरकारें अपने उद्योग व श्रम को उचित व्यवस्था में नहीं रख सकतीं तो उनके लिए प्रजातंत्र का संकट पैदा हो सकता है।

नतीजन, पच्चीस साल के दौरान ही, जब मैं चांसलर था तो मैंने बहुत कुछ नया सीखा, यह केवल नैतिक नहीं बल्कि आर्थिक व राजनीतिक भी रहा। इस प्रक्रिया में, मैंने ऐसे अनेक धर्मों व दर्शनों के बारे में भी जाना, जिनके बारे में मुझे बहुत पहले जानकारी नहीं थी। इस तरह मुझे धार्मिक सहिष्णुता पाने में मदद मिली, इसके साथ ही, इसने मुझे ईसाई धर्म से दूर भी कर दिया। फिर भी मैं खुद को ईसाई कहता हूँ और चर्च जाता हूँ क्योंकि यह नैतिक पतनों को समभार करता है और अनेक लोगों को अपना योगदान देता है।

3. आज तक ईसाईयों के ईश्वर के बारे में – चर्च के लोगों और नेताओं के संबंध में व्याकुल करती आई है, वह यह है, ईसाई धर्म में दूसरों के प्रति उनकी प्रवृत्ति और इसके अलावा उनकी अन्य धार्मिक स्वीकारोक्तियाँ भी..! 'तुम ग़लत हो परंतु मैं ज्ञानी हूँ। मेरा विश्वास और लक्ष्य दैवीय है' यह बात मुझे पहले ही समझ आ गई थी कि हमारे धर्म और विश्वास, मानवता की सेवा के लक्ष्य में आड़े नहीं आने चाहिए, हमारे नैतिक मूल्य सही मायनों में, एक–दूसरे से संबंध रखते हैं।

अगर किसी धर्म या उससे जुड़े लोग, दूसरे धर्म के लोगों को अपने धर्म में शामिल करने के प्रयासों में ही लगे रहें तो इससे शांति स्थापना का लक्ष्य पूरा नहीं होता। यही वजह है कि मिशन ऑफ़ फेथ के लिए मेरा दृष्टिकोण थोड़ा संदेहास्पद ही रहा है। इस विषय में मेरा ऐतिहासिक ज्ञान भी बहुत महत्व रखता है। मैं इस तथ्य के बारे में बात करना चाहता हूँ कि सदियों तक ईसाई व इस्लाम धर्म को तलवार के बल पर प्रसारित किया गया, इसमें आपसी समझ, दृढ़ विश्वास तथा वचनबद्धता शामिल नहीं थी। मध्य युग के राजनीतिज्ञों, ड्यूक और किंग्स, खलीफ़ा और पोप ने धार्मिक मिशनरी भाव जागृत किए और उन्हें अपने बल को बढ़ाने के साधनों में बदल दिया – हज़ारों लाखों अनुयायी स्वयं ही होम होने के लिए आगे आ गए।

मेरे हिसाब से, उदाहरण के लिए, ईर्सा के नाम पर होने वाले धर्म युद्ध, जिनमें सिपाहियों के एक हाथ में तलवार और दूसरे में हाथ में तलवार थी, वे वास्तव में एक दूसरे पर वर्चस्व पाने के संग्राम थे। आधुनिक युग में, स्पेनिश, पुर्तगाली, अंग्रेज, डच और फ्रेंच और अंत में जर्मनों ने हिंसा के माध्यम से तकरीबन अमेरिका, अफ्रीका व एशिया पर कब्ज़ा किया। इन विदेशी महाद्वीपों ने भले ही नैतिक व धार्मिक श्रेष्ठता के भाव के साथ उपेनिवेश बनाए, परंतु औपनिवेशिक साम्राज्यों का ईसायत से कोई लेन–देन नहीं था। यह सब सत्ता और अहंकेद्रितता का तमाशा था। आइबेरियन पेनिनसुला को ही लें: यह केवल ईसायत की विजय नहीं थी, परंतु ह्रदय से, यह कैथोलिक सम्राटों, फर्डीनेड और इसाबेला की सत्ता से जुड़ी थी। आज जब भारतीय धरती पर हिंदू और मुसलमान लड़ते हैं या मिडिल ईस्ट में सुन्नी और शिया मुसलमान लड़ते हैं, तो हर बार यह मामला सत्ता और नियंत्रण से ही जुड़ा होता है। धर्मों और उनके महंतों को इसके लिए प्रयोग में लाया जाता है क्योंकि वे जनसमूह को प्रभावित कर सकते हैं। आज मुझे इस बात की बहुत चिंता है कि इक्कसवीं सदी के आरंभ में, सभ्यताओं के आपसी टकराव का संकट पैदा हो गया है, जो कि धार्मिक रूप से प्रेरित या धर्म की आड़ में छिपा हुआ है। आधुनिक संसार के कुछ हिस्सों में, धर्म की आड़ में सत्ता के लक्ष्य, निर्धनता से जुड़े रोष तथा दूसरे की संपदा पर हुई ईर्ष्या में भी मिल गए हैं। धार्मिक सेवा के लक्ष्यों में सत्ता के लक्ष्य भी जुड़ गए हैं। ऐसे माहौल में, संतुलित व सीमित विवेकपूर्ण स्वरों का उठाना संभव नहीं है। इस उत्साहित और उत्तेजित परिवेश में, लोगों के विवेक को कोई नहीं सुनता। यही तथ्य उन स्थानों के लिए भी उतना ही सत्य है जहाँ प्रजातंत्र व मानव अधिकारों से जुड़ी पश्चिमी मान्यताएँ व शिक्षाएँ, जो कि पूरी तरह से सम्मानीय हैं, उन्हें सैन्य बल द्वारा दबाव दिया जा रहा है और संस्कृतियों पर एक अलग तरह के धार्मिक प्रभाव को विकसित किया जा रहा है।

4 मैंने स्वयं इस अनुभव से कुछ निष्कर्ष निकाले हैं: ऐसे किसी भी नेता, सरकार या राज्य पर विश्वास न करें, जो धर्म को अपनी सत्ता की भूख मिटाने के साधन के तौर पर

प्रयोग में लाते हों। ऐसे नेताओं से दूर रहें जो अपने धर्म को, दुनिया की राजनीति से मिलाना चाहते हों।

यही सावधानी घर में तथा विदेश में, राजनीति पर भी लागू होती है। यह किसी देश के नागरिकों व नेताओं पर समान रूप से लागू होती है। हमें यह देखना चाहिए कि नेता दूसरे धर्मों के अनुयायी को पूरा सम्मान और मान दें। जो नेता ऐसा न कर सके, उसे शांति के नाम पर ख़तरा समझा जाना चाहिए – यह हमारे अपने लिए तथा दूसरे देशों की शांति के लिए भी ख़तरा हो सकता है।

यह भी एक त्रासदी है कि सभी ओर से रब्बी, पादरी, पुरोहित, मुल्ला और अयातुल्ला ने दूसरे धर्मों के ज्ञान को हमसे दूर रखने की चेष्टा की है। उन्होंने हमें यही सिखाया कि हमें दूसरे धर्मों को अपनी मंजूरी नहीं देनी चाहिए। हमें सिखाया जाता है कि हम उनके प्रति सद्भाव न रखें। हालाँकि जो भी धर्मों के बीच आपसी शांति चाहता हो उसे शांति व सहिष्णुता का पाठ ही पढ़ाना चाहिए। अगर आप दूसरे को सम्मान देना चाहत हैं तो कम से कम आपके पास उनके बारे में थोड़ी सी बुनियादी जानकारी तो होनी ही चाहिए। मुझे बहुत पहले ही इस बारे में स्पष्ट रूप से अनुमान हो गया था कि हिंदू, बौद्ध तथा शिंटो धर्म, उचित रूप से समान आदर व समान सहिष्णुता की माँग रखते हैं।

इसी निष्ठा के कारण, मैंने विश्व धर्म संसद की ओर से शिकागो घोषणा 'टूवर्ड्स ए ग्लोबल एथिक' का स्वागत किया, इसे देखना न केवल मेरी इच्छा बल्कि आपातकालीन तौर पर अनिवार्य भी थ। आज से दस वर्ष पूर्व, उसी बुनियादी स्तर से, इंटर एक्शन परिषद के भूतपूर्व प्रमुख और देश की सरकार ने, संयुक्त राष्ट्र के सैक्रेट्री जनरल को, 'मानवीय उत्तरदायित्वों की घोषणा' का मसौदा भेजा था, जिसे हमने जापान से ताकेओ फुकुदा के कहने से तैयार किया था। हमारा पाठ्य सभी महान धर्मों के प्रतिनिधियों की मदद से तैयार किया गया था, जिसमें मानवता के सभी बुनियादी नियम शामिल थे। इस बिंदु पर, मैं हैन्स कुंग को विशेष तौर पर धन्यवाद देना चाहूँगा। इसके साथ ही, मैं विएना के स्वर्गीय फ्रांज़ कार्डिनल कोनिग का भी हृदय से आभार प्रकट करना चाहता हूँ।

5 यद्यपि, मैंने यह भी समझा है कि करीबन ढाई हज़ार वर्ष पूर्व, मानवता के बड़े और महान अध्यापकों, अरस्तू, सुकरात, कंफ्यूशियस, मैंशियस आदि को धर्म की आवश्यकता नहीं थी पर उन्हें इसके लिए दिखावटी प्रेम दिखाना पड़ा क्योंकि उनसे ये अपेक्षा की गई। हम उनके बारे में जो भी जानते हैं, वह हमें बताता है कि सुकरात ने अपना दर्शन और कंफ्यूशियस ने अपनी सारी आचार नीति, को विवेक पर ही आधारित किया

था; उनमें से किसी ने भी अपनी शिक्षा में धर्म को आधार नहीं बनाया। जबकि आज भी लाखों लोग इनके अनुयायी हैं। सुकरात के बिना प्लेटो न होते – इमुएनल कांट और कार्ल पोपर भी न होते। कंफ्यूशियस और कंफ्यूशियसवाद के बिना, चीनी सभ्यता व 'सिल्क किंगडम' की कल्पना तक नहीं की जा सकती, जिनके जीवन की अवधि तथा जीवंतता विश्व के इतिहास में अप्रतिम है।

यहाँ एक अनुभव मेरे लिए महत्वपूर्ण है : अगर कोई व्यक्ति स्वयं को किसी विशेष ईश्वर, पैबंगर, धर्म ग्रंथ या धर्म से नहीं भी जोड़ता, तो भी वह उल्लेखनीय अंर्तदृष्टि, वैज्ञानिक उपलब्धि तथा आचार व राजनीति संबंधी शिक्षाएँ उत्पन्न कर सकता है। ऐसा व्यक्ति केवल अपने विवेक पर ही निर्भर होता है। सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक उपलब्धियों पर भी यही नियम समान रूप से लागू होता है। हालाँकि इससे पूर्व कि अमेरिकी व यूरोपियन अपना प्रबोध पाते, उन्हें कई सदियों तक संघर्ष व युद्ध का सामना करना पड़ा। इसके बाद ही विश्व में अपनी एक पहचान कायम कर सके। अपने ही बारे में महत्वपूर्ण खोज कर सके। हालांकि राजनीति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण खोज का शब्द बहुत ही सीमित क्षेत्र रखता है। इस शब्द को विज्ञान, तकनीक व उद्योग के साथ ही जोड़ कर देखा जाता है। माना जाता है कि केवल इन क्षेत्रों में ही 'ब्रेकथ्रू' संभव है। चाहे ईश्वरीय कृपा से स्वयं को सम्राट के रूप में देखने वाले विलहेम द्वितीय की मिसाल हो या अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा, अपने नेताओं से यह अपील करना कि वे अपनी नीतियों में ईसाई मूल्यों को भी जोड़ें, ये उदाहरण दिखाते हैं कि वे धार्मिक तौर पर ईसाईयत से बंधे हैं। कुछ लोगों को यह ईसाई होने के तौर पर अपनी ज़िम्मेवारी लगती है; कुछ लोग यूँ ही केवल इसे एक भाव के रूप में लेते हैं, जैसा कि आजकल अधिकतर जर्मन करते हैं। बहुत से जर्मन अब ईसाई धर्म से दूर हो गए हैं, कईयों ने अपने चर्च छोड़ दिए हैं; कुछ लोग ईश्वर से भी नाता तोड़ चुके हैं और इसके बावजूद अच्छे लोग और अच्छे पड़ोसी पाए जाते हैं।

6

वर्तमान में, अधिकतर जर्मनवासी महत्वपूर्ण, बुनियादी और एक करने वाली राजनीतिक निष्ठा से बंधे हैं। मेरा कहना है कि वे मानव अधिकारों और प्रजातंत्र के नियम से बँधे हैं। यह आंतरिक वचनबद्धता स्पष्ट तौर पर उनकी अपनी मान्यता या मान्यता के अभाव से स्वतंत्र है, और इस तथ्य से भी स्वतंत्र है कि ईसाई पंथ में इनमें से कोई नियम नहीं है।

केवल ईसाई धर्म ही नहीं, दूसरे विश्व धर्मों के धर्म ग्रंथों ने भी अपने अनुयायियों के लिए कुछ नियम और कानून बनाए हैं जिनके पालन की उनसे अपेक्षा की जाती है,

जबकि किसी भी धार्मिक ग्रंथ में अनुयायियों के अधिकारों के बारे में बात नहीं की गई है। वहीं दूसरी ओर, हमारे बेसिक लॉ के पहले बीस लेखों में केवल व्यक्तिगत नागरिकों के केवल संवैधानिक अधिकारों की ही बात की गई है, जबकि उनके दायित्वों या कर्तव्यों का उल्लेख तक नहीं है। नाज़ी शासन के अंतर्गत व्यक्तिगत स्वतंत्रता के हनन में, हमारी नागरिक अधिकारों की सूची एक स्वस्थ प्रतिक्रिया थी। यह ईसाई धर्म या किसी अन्य धार्मिक आधार पर नहीं थी, इसे केवल अलंघनीय मानव मर्यादा के आधार पर, सामान्य नियमों से बनाया गया था। इसके साथ ही पहले ही आलेख में नेता व सरकार तथा शासन से जुड़े सभी व्यक्तियों को इन अधिकारों की पूर्ति के लिए ज़िम्मेवार ठहराया गया है। फिर चाहे वे कानून बनाने वाले हों या प्रशासक या फिर सरकार। इसके साथ ही, राजनेताओं के लिए कार्यवाही करने की पूरी गुंजाईश है क्योंकि बेसिक लॉ में बुरी और असफल राजनीति के साथ–साथ अच्छी और सफल राजनीति की भी अनुमति दी गई है। यही कारण है कि हम चाहते हैं, कानून बनाने वाले तथा शासन चलाने वाले दल संविधान के अनुकूल चलें, संवैधानिक नियमन को मानें और राजनीति का नियमन मतदाताओं और उनके सार्वजनिक मतों के अनुरूप हो।

निःसंदेह, राजनेताओं के हाथों भूलें भी होती हैं, मनुष्य ग़लतियों का पुतला है। जो भी हो, वे भी आम लोगों की तरह कमियाँ रखते हैं, वही कमियाँ जो सार्वजनिक मतों में भी पाई जाती हैं। नेताओं को समय–समय पर लगातार निर्णय लेने के लिए बाध्य किया जाता है; हालाँकि उनके पास इतना समय तो होता है कि वे विभिन्न स्त्रोतों से सुझाव ले सकें, अपने उपलब्ध साधनों और आगामी परिणामों पर सोच–विचार करने के बाद ही कोई निर्णय लें। कोई नेता जमे हुए सिद्धांतों या आदर्शों के अनुसार जितने निर्णय लेता चला जाता है, उसके लिए अपने निर्णयों के दौरान विवेकसम्मत सोच रखना कठिन होता चला जाता है और व्यक्तिगत मामलों से जुड़े परिणामों पर विचार नहीं कर पाता, इस तरह भूल और असफलता के अवसर बढ़ते चले जाते हैं। अगर ये निर्णय निरंतर लेने पड़ते हैं तो यह संकट और भी अधिक हो जाता है। वह हर मामले में, परिणामों के लिए उत्तरदायी होता है और यही उत्तरदायित्व अक्सर उसे अपने लिए भार लगने लगता है। कई मामलों में नेताओं को संविधान, धर्म, दर्शन या सिद्धांत से जुड़े निर्णय लेने के लिए कोई सहायता नहीं मिल पाती, ऐसे में उन्हें अपने विवेक और न्यायबुद्धि पर ही आश्रित होना पड़ता है।

मैक्स वैबर ने 1919 में, दिए गए अपने भाषण 'राजनीति एक व्यवसाय' में कहा था, "एक नेता को अपने द्वारा लिए गए निर्णयों के परिणामों का लेखा–जोखा प्रस्तुत करना चाहिए।" दरअसल मेरा तो यह मानना है कि इसके अलावा एक नेता को सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि उसके निर्णय नैतिक रूप से उत्तरदायी हों और उसके

साधन और माध्यम भी नीतिसम्मत होने चाहिए। किसी भी तरह से निरंतर निर्णयशीलता को बनाए रखने के लिए 'समानुपात के नियम' का पालन करना चाहिए। अगर निर्णय लेने से पूर्व सभी पक्षों को टटोलने का पूरा समय हो तो सावधानी पूर्वक निरीक्षण और विश्लेषण भी किया जाना चाहिए। यही नियम, नाटकीय मामलों में लिए जाने वाले निर्णयों पर ही नहीं, बल्कि दैनिक जीवन से जुड़े कानूनों पर भी लागू होना चाहिए जैसे कर या श्रम नीति। यह नए पावर स्टेशन या सड़क मार्गों के बारे में लिए गए निर्णयों पर भी लागू होता है। इसे बिना किसी अवरोध के लागू किया जाना चाहिए।

दूसरे शब्दों में : जब राजनेता अपने निर्णय लेते समय विवेकसम्मत आधार को शामिल नहीं करेंगे, तब तक वे उनके परिणामों से अपने अंतःकरण को नहीं जोड़ सकते। केवल अचछी मंशा या आदरपूर्ण संकल्प से ही उनका उत्तरदायित्व पूरा नहीं हो जाता। यही कारण है कि मुझे उत्तरदायित्व से जुड़ी आचार नीति के लिए मैक्स वैबर के शब्द ही अनिवार्य लगते हैं।

इसके साथ ही, हम यह भी जानते हैं कि बहुत से लोग किसी शुभेच्छा से नहीं बल्कि अपने हितों की पूर्ति के लिए आते हैं और दूसरी बात यह है कि कई बार घरेलू और विदेशी मोर्चे पर कुछ निर्णय विवेकसम्मत आधार पर नहीं बल्कि लोगों की निष्ठा और संकल्प से जुड़े होते हैं। हमें इस तथ्य के विषय में भी कोई संदेह नहीं है कि बहुत सारे मतदाता अपने वोट उसी नेता को देते हैं जिसके प्रति वे पूरा विश्वास रखते हैं।

मैं आरंभ से ही, कई दशकों से अपने लेखन और शब्दों के माध्यम से राजनीतिक निर्णय निर्धारण के दो तत्वों – विवेक व अंतःकरण के आधारभूत महत्व की चर्चा करता आया हूँ।

7

मैं अपनी बात को थोड़ा और आगे ले जाना चाहूँगा; कोई बात या निष्कर्ष सुनने में भले ही कितना सरल क्यों न लगे किंतु प्रजातांत्रिक यथार्थ में ऐसा नहीं होता। प्रजातांत्रिक सरकार में, अगर कोई व्यक्ति अकेले ही निर्णय लेता है तो यह एक अपवाद होता है। अधिकतर मामलों में, केवल एक व्यक्ति के स्थान पर, बहुत से लोग किसी विषय में निर्णय लेते हैं, यही सारे निमयों और कानूनों को बनाते समय भी लागू किया जाता है। इसका कोई अपवाद नहीं होता।

संसद में कानून संबंधी बहुमत पाने के लिए, सैंकड़ों लोगों को एक सामान्य पाठ्य पर अपनी सहमति देनी होती है। इसके साथ ही, प्रासंगिक तौर पर गैर–मामूली विषय तक पहुँच बनाना कठिन हो सकता है। ऐसे मामलों में, अपने ही संसदीय दल में विशेषज्ञ

की राय पर तो भरोसा किया जा सकता है, परंतु बहुत से ऐसे मामले और महत्वपूर्ण विषय होते हैं, जहाँ संसद के सदस्य एक से अधिक बिंदुओं पर अलग–अलग तरह की राय पेश करते हैं। किसी भी निर्णय पर आने से पहले उन सभी बिंदुओं का समाधान करना होता है।

दूसरे शब्दों में, संसदीय बहुमत द्वारा लिया गया कोई निर्णय या बनाया गया कोई कानून, यह अर्थ रखता है कि इन व्यक्तियों में समझौता करने की योग्यता व इच्छा होनी चाहिए। यदि समझौता करने की प्रवृत्ति नहीं होगी तो किसी एक विषय पर सर्वसम्मति नहीं पाई जा सकती। जो व्यक्ति किसी विषय में दूसरों की राय को मान देते हुए, समझौता नहीं कर सकता। उसकी राय को प्रजातांत्रिक निर्णय का आधार नहीं बनाया जा सकता। यह बात भी स्वीकार करने योग्य है कि राजनीतिक कार्यों में अक्सर समझौते के साथ निरंतरता व समयनिष्ठा का अभाव भी सामने आता है, परंतु प्रजातांत्रिक संसद सदस्य को इस तरह के अभावों को सहन करना आना चाहिए।

8.

विदेश नीति में भी समझौते बहुत महत्व रखते हैं ताकि दो देशों के बीच आपसी शांति संबंध बने रहें। अगर कोई देश अपने ही अहं में डूबा रहता है तो वह लंबे समय तक शांति से काम नहीं कर सकता जैसे कि यू.एस.ए. सरकार का उदाहरण लिया जा सकता है। यह सत्य है कि हज़ारों सालों से – सिकंदर से सीज़र, चंगेज़ खान से नेपोलियन और हिटलर और स्टालिन तक – विदेश नीति को लागू करने में शांति का आदर्श एक निर्धारक भूमिका निभाता आया है। इसके साथ ही यह सैद्धांतिक सरकारी आचार नीतियों या राजनीति में दर्शन के मेल में अपनी भूमिका कभी नहीं निभाता। इसके विपरीत, हज़ारों वर्षों से, और मैकीवली से क्लाज़विट्ज़ तक, युद्ध का राजनीति के कारक के रूप में ही नाजायज लाभ उठाया जाता रहा है।

यूरोपियन जागरण के आसपास ही, डचमैन ह्यूगो या जर्मन कांट जैसे लेखकों के माध्यम से, शांति को एक उन्नत राजनीतिक आदर्श के रूप में वर्णित किया गया। हालांकि सारी उन्नसवीं सदी के दौरान, अधिकतर यूरोपियन देशों के लिए, युद्ध ही विभिन्न साधनों से राजनीति से जुड़ा रहा – और ऐसा ही बीसवीं सदी में भी जारी रहा। लोग बहुत समय से युद्ध को मानवता के शत्रु के रूप में देखते आ रहे थे किंतु उन्होंने अभी तक दो विश्व युद्धों की विभीषिका को नहीं देखा था, उसके बाद ही यह विचार पूर्व तथा पश्चिम के शीर्षस्थ राजनीतिज्ञों तक पहुँचा। इसे लीग ऑफ नेशंस की स्थापना तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना से जोड़ा जा सकता है, जो आज तक अपना काम कर रही है। यूएस तथा सोवियत यूनियन के बीच भी हथियारों पर पाबंदी

के लिए कुछ संधियों पर हस्ताक्षर किए गए। इसके साथ ही और भी कई महत्वपूर्ण समाधान सामने आए।

मॉस्को, वर्साव और प्राग के लिए बॉन आस्टोपॉलिटिक, भी किसी शांति नीति का एक अच्छा व उल्लेखनीय उदाहरण रहा : किसी देश का कोई प्रमुख शांति स्थापना करना चाहे तो उसे दूसरे देश से संप्रेषण अवश्य करना चाहिए और उसकी बात ध्यान से सुननी चाहिए। बात कहनी चाहिए, सुननी चाहिए और अगर संभव हो सके तो नतीजों पर भी आना चाहिए। दूसरा उदाहरण देना हो तो 1975 में यूरोप में सुरक्षा व सहयोग पर *'फाइनल एक्ट ऑफ कांफ्रेंस'* की बात की जाती है, जिसे हेलिंस्किी उद्धोषणा भी कहते हैं, समझौता शांति की पहल के लिए किया गया था। सोवियत यूनियन ने उन दस्तावेज़ों पर पश्चिमी राजनेताओं के हस्ताक्षर पाए जिसमें उन्होंने कहा कि वे पूर्वी यूरोपियन मोर्चों की पवित्रता बनाए रखेंगे और पश्चिम ने देशों के साम्यवादी प्रमुखों की ओर से मानव अधिकारों से जुड़े बिंदुओं पर हस्ताक्षर पाए, जिसे बाद में बास्केट *थ्री ऑफ एकॉर्ड्स* के नाम से जाना गया। लगभग पंद्रह साल बाद, सोवियत यूनियन का पतन, बाहरी सैन्य बल के कारण नहीं था, यह उस आंतरिक तंत्र के कारण हुआ, जिसने अपनी सत्ता का उचित उपयोग नहीं किया।

इज़रायल और फिलीस्तीन और उनके अरब देशों के बीच, दशकों से युद्ध व हिंसा का नकारात्मक उदाहरण सामने आता रहा है। अगर कोई भी पक्ष बात करने के लिए आगे नहीं आता तो समझौता और शांति स्थापना का प्रयत्न एक भ्रामक आशा ही बन कर रह जाएगा।

1945 से, संयुक्त राष्ट्र चार्टर के रूप में, अंतर्राष्ट्रीय कानून, किसी भी देश में बाहरी बल प्रयोग को वर्जित करता है, केवल सुरक्षा परिषद ही इस बुनियादी नियम के अपवाद तय कर सकती है। मुझे ऐसा लगने लगा है कि आज के नेताओं को इस बुनियादी नियम के बारे में तत्काल याद दिलाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, इराक में सैन्य मध्यस्थता या हस्तक्षेप, अ–हस्तक्षेप के निमय का उल्लंघन करता है। यह संयुक्त राष्ट्र चार्टर के विरुद्ध है। इस उल्लंघन में कई देशों के नेता शामिल हैं। इसी तरह, कई देशों के नेता (जर्मन सहित) ऐसे हस्तक्षेपों के दोषी हैं, जो मानवीय आधार पर बने अंतर्राष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन करते हैं। मिसाल के लिए, पिछले एक दशक से भी अधिक समय से, बाल्कान के हित में होने वाले हिंसक संघर्ष को पश्चिम की ओर से मानवतावाद के चोले में पेश किया जा रहा है। जिनमें बेलग्रेड की बमबारी भी शामिल है।

मैं विदेश नीति के बारे में बात करना बंद करके, संसदीय समझौते वाले बिंदु पर वापिस आता हूँ। हमारे मुक्त समाज में, मास मीडिया काफ़ी हद तक सार्वजनिक मत को प्रभावित करता है, कई बार ये राजनीतिक समझौतों को, 'आलसी' समझौतों का नाम देता है। कई बार इन्हें अनैतिक दल अनुशासन से जोड़ कर भी दिखाया जाता है। वैसे तो अगर मीडिया लगातार मत निर्धारण प्रक्रिया पर अपनी राय देता रहे तो यह अच्छी बात है किंतु वहीं दूसरी ओर, समझौते की प्रजातांत्रिक नियम की अनिवार्यता भी उतनी ही सत्य है। अगर किसी कानून या विधि पर चर्चा करते हुए सभी सदस्य अपने–अपने मत पर ही डटे रहे तो किसी भी सर्वसम्मत निर्णय पर आ ही नहीं सकते। इससे तो अव्यवस्था ही फैलेगी। ठीक इसी प्रकार, अगर सभी अपने व्यक्तिगत निर्णयों को थोपना चाहेंगे तो सरकार के लिए अपना काम करना असंभव हो जाएगा। सभी सरकारी मंत्री और संसदीय दल इस वास्तविकता को अच्छी तरह जानते हैं। सभी प्रजातांत्रिक नेताओं को पता है कि उन्हें कहीं न कहीं समझौता करना ही होगा। समझौते के सिद्धांत के अभाव में, प्रजातंत्र का नियम ही नहीं हो सकता।

वास्तव में, कई बार बुरे समझौते भी होते हैं – उदाहरण के लिए, आने वाली पीढ़ियों के हितों के साथ खिलवाड़ हो जाता है। अधूरे समझौते किए जाते हैं जो समस्याओं को हल नहीं करते, केवल ऐसा दिखाया जाता है कि समस्या को हल कर दिया गया है। इस तरह समझौते का अनिवार्य गुण, अवसरवाद के प्रलोभन में उलझ कर रह जाता है। सार्वजनिक मत के साथ अवसरवादी समझौते, अक्सर रोज होते हैं। यही वजह है कि जिन नेताओं को इस तरह समझौते करने पड़ते हों, उन्हें अपने अंतःकरण की भी सुननी चाहिए।

अगर कोई समझौता नेता के अंतःकरण को अनुकूल न लगे तो उसके लिए हामी नहीं देनी चाहिए। ऐसे मामलों में, उसे कई बार अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ता है या फिर अपना पद त्यागना पड़ता है। अगर हम अपनी ही अंतरात्मा के विरुद्ध जा कर कोई समझौता करते हैं तो इससे हमारी अपनी मर्यादा और नैतिकता नष्ट होती है – व्यक्ति की निजी निष्ठा से दूसरों का भरोसा उठ जाता है। ऐसे मामलों में, केवल नैतिक धिक्कार या उलाहना ही पर्याप्त नहीं होता, भारी हानि भी हो सकती है। अगर ऐसे किसी मामले में राजनेता को बाद में यह पता चलता है कि उससे भूल हुई है तो उसके आगे यह सवाल आ सकता है कि क्या उसे अपनी भूल स्वीकार करते हुए, सच बता देना चाहिए। ऐसी परिस्थिति में, राजनेता अक्सर मानवीय रूप से पेश आते हैं, जैसे इस कक्ष में हम सभी हैं : हममें से सभी के लिए अपनी अंतरात्मा की भूल को स्वीकार करना कठिन होता और उसे सार्वजनिक रूप से सबके बीच मानना तो और भी मुश्किल हो जाता है।

10.

कई बार सत्य का यह प्रश्न, मैक्स के अनुसार, एक राजनीतिज्ञ की तीन प्रमुख विशेषताओं से विपरीत चला जाता है। सत्य का यह प्रश्न कई बार वांछित आलंकारिक योग्यता के भी विपरीत हो जाता है जिसे आज से लगभग ढाई हज़ार साल पहले, प्रजातांत्रिक एथेंस में पहचाना गया था – जो कि आज की टी.वी. संस्कृति और समाज में और भी महत्वपूर्ण बन कर उभरा है। जो लोग चुना जाना चाहते हैं उन्हें जनता के सम्मुख अपने घोषणा–पत्र और मंशाओं को प्रकट करना होगा। ऐसा करते समय वे कई बार इस संकट से भी घिर जाते हैं कि ऐसे वचन दे बैठते हैं, जिन्हें बाद में पूरा करना उनके वश में नहीं होता। कई बार टी.वी. दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करने के चक्कर में वे ऐसा करते हैं। हर चुनाव प्रत्याशी अपनी अतिश्योक्ति का शिकार हो सकता है। अपनी प्रतिष्ठा की प्रतियोगिता और वक्ताओं को लुभाने की जरूरत बढ़ती ही जाती है क्योंकि अब उनके सामने, केवल समाचार–पत्र पढ़ने वाली पुरानी पीढ़ी नहीं, बल्कि टी.वी. से जुड़ा जागरूक समाज होता है।

हमारा आधुनिक जन प्रजातंत्र कुछ ऐसा ही है, जैसा कि एक बार विंस्टन चर्चिल ने कहा था, "अभी तक हमने सरकार के जितने भी रूप देखे, उन रूपों को देखते हुए सरकार का यह रूप बेहतर है किंतु आप इसे पूरी तरह से आदर्श नहीं मान सकते। इसकी अपनी कमियाँ प्रलोभन, दोष और अधूरापन है किंतु इन सबके बीच, इसका अपना एक सकारात्मक तथ्य भी है, मतदाता बिना किसी रक्तपात या हिंसा के अपनी सरकार बदल सकता है और यही वजह है कि चुने गए संसदीय सदस्यों को अपनी कार्यवाही के लिए जनता को जवाब देना होता है।"

11.

मैक्स वैबर का मानना है, जहाँ तक आवेग और समानुपात का मामला है, किसी राजनेता के लिए तीसरी महत्वपूर्ण विशेषता, उत्तरदायित्व का भाव ही था। सवाल यह पैदा होता है : किसके प्रति उत्तरदायित्व का भाव? मेरे अनुसार किसी नेता को केवल अपने मतदाता के लिए ही उत्तरदायी नहीं होता क्योंकि मतदाताओं के निर्णय या मत अक्सर उनकी भावनाओं या कल्पनाओं पर आधारित होते हैं। वैसे भी बहुमत निर्णय में राजनीतिज्ञों का आज्ञापालन भी शामिल होना चाहिए।

मेरे अनुसार, अगर अंतिम अधिकार की बात करें, तो वह मेरा अपना अंतःकरण ही है। हालाँकि मुझे एहसास है कि इस अंतरात्मा के लिए भी बहुत से धर्मशास्त्रीय और दार्शनिक सिद्धांत प्रस्तुत किए जाते हैं। यह शब्द ग्रीक व रोमन के समय में भी प्रयुक्त हुआ। बाद में पॉल व अन्य धर्मशास्त्रियों ने भी ईश्वरीय चेतना तथा ईश्वर के

विधान के लिए इसे प्रयुक्त किया और इसके साथ ही, हमारी यह चेतना भी जागृत हुई कि हर नियम का उल्लंघन एक पाप है। कुछ ईसाई हमारे भीतर 'ईश्वर की आवाज' के बारे में बात करते हैं। मैंने अपने मित्र रिचर्ड स्क्रॉडर के लेखन के माध्यम से जाना कि हमारी चेतना की समझ तब विकसित हुई जब बाइबिल का विचाार हेलेनिज़्म संसार से मिला। वहीं दूसरी ओर, कांट ने सदा धर्म के बिना अपने अंतःकरण को माना। वे कहते थे कि हमारा अंतःकरण 'मनुष्य के भीतर, जागरूकता की भीतरी अदालत' है।

चाहे आप अंतःकरण को अपने विवेक से जोड़ें या फिर ईश्वर से, मनुष्य के अंतःकरण के बारे में कोई संदेह नहीं है। कोई व्यक्ति किसी भी धर्म, संप्रदाय या पंथ से क्यों न हो, उसका अपना एक विवेक या अंतःकरण अवश्य होता है और इसके साथ ही यह भी कहना चाहूँगा कि हममें से सभी कई बार अपने विवेक के विरुद्ध जा कर निर्णय लेते हैं, हम सबको एक अपराध बोध के साथ जीना होता है। निःसंदेह यही मानवीय दुर्बलता राजनीतिज्ञों में भी पाई जाती है।

12.

मैंने एक व्यावसायिक राजनेता के रूप में अपने तीन दशकों के अनुभवों से मिली अंतर्दृष्टियों को आपके साथ बाँटने का प्रयास किया। हालाँकि कई पक्षों वाले यथार्थ के केवल कुछ उद्धरण ही प्रस्तुत कर सका। अंत में एक दोहरी अंतर्दृष्टि मेरे लिए बहुत महत्व रखती है। पहली, हमारा यह मुक्त समाज व प्रजातंत्र अनेक कमियों व दोषों से घिरा है और सभी नेता भी कहीं न कहीं मानवीय दुर्बलताओं का शिकार होते हैं। अपने वर्तमान प्रजातंत्र को विशुद्ध आदर्श के तौर पर देखना भी अनुचित होगा परंतु दूसरी बात यह भी है कि जर्मन होने के नाते, हमें अपने कलहपूर्ण अतीत को देखते हुए, यह पूरा अधिकार बनता है कि हम अपने पूरे बल के साथ प्रजातंत्र को बनाए रखें, निरंतर इसे सँवारते रहें और बहादुरी के साथ इसके शत्रुओं का सामना करते रहें। जब हम इसके लिए सहमत होंगे तब इसका अपनी एकता, न्याय और स्वतंत्रता के साथ हमारा राष्ट्रीय प्रतीक होना सार्थक होगा।

————————————

भाग– 4

एथिक्स पर आईएसी प्रपत्र

दि रोम स्टेटमेंट (1987)

पर्यावरण, जनसंख्या, शांति व विकास जैसे विषयों के अंतःपरस्पर प्रश्नों पर मंत्रणात्मक सभा

ला सिविलटा कैटोलिका, 9–10 मार्च 1987, रोम, इटली

रोम स्टेटमेंट की प्रस्तावना

ताकेओ फुकुदा

आदरणीय सभापति, इंटरएक्शन परिषद

यह संसार जिन कठिन हालात का सामना कर रहा है, वही मेरे लिए चिंता का विषय है। राजनीतिक, सैन्य या आर्थिक; किसी भी नज़रिए से देखें, समस्याओं का अंत नहीं है। और हमारे जीवन के आसपास की भौतिक दशाएँ जैसे जनसंख्या, विकास व पर्यावरण आदि, भी हमारे लिए असंख्य समस्याओं का अंबार बनते जा रहे हैं। यदि हम इनके लिए कुछ नहीं कर सके तो हमारे पास निश्चित रूप से कोई भविष्य नहीं होगा। अगर हम इस संसार को अपनी

संतान के लिए सुरक्षित छोड़ना चाहते हैं, तो हमें अपनी ओर से निरंतर अध्यवसाय और कड़ा परिश्रम करना होगा।

इसी सजगता के साथ, मैंने 1983 में इंटरएक्शन परिषद की स्थापना की जिसमें दो दर्जन से अधिक, देशों व सरकारों के भूतपूर्व प्रमुख नेताओं ने मिल कर चर्चा की कि इन समस्याओं कैसे निपटा जा सकता था। अनेक पदस्थ नेता भी इन समस्याओं से त्रस्त हैं किंतु या तो वे दैनिक घटनाओं या अपने राष्ट्रीय हितों से इस तरह बँधे हैं कि वे चाह कर भी कुछ नहीं कर पाते। मुझे लगा कि भूतपूर्व प्रमुख नेताओं के पास अनुभव होगा, जिसे वे बिना किसी पक्षपात के बाँट सकेंगे। इंटर एक्शन परिषद के पाँच प्रमुख सत्र तथा कई विशेष स्टडी ग्रुप सभाएँ हो चुकी हैं। और हम संसार पर एक सकारात्मक प्रभाव डालने में सफल रहे हैं।

परंतु मैंने इससे आगे भी सोचा, मैं बहुत समय से यही मानता आया हूँ कि विश्व शांति तथा मानव जाति का कल्याण राजनीतिक हस्तियों के साथ–साथ धार्मिक नेताओं की चिंता का विषय भी है। क्या यह महत्वपूर्ण नहीं होगा कि धार्मिक और राजनीतिक नेता एक साथ मिल कर समस्याओं पर चर्चा करें और सामूहिक हल निकालें। मुझे लगा कि धार्मिक दलों एक निश्चित प्रकार की समझ पाई जा सकती है जिससे हमें अपने निर्णय लेने में आसानी होगी। जो भी हो, मनुष्यों का महत्व सार्वभौम है।

इस तरह इंटर एक्शन परिषद के कुछ सदस्यों ने, 1987 के बसंत में, रोम में, विश्व के पाँच प्रमुख धर्मों के नेताओं से भेंट की। सबने यह माना कि विश्व में स्थिति यह थी कि मानवजाति के लिए कोई भविष्य नहीं दिख रहा था, अगर हम अपने सामने आई इस चुनौती को लेने में असफल रहे और हमारे धार्मिक व राजनीतिक नेता मिल कर कुछ नहीं करते, तो विश्व का भविष्य अंधकार में कहीं खो जाएगा। मुझे यह बताने में बहुत संतोष का अनुभव हो रहा है कि ऐसी सभाओं व संवादों के माध्यम से विविध बिंदुओं पर चर्चा हुई और बहुत अच्छे परिणाम सामने आए।

रोम में हुए समझौते ने हमें अपने प्रयासों को जारी रखने के लिए प्रोत्साहित किया। यह सभ मानव इतिहास में बहुत ही उल्लेखनीय तथा सफल रही और साथ ही यह अमूल्य भी थी। मैं जानता हूँ कि अभी हमें ऐसे बहुत से प्रयास करने हैं जहाँ कई लोग मिल कर इन महत्वपूर्ण समस्याओं के हल तलाशने की कोशिश कर सकें। मैं आभार प्रकट करता हूँ कि आज मुझे अपने सपने को साकार होते हुए देखने का अवसर मिला और मैं इसके लिए सबके प्रति गहरी प्रशंसा के भाव प्रकट करता हूँ।

रोम स्टेटमेंट की प्रस्तावना

हेल्मुट श्मिट

आदरणीय सभापति, इंटरएक्शन परिषद

सत्तर के दशक के मध्य, अनवर अल सादत के साथ जो ज्ञान मैंने बाँटा और जाना और खासतौर पर उनकी बातों पर मनन करने के बाद – विश्व के सांस्कृतिक क्षेत्रों में धार्मिक, दार्शनिक तथा नीतिगत प्रवृत्तियों व सप्रेषण के बारे में मेरा कौतूहल और भी अधिक होता चला गया। आपसी समझ के बिना शांति स्थापना होना संभव नहीं है।

परंतु संसार का कोई और इलाका हो या फिर फिलीस्तीन, 'अनंत शांति' के सूत्र को व्यावहारिक तौर पर लागू नहीं किया जा सकता, जैसा कि कांट द्वारा प्रचार किया गया। वैसे अधिकतर लोग इस लक्ष्य के नैतिक मूल्य को स्वीकारते हैं। ऐसा भी लगता है कि कोई व्यक्ति अतीत से यह पाठ भी सीख सकता है कि भावी संघर्षों को केवल सशस्त्र क्रांति से ही सुलझाया जा सकता है, लीग ऑफ नेशंस और संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाओं के प्रयासों के बावजूद संघर्षों का समाधान शांति से नहीं होगा।

तथ्य आज भी सत्य है : संघर्षों को जितनी जल्दी और प्रभावी तौर पर हल किया जाएगा और उन्हें अंतर्राष्ट्रीय बल प्रयोग की स्थिति में आने से पहले ही किसी समझौते तक लाया जाएगा, युद्ध को टालने की आस बढ़ती जाएगी। अन्यथा, इसके विपरीत, जितने अधिक लोग धार्मिक, राष्ट्रवादी, जातीय, आदर्शवादी या कट्टरवादी होंगे, उनकी आपसी समझ–बूझ उतनी ही कम होगी और बल प्रयोग व युद्ध की संभावना उतनी ही अधिक हो जाएगी।

आपस में एक–दूसरे की बात सुनने की इच्छा ही रोम में धार्मिक और राजनीतिक नेताओं को एक साथ लाई। हम केवल हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, यहूदी, मुक्त विचारक आदि नहीं होते, इनके अतिरिक्त हम प्रजातांत्रिक, साम्यवादी, उदारवादी आदि भी हैं; हम बिल्कुल अलग तरह की निरंकुशता या प्रजातंत्रों से संबंध रखते हैं; हम विश्व के पाँचों महाद्वीपों से हैं; हम काले, गोरे, साँवले और भूरे रंग के हैं। इन सभी भारी अंतरों के बावजूद, हमने न केवल एक–दूसरे को समझा, बल्कि कई महत्वपूर्ण प्रश्नों पर सहमति भी जताई।

भले ही सभी शांति पाने की इच्छा रखते हैं किंतु कठिन है और हमारे धार्मिक और राजनीतिक नेताओं के लिए भी सरल नहीं है कि वे लोगों के रोज़मर्रा के जीवन में शांति का समावेश कर सकें। यह बात भी समझने योग्य है कि विश्व में जनसंख्या विस्फोट को रोकने के लिए अभी तक कुछ नहीं किया जा सका और आने वाली कुछ पीढियों के बाद, हमारे सामने लोगों के लिए असंख्य आर्थिक समस्याओं के साथ–साथ ऊर्जा के खपत की समस्या भी होगी जो कुछ ही दशकों में, क्षोभमंडल की रसायनिक संरचना बदल देगी और ग्रीन–हाउस प्रभावों के कारण लोगों के लिए भारी विनाश का संकट पैदा हो जाएगा। अभी भी हमारे निर्णयों के बीच जनसंख्या निरोध के कोई प्रभावी उपाय नहीं हैं और न ही अरबों जोड़ों के लिए परिवार नियोजन को एक उद्देश्य की तरह पेश किया गया है।

यह एक महत्वपूर्ण संकेत था कि सारी दुनिया से आए धार्मिक व राजनीतिक नेता एक साथ मिल कर, परिवार नियोजन के महत्व को उठाएँ। अन्य नेताओं को भी इस विषय में जानकारी होनी चाहिए। बलिदान एकतरफा नहीं होते। अगर कुछ पाना है तो देना भी होगा। बीसवीं सदी के अंत में, मानवता के प्रति संकट को एकता के द्वारा ही दूर किया जा सकता है।

वैश्विक समस्याओं पर वक्तव्य

परिचय

हाल ही के इतिहास में, पहली बार सभी महाद्वीपों तथा पाँच प्रमुख धर्मों से आए आध्यात्मिक व राजनीतिक नेता, इंटर एक्शन परिषद के निमंत्रण पर रोम में एकत्र हुए। उन दो दिनों के दौरान सहभागियों के बीच विश्व शांति, वैश्विक अर्थव्यवस्था तथा विकास, जनसंख्या व पर्यावरण के अंतःपरस्पर मुद्दों पर चर्चा हुई।

नेताओं ने माना कि मानवजाति गंभीर संकटों का सामना करती आई है परंतु इसके बावजूद प्रभावी साधनों के बारे में विचार नहीं किया गया है। जब तक इन संकटों से मिली चुनौतियों के लिए प्रभावी और उपयुक्त समाधान व प्रस्तुत नहीं किए जाएँगे, तब तक एक सुखद भविष्य की कामना नहीं की जा सकती।

उन्होंने इस बात पर भी सहमति जताई कि इन समस्याओं के हल तलाशते समय, ऐसे बहुत से बिंदु होंगे जिन पर धार्मिक व राजनीतिक नेताओं को नैतिक मूल्यों, शांति व मानव जाति के कल्याण पर विशेष रूप से ध्यान देना होगा।

प्रारंभिक विचारों के आदान–प्रदान में सामान्य बोध व वर्तमान संकटों का आकलन सामने आया तथा विस्तृत रूप से साझा आचार नीति के आधार पर कार्यवाही करने की माँग को पहचान मिली।

रोम में एकत्र नेताओं ने माना कि इंटरएक्शन परिषद तथा अन्य ऐसी संस्थाओं द्वारा वैश्विक तथा प्रांतीय तौर पर, ऐसे प्रयास जारी रखे जाने चाहिए, जिनमें राजनीतिज्ञ, बौद्धिक तथा वैज्ञानिक नेता शामिल हों और वे मीडिया की सहायता से निर्णय–निर्धारण प्रक्रियाओं को प्रभावित करने में सफल हो सकें।

शांति

वर्तमान में, ऐसे संसार में शांति ने अपना अर्थ खो दिया है जहाँ दूसरे विश्व युद्ध के बाद से एक दिन भी युद्ध, संघर्ष, निर्धनता, व्यापक स्तर पर मानवीय और पर्यावरणीय अवमूल्यन के बिना नहीं बीता। सभी साझेदारों ने आचार संबंधी निर्णयों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि

निरंतर संवाद प्रक्रियाओं तथा समाज व अंतर्राष्ट्रीय संपर्कों के सभी क्षेत्रों में व्याप्त समझ–बूझ के आधार पर ही शांति स्थापित की जा सकती है।

इस तरह सबने मिल कर निशस्त्रीकरण की माँग की सराहना की। संयुक्त राष्ट्र और सोवियत यूनियन को अपनी उन संधियों का आदर करना चाहिए जिसमें उन्होंने कहा था कि वे शस्त्रों के प्रयोग को बंद करेंगे। चीन व अर्जेंटाइना द्वारा अपने सैन्य बजट में कमी प्रगति का उदाहरण पेश करते हैं।

सशस्त्र दौड़ से जुड़ी वैज्ञानिक व इंजीनियरिंग संसाधनों व क्षमताओं को उन वैश्विक समस्याओं के हल के लिए छोड़ देना चाहिए, जो मानव जाति की उत्तरजीविता और कल्याण से जुड़े हैं। वैकल्पिक ऊर्जा संसाधनों तथा नए यातायात तंत्रों व तकनीकों का प्रयोग हो ताकि जलवायु में आ रहे परिवर्तनों को रोका जा सके; ओज़ोन की घटती परत पर रोक लगाई जा सके; जैविक प्रजातियों की तेज़ी से घट रही संख्या को घटाया जा सके; और जैवमंडल के संकटों के लिए हल निकाले जा सकें।

विश्व अर्थव्यवस्था

नैतिक, राजनीतिक व आर्थिक कारणों से, मानवता को और अधिक समान आर्थिक ढाँचे की ओर अग्रसर होना चाहिए ताकि उस निर्धनता पर रोक लग सके, जो पूरी दुनिया में बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित कर रही है। यह बदलाव तभी संभव है जब विकासशील देशों के लिए औद्योगिक व परस्पर प्रभावित करने वाली सहयोग नीतियों पर निर्णयों व संवादों की एक श्रृंखला प्रारंभ की जा सके।

ऋण संकट को आपातकालीन प्रभाव से समाप्त किया जाना चाहिए। इसके कारण किसी देश की अर्थव्यवस्था का दम नहीं घुटना चाहिए और कोई भी सरकार नैतिक रूप से ऐसी माँग नहीं कर सकती कि इसके लोगों को मानवीय मर्यादा से रहित कर दिया जाए। सभी दलों को आपस में मिल कर बोझ बाँटने के नैतिक नियम को पूरा आदर–मान देना चाहिए।

आपातकालीन सहयोगी कार्यक्रमों को निर्धनता के विरुद्ध अनिवार्य रूप से चलाया जाना चाहिए ताकि अनेक व्यक्तियों की उत्तरजीविता सुनिश्चित हो सके। उत्तरजीविता हेतु एक प्रकार की वैश्विक एकता की महती आवश्यकता आन पड़ी है।

विकास– जनसंख्या– पर्यावरण

इस बात पर बल दिया गया कि भविष्य में पारिवारिक मूल्य तथा इन विषयों के समाधान में महिलाओं व पुरुषों की समान भागीदारी व उत्तरदायित्व होना अनिवार्य है। अनेक विकासशील देशों में तेज़ी से बढ़ती जनसंख्या के कारण प्रगति नहीं हो पा रही। इससे अल्पविकास,

जनसंख्या में वृद्धि तथा मनुष्य के जीवन–रक्षक तंत्रों का क्षय होता है। उत्तरदायी सार्वजनिक नीतियों के लिए जनसंख्या का उचित नियेजन, पर्यावरणीय व आर्थिक मुद्दों पर ध्यान दिया जाना ज़रूरी है।

सभी नेताओं ने सर्वसम्मति से यह माना कि धर्मों की ओर से भी परिवार नियोजन की नीतियों को प्रोत्साहन मिलना चाहिए। अनेक देशों व धर्मों के सकारात्मक अनुभव को एक साथ बाँटा जाना चाहिए और परिवार नियोजन में वैज्ञानिक शोध को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

————————

आध्यात्मिक नेताओं के संग हुई मंत्रणात्मक सभा के भागीदार

आईएसी सदस्य

ताकेओ फुकुदा, जापान के भूतपूर्व प्रधान मंत्री, इंटरएक्शन कौंसिल के माननीय सभापति तथा रोम की परामर्शक सभा के सलाहकार

हेल्मुट श्मिट, फेडरल रिपब्लिक ऑफ़ जर्मनी के भूतपूर्व चांसलर, इंटरएक्शन कौंसिल के माननीय सभापति,

जेनो फॉक, हंगेरियन पीपल्स रिपब्लिक के मंत्री परिषद के भूतपूर्व सभापति

मैल्कॉम फ्रेज़र, ऑस्ट्रेलिया के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

ओल्सगन ओबसांजो, नाइजीरिया की फेडरल सेना सरकार के भूतपूर्व प्रमुख

मिशेल पस्तराना बोरियरो, कोलंबिया के भूतपूर्व राष्ट्रपति

मारियल दि लोर्जिस पिन्टासिल्जो पुर्तगाल के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

ब्राडफोर्ड मोर्स, भूतपूर्व यूएनडीपी, प्रशासक, इंटरएक्शन परिषद के माननीय सदस्य

आध्यात्मिक नेता

डॉ. ए.टी. अरियारत्ने बौद्ध, सर्वोदय श्रम आंदोलन के संस्थापक व अध्यक्ष, श्री लंका

प्रोफ़ेसर के. एच. हसन बसरी, मुस्लिम, मजलिस उलामा के जनरल चेयरमैन (इस्लामिक विद्वान परिषद), इंडोनेशिया

रेव. जॉन बी कॉब, मैथोडिस्ट, हार्वर्ड डिवनिटी स्कूल के विजिटिंग प्रोफेसर, यू एस ए

फ्रांज़ कार्डिनल कोनिग, रोमन कैथोलिक, विएना एमरिट्स के आर्कबिशप, पोंटिफिकल सैक्रेटेरिट फॉर नॉन–बिलीवर्स के भूतपूर्व अध्यक्ष, ऑस्ट्रिया

मि. ली–शो पाओ प्रोटेस्टेंट, उप–सभापति, नेशनल कमेटी ऑफ थ्री सेल्फ एंड जनरल सैक्रेट्री, नेशनल कमेटी ऑफ़ यंग मैंस क्रिश्चियन एसोसिएशन ऑफ चाइना, पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना।

डॉ. कर्ण सिंह हिंदू, विराट हिंदू समाज अध्यक्ष, भारत

प्रोफेसर एलिओ टोफ, यहूदी, रोम में प्रमुख रब्बी तथा इतालवी रब्बीनिक परिषद के सदस्य, यूरोपियन रब्बीनिकल कांफ्रेंस की कार्यकारी परिषद के सदस्य

मि. लैस्टर ब्राउन विशेषज्ञ, वैज्ञानिक समुदाय, प्रतिनिधि, वर्ल्ड वाच इंस्टीट्यूट के अध्यक्ष

इंटर एक्शन परिषद की स्थापना 1983 में, एक स्वतंत्र अंतर्राष्ट्रीय संगठन के रूप में हुई ताकि नेताओं के एक समूह के अनुभव, ऊर्जा व अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को, मानवता के भविष्य से जुड़े महत्वपूर्ण मसलों के लिए प्रयोग में लाया जा सके।

शांति व सुरक्षा

विश्व अर्थव्यवस्था का पुनरूत्थान

विकास, जनसंख्या व पर्यावरण के क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

————————————

वैश्विक आचार नीति स्तरों की खोज में (1996)

उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ दल द्वारा निष्कर्षों व अनुशंसाओं पर रिपोर्ट

वैश्विक आचार नीति स्तरों की खोज में

हेल्मुट श्मिट के सभापतित्व में

22–24 मार्च 1996

विएना, ऑस्ट्रिया

परिचय

ज्यों–ज्यों मानव सभ्यता, इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ रही है, संसार भी एक गहन रूपांतरण के दौर से गुज़र रहा है, जो औद्योगिक क्रांति के क्षेत्र में बहुत ही प्रभावशाली है। विश्व अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण, संसार की समस्याओं के वैश्वीकरण के समान ही है – जनसंख्या, पर्यावरण, विकास, बेरोज़गारी, सुरक्षा, नैतिक व सांस्कृतिक पतन। मनुष्यजाति न्याय और अर्थ के लिए पुकार रही है।

तकनीक व विज्ञान में आने वाले बदलावों ने हमारी संस्थाओं की प्रत्युत्तर देने की अक्षमता को उजागर कर दिया है। देश ही अब भी किसी कार्य के प्रति ठोस कारवाई के लिए सामूहिक संकल्प बनाने का स्त्रोत है किंतु उसकी अपनी सत्ता ही विचाराधीन है। यह जाना–माना कथन दोहराना चाहूँगा कि राष्ट्र बड़ी समस्याओं के लिए छोटा तथा स्थानीय समस्याओं के लिए बहुत बड़ा है। बहुराष्ट्रीय कार्पोरेशन विश्व व्यापार में असंख्य अवसरों का उपभोग करते हैं और उनके निवेश का विस्तार होता है किंतु कार्पोरेट नेताओं को अब मानव अधिकारों जैसे क्षेत्र में भी कई प्रश्नों का सामना करना पड़ रहा है। धार्मिक संस्थान अब भी हज़ारों–लाखों निष्ठावान व्यक्तियों के साथ हैं परंतु संप्रदायवाद और उपभोक्तावाद और अधिक सहयोग चाहता है। संसार इस समय धर्म के नाम पर परोसे जाने वाली कट्टरता से भी आक्रांत है। हालाँकि फंडामेंटलिज़्म शब्द का प्रयोग करना उचित नहीं होगा क्योंकि प्रत्येक धर्म के पास अपने कुछ फंडामेंटल होते ही हैं, परंतु अधिकतर धार्मिक लोग हिंसा को भी नकारते हैं और यह मान कर चलते हैं कि उन्हें अपने लक्ष्य पूरे करने के लिए बलप्रयोग नहीं करना चाहिए। इस तरह संसार दिग्भ्रमित है, हमें कहाँ का रुख़ करना चाहिए?

ठोस अनुशंसाएँ

इंटर एक्शन परिषद का मानना है कि आचार संबंधी नीतियों के प्रसार के लिए सार्वभौम सत्ता ही सर्वश्रेष्ठ माध्यम हो सकती है। इसके अतिरिक्त हमें इलैक्ट्रॉनिक मास मीडिया तथा संभावित पार देशी संगठनों की भूमिका पर भी ध्यान देना चाहिए, जो वैश्विक परिदृश्य में निरंतर शक्तिसंपन्न होते जा रहे हैं।

वैश्विक आचार के प्रसार में सफलता को सुनिश्चित करने के लिए यह बहुत अनिवार्य और महत्वपूर्ण हो जाता है संसार के प्रमुख धर्म तथा प्रभावशाली प्रांत एक साथ मिल कर सार्वभौम देशों तथा विविध संबंधी संस्थानों पर दबाव डालें कि वे इस लक्ष्य की पूर्ति में सहायक हों। इस तरह कम से कम दो महत्वपूर्ण कार्य पूरे होंगे। एक ओर, इस सामूहिक प्रयास से यह दर्शाया जा सकेगा कि विभिन्न धर्म मुक्तमन से, मानवता से जुड़ी समस्याओं पर आपसी संवाद करते हुए, निष्कर्षों पर आ सकते हैं और नीति संबंधी स्तरों व नियमों की स्थापना कर सकते हैं, जो कि इस विश्व संकट को हल

करने के लिए आवश्यक हैं। वहीं दूसरी ओर, यह तथ्य भी सहायक होगा कि सारे संसार के धर्म मिल कर वैश्विक आचार संबंधी स्तरों का प्रसार करेंगे, जिससे इन्हें पूरे संसार में फैलाना और भी सरल हो सकेगा।

विश्व के धार्मिक नेताओं की सभा में वैश्विक नीति पर चर्चा हो सकती है। ऐसी सभाएँ सार्वभौम देशों और उनके नेताओं, शैक्षिक संस्थानों व जन संचार साधनों और उनके अपने धार्मिक संगठनों पर दबाव डालेंगी कि वे वैश्विक नीति पर सर्वसम्मति से निर्णय लें और उसका प्रचार करें। इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि इन सभाओं प्रमुख धर्मों के प्रतिनिधि शामिल हों, इसके अलावा महिलाओं की उपस्थिति भी सुनिश्चित की जाए। मौजूदा वैश्विक धार्मिक संगठन ऐसी सभाओं का आयोजन कर सकते हैं।

ऐसे समूहों की अनुशंसाएँ विशेष रूप से उन व्यक्तियों के लिए निर्देशित होनी चाहिए, जो निर्णय–निर्धारण करने वाले पदों पर आसीन हैं जैसे सरकार, शिक्षण संस्थान, मास मीडिया, गैर सरकारी और गैर लाभकारी संस्थान और प्रत्येक देश के धार्मिक संस्थान। इनका देश के निर्णय–निर्धारण से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष संबंध होता है और अनुशंसाओं में दी गई वैश्विक नीति को प्रचारित करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

अगर धार्मिक नेता इंटर एक्शन द्वारा दिए गए न्यौते को स्वीकार कर लेते हैं, तो यह मंच एक ऐसा स्थान होगा, जहाँ वैश्विक नीति से जुड़े ठोस उपाय सामने आ सकते हैं। हालाँकि यह विशिष्ट रूप नहीं, किंतु इसमें निम्नलिखित कारक शामिल हो सकते हैं, जैसेः

–आचार संहिता की सामान्य नीतियों का संग्रह, जिन्हें पुस्तक के आकार में संग्रहित कर, पूरे विश्व में पहुँचाया जा सकता है।

–इसके अतिरिक्त व्यवसाय, राजनीतिक दलों, जन संचार तथा अन्य के लिए भी आचार संहिता तैयार की जा सकती है जो कि स्वनियम में सहायक होंगे।

– विश्व के नेताओं के नाम सुझाव, जब संयुक्त राष्ट्र 1998 में, मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के पचास साल मनाए तो उस समय मानव कर्तव्यों की घोषणा भी की जानी चाहिए ताकि अधिकारों के साथ दायित्वों पर भी बात हो सके।

– एक वैश्विक शैक्षिक पाठ्यक्रम का विकास जिसमें विश्व के बेहतरीन धर्मों व दर्शनों का मेल होगा। ऐसा पाठ्यक्रम हर संस्थान के पास हो और इसे सप्रेषण की हर यथासंभव तकनीक द्वारा प्रचारित किया जाए जैसे इंटरनेट, टी.वी., वीडियो, रेडियो आदि।

– ऐसे पाठ्यक्रम के विकास के लिए समझ का विस्तार तथा अनिवार्य बौद्धिक संसाधनों का मेल, यू एन को अपने यूनीवर्सिटी सिस्टम में एक वर्ल्ड इंटरफेथ अकेडमी को शामिल करना चाहिए जो विश्व के सभी धर्मों के विद्वानों, छात्रों व नेताओं को एक साथ ला सके।

वैश्विक आचार नीति स्तरों की आवश्यकता

जैसा कि अरस्तू ने कहा है, मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। क्योंकि हमें समाज में रहना है, हमें एक–दूसरे के साथ आपसी सद्भाव के बीच रहना है –मनुष्य को नियमों और कानूनों की आवश्यकता है। आचार नीति ऐसे मापदंड हैं जो एक सामूहिक जीवन को संभव बनाते हैं। आत्मसंयम और आचार नीति के अभाव में, मानव जाति के लिए जंगलों में जाने की नौबत आ सकती है। इस निरंतर परिवर्तनशील जगत में मनुष्य जाति को अपने लिए एक नीतिपरक आधार की आवश्यकता है जिस पर यह टिकी रह सके।

विश्व के धर्म, मानवजाति के लिए विवेक व प्रज्ञा की महान परंपराएँ प्रस्तुत करते हैं। विवेक का यह कोष, बहतु ही प्राचीन है और इस समय इसकी सबसे अधिक आवश्यकता अनुभव की जा रही है। आचार नीति राजनीति और कानून से भी ऊपर होनी चाहिए क्योंकि राजनीतिक कार्यवाही भी मूल्यों और चुनावों से जुड़ी होती है। हमारे राजनीतिक नेतृत्व का आचार नीति से प्रेरित होना बहुत महत्व रखता है। शिक्षा मानवीय समझ और सहिष्णुता के लिए द्वार खोलती है। आचार नीति व उचित–अनुचित के ज्ञान के अभाव में, हमारे स्कूल केवल कारखानों में बदल कर रह जाएँगे। जन संचार के साधन मनुष्यों के मन और व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं किंतु हिंसा, अवमूल्यन तथा मीडिया का दुष्प्रभाव इसे उन्नत करने की बजाए पतन के गर्त में गिरा रहा है।

बदलाव से भरी इस दुनिया में, हमारे संस्थानों को, आचार नीति के प्रति नए सिरे समर्पित होना हागा। हम विश्व के धर्मों तथा आचार से जुड़ी परंपराओं में अपने लिए इन निर्देशों को पा सकते हैं। उनके पास ऐसे आध्यात्मिक संसाधन हैं जो हमारे सजातीय, राष्ट्रीय, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक तनावों से जुड़ी समस्याओं को नीति संबंधी समाधान दे सकते हैं। विश्व के धर्मों के सिद्धांत भले ही अलग हों परंतु वे सभी आधारभूत स्तरों की सामान्य आचार सहिंता का समर्थन करते हैं। विश्व को ऐक्य में बाँधने वाला सूत्र, उसे विभाजित करने वाले सूत्र से कहीं महान है। वे सभी आत्म–संयम, दायित्व, उत्तरदायित्व तथा आपस में बाँटने की हिमायत करते हैं। वे सभी विनम्रता, करुणा व न्याय को समर्थन देते हैं। प्रत्येक इस जीवनरूपी पहेली को हल करने के लिए अपनी ओर से समाधान देता है जो समग्र के लिए उपयोगी हो सकते हैं। अपनी वैश्विक समस्याओं को हल करने के लिए हमें एक सामान्य नीतिपरक आधार से आरंभ करना होगा।

वैश्विक आचार नीति का मूल

वर्तमान में मानवता के पास एक बेहतर वैश्विक व्यवस्था पाने के लिए पर्याप्त आर्थिक, सांस्कृतिक व आध्यात्मिक संसाधन हैं परंतु नई व पुरानी, सजातीय, राष्ट्रीय, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक तनाव एक बेहतर जगत के शांतिपूर्ण निर्माण के लिए संकट बन गए हैं। ऐसी नाटकीय वैश्विक परिस्थितियों में मानवता को ऐसे लोगों का विज़न चाहिए जो आपस में अपने सारे भेदभाव भूल कर भाईचारे के साथ रह सकें और धरती की सुरक्षा के लिए अपने उत्तरदायित्व को जानें, एक ऐसा विज़न जो आशा, लक्ष्य, आदर्शों व स्तरों पर टिका हो। हम 1993 में शिकागो में हुए विश्व धर्म सम्मेलन में, वैश्विक आचार नीति की घोषणा के आभारी हैं, जिसके लिए हम भी कार्यरत हैं।

जब से यू. एन. ने मानव अधिकारों की बात उठाई, तब से अंतर्राष्ट्रीय नियम और कानून व्यवस्था के अधीन मानव अधिकारों को बहुत बल मिला। नागरिक व राजनीतिक अधिकार तथा सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक मानव अधिकारों पर दो सम्मेलन आयोजित किए गए और इसके बाद विएना घोषणा में मानव अधिकारों पर कार्यवाही को विस्तृत किया गया। यू एन घोषणा में अधिकारों के जिस स्तर की बात की गई है। शिकागो घोषणा में वही बात दायित्वों के रूप में समझाई गई है; मनुष्य की गरिमा व मर्यादा का पूर्ण बोध व प्रकटीकरण, सभी मनुष्यों के लिए एक समान स्वतंत्रता और समानता और एक–दूसरे के लिए अनिवार्य एकता व अंतःनिर्भरता, वैयक्तिक व सामुदायिक रूप से। हम लोग इस बात के लिए भी सहमत हैं कि केवल नियमों, सिद्धांतों या सम्मेलनों के माध्यम से वैश्विक व्यवस्था को नहीं पाया जा सकता। यदि दायित्वों व अधिकारों के प्रति एक चेतना विकसित करनी है तो स्त्री–पुरुषों के हृदयों को संबोधित करना होगा; दायित्वों के बिना अधिकार नहीं टिक सकते और वैश्विक नीति के अभाव में कोई बेहतर वैश्विक व्यवस्था हो ही नहीं सकती।

वैश्विक नीति को हम तोराह, गॉस्पल, कुरान या भगवद् गीता का विकल्प नहीं मान सकते और न ही ये बुद्ध अथवा कंफ्यूशियस की शिक्षाओं की बराबरी कर सकते हैं। एक वैश्विक नीति सामान्य मूल्यों, स्तरों या बुनियादी रवैयों को पेश करती है। दूसरे शब्दों में, सामान्य नियमों के लिए एक सर्वसम्मति विकसित करनी होगी और सभी धर्मों से जुड़े मूल्यों के आधार पर कुछ मापदंड और स्तर बनाने होंगे, जिन्हें वे धर्म अपने अलग–अलग विश्वासों के बावजूद मानें और साथ ही धर्म को न मानने वाले भी उन्हें अपनी मान्यता दें।

शिकागो घोषणा में, इतिहास में पहली बार, धर्मों की आम सहमति से यह प्रपत्र तैयार हुआ, हम दो नियमों की अनुशंसा करते हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति, समाज या राजनीतिक नीति के लिए बहुत महत्व रखते हैं:

1. हर मनुष्य के साथ मनुष्यता का बर्ताव होना चाहिए।

2. दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो, जैसा तुम अपने लिए चाहते हो। यही नियम प्रत्येक धार्मिक परंपरा का एक अंश है।

इन दो नियमों के आधार पर चार प्रतिबद्धताएँ विकसित की जा सकती हैं, जिन्हें सभी धर्म अपनी सहमति देते हैं और हमारी ओर से भी पूरा समर्थन है।

–अहिंसा व जीवन के प्रति सम्मान की संस्कृति के लिए वचनबद्धता

– एकता व एक समान आर्थिक व्यवस्था की संस्कृति के लिए वचनबद्धता

– सहिष्णुता व सत्यता पर आधारित संस्कृति के लिए वचनबद्धता

– समान अधिकारों व स्त्री–पुरुष की समान भागीदारी की संस्कृति के लिए वचनबद्धता

परिवार नियोजन नीतियों के लिए सभी धार्मिक दृष्टिकोणों व मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए तय किया गया वर्तमान में जनसंख्या की प्रवृत्ति को देखते हुए प्रभावी नियोजन करना बहुत ही महत्वपूर्ण हो गया है। विविध देशों के सकारात्मक अनुभवों को बाँटा जाना चाहिए और परिवार नियोजन में वैज्ञानिक शोध को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

शिक्षा, यह भी सभी स्तरों पर युवा पीढ़ी के मन में वैश्विक नीति को विकसित करने में अपनी अहम भूमिका निभाती है। प्राथमिक शिक्षा से विश्वविद्यालय तक के पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा को अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। शैक्षिक कार्यक्रमों में सहिष्णुता जैसे मसलों को इस तरह प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि वे अपने सभी आयामों के साथ अपना प्रभाव छोड़ सकें। युवाओं के मानसिक विकास को मुद्दा बनाया जाना चाहिए। इस लक्ष्य को पाने के लिए यूनेस्को, संयुक्त राष्ट्र विश्वविद्यालय तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को एक साथ आना चाहिए। इलैट्रॉनिक मीडिया को भी इसमें हिस्सेदार बनाया जा सकता है।

हमने लक्ष्य किया है कि अर्थ कौंसिल व ग्रीन क्रॉस इंटरनेशनल एक अर्थ चार्टर विकसित कर रहे हैं। हम इस पहल का स्वागत करते हैं जिसमें उन्होंने मूल्यों, व्यवहारों, सरकारों, निजी क्षेत्रों व सिविल सोसायटी आदि में आने वाले बुनियादी परिवर्तनों को परिभाषित करने के लिए विश्व के धर्मों तथा अन्य दलों को भी शामिल किया है।

क्योंकि जीवन के प्रति सम्मान ही मूल नीतिगत वचनबद्धता है, जो बताती है कि युद्ध और हिंसा पर रोकथाम ही इस समय विश्व प्राथमिकता होनी चाहिए। इस विषय में दो

बातें ध्यान देने योग्य हैं : छोटे और अद्‌र्ध–स्वचालित हथियारों के निर्माण और प्रयोग पर पाबंदी होनी चाहिए और इसी तरह बारूदी सुरंगों के कारण भी बहुत से लोगों को अपनी जानों से हाथ धोना पड़ रहा है। यह समस्या खासतौर पर कंबोडिया, भूतपूर्व यूगोस्लाविया, अफ्रीका तथा अफगानिस्तान में गंभीर है। लैंडमाईंस के विषय में बहुत सही तरह वे व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि वे लोगों की जान का खतरा न बनें।

भागीदारों की सूची

इंटर एक्शन परिषद सदस्य

हेल्मुट श्मिट, सभापति,

एच. इ. श्री एंड्रीज़

एच. इ. श्री मिगुअल डि ला मैड्रिड हरटाडो

पियरे एलियट ट्रुडियो

विशेषज्ञ

मुघरम अल–घामदी, डीन, दि किंग फाहद एकेडमी लंदन

मिकयो अराकी, प्रोफेसर, यूनीवर्सिटी ऑफ सुकुबा

शांति अरम, अध्यक्ष, शांति आश्रम, कोयंबटूर, भारत

प्रोफ़ेसर हान्स कुंग, टुबिन्जेन विश्वविद्‌यालय

प्रोफ़ेसर थॉमस एस एक्सवर्दी, सार्वजनिक नीति संकाय, हार्वर्ड विश्वविद्‌यालय

कार्डिनल फ्रांज कोनिग, विएना, ऑस्ट्रिया

प्रोफ़ेसर किम क्यौंग –डौंग, सियोल नेशनल यूनीवर्सिटी

आनंदा ग्रेरो, कोर्ट ऑफ अपील, भूतपूर्व जज, श्री लंका

अबडोली जावद फालातुरी, निदेशक, इस्लामिक साईंटिफिक एकेडमी, प्रोफेसर, यूनीवर्सिटी ऑफ कोलोन

प्रोफ़ेसर पीटर्स लैड्‌समैन, यूरोपियन एकेडमी ऑफ साईंस, साल्ज़बर्ग

लियु जियो–फेंग, एकेडमी डायरेक्टर, इंस्टीट्यूट ऑफ सीनो– क्रिस्टियन स्टडीज, हांगकांग

एल.एम. सांघवी, हाई कमिश्नर भारत, लंदन

माजोरी सुचोकी, डीन, स्कूल ऑफ थियोलॉजी एट क्लारमोंट, यूएसस

शिजु यामागुची, भूतपूर्व संसद सदस्य, जापान, निरीक्षणकर्ता

पत्रकार

सुश्री फ्लोरा लुईस, इंटरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून

————————

मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा, 1997

मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा का ख़ाका

इंटर एक्शन परिषद द्वार प्रस्तावित

1 सितंबर 1997

परिचयात्मक कथन

अब मानव दायित्वों के बारे में बात करने का समय आ गया है।

दुनिया की अर्थव्यवस्था के साथ ही वैश्विक समस्याएँ भी सामने आई हैं, और वैश्विक समस्याएँ, विचारों, मूल्यों तथा सभी संस्कृतियों व समाजों द्वारा सम्मानित नियमों के आधार पर ही वैश्विक समाधान भी चाहती हैं। सभी व्यक्तियों के लिए एक समान रूप से लागू होने वाले अधिकारों को पहचान देने के लिए न्याय,स्वतंत्रता व शांति का आधार चाहिए – परंतु साथ ही यह माँग भी रखी जा रही है कि एक नीतिगत आधार बनाने के लिए अधिकारों के साथ–साथ दायित्वों को भी समान महत्व दिया जाना चाहिए ताकि सभी स्त्री–पुरुष अपनी पूरी संभावना के साथ शांतिपूर्ण तरीके से जी सकें। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर केवल नियमों, कानूनों और सम्मेलनों के माध्यम से एक बेहतर सामाजिक व्यवस्था नहीं पाई जा सकती, इसके लिए हमें एक वैश्विक नीति की आवश्यकता होगी। प्रगति के लिए मानवीय आकांक्षा को केवल तयशुदा मूल्यों और विचारों के साथ ही साकार किया जा सकता है जिन्हें हर युग के लोगों व संस्थाओं पर समान रूप से लागू किया जा सके।

अगले साल संयुक्त राष्ट्र द्वारा दी गई मानव अधिकार घोषणा के पचास साल पूरे होने वाले हैं। इस अवसर पर यदि मनुष्य के दायित्वों की सार्वभौम घोषणा को भी स्वीकार किया जाए

तो इससे वे अधिकारों के पूरक होंगे, उन्हें मजबूती मिलेगी और एक बेहतर संसार बनाने में मदद मिलेगी।

मानव दायित्वों का यह मसौदा स्वतंत्रता और दायित्व का संतुलन लाना चाहता है तथा मतभेद की स्वतंत्रता से जुड़ाव की स्वतंत्रता तक आना चाहता है। अगर कोई व्यक्ति या सरकार अपनी आजादी को बढ़ाने के लिए दूसरों का दुरूपयोग करती है, तो इससे बहुत से लोग पीड़ित होंगे। अगर मनुष्य धरती के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हुए, अपनी आजादी को बढ़ाना चाहते हैं, तो इससे आने वाली पीढ़ियाँ प्रभावित होंगी।

इस घोषणा प्रपत्र को तैयार करने की पहल हमें अधिकारों और दायित्वों का संतुलन साधना सिखाएगी और साथ ही उन आदर्शों, मान्यताओं तथा राजनीतिक विचारों के समाधान का भी साधन बनेगी जो पहले विपक्षी रहे हैं। प्रस्तावित घोषणा संकेत देती है कि केवल अधिकारों पर ही बल देने से अंतहीन विवाद और संघर्ष का जन्म होगा, अपनी आजादी के लिए बल देने वाले धार्मिक दलों को, दूसरों को भी सम्मान देना आना चाहिए। व्यक्ति को संभावित आजादी दी जानी चाहिए किंतु साथ ही उस पर यह दायित्व भी होना चाहिए कि कहीं वह अधिकारों की आजादी का दुरूपयोग न करने लगे।

इंटर एक्शन परिषद मानव आचार संहिता के स्तरों का प्रारूप 1987 से तैयार कर रही है परंतु इसका कार्य उन आध्यात्मिक नेताओं व ऋषियों की प्रज्ञा पर आधारित है, जिन्होंने हमें युगों पूर्व ही यह चेतावनी दे दी थी कि उत्तरदायित्व को स्वीकारे बिना पाई गई आजादी, आजादी को ही नष्ट कर सकती है, जब अधिकारों व उत्तदायित्वों के बीच संतुलन होता है, तो स्वतंत्रता बनी रहती है और एक बेहतर संसार बनाया जा सकता है।

इंटर एक्शन कौंसिल आपके परीक्षण और योगदान के लिए निम्नलिखित प्रारूप प्रस्तुत करती है:

मानवीय उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा

(इंटरएक्शन कौंसिल द्वारा प्रस्तावित)

प्रस्तावना

जबकि संसार में मानव परिवार के सभी सदस्यों की मर्यादा, समानता व समान अधिकार स्वतंत्रता, न्याय व शांति को पहचान देना अनिवार्य है, वहीं यह अपने साथ कुछ उत्तरदायित्व भी लाती है।

जबकि केवल अधिकारों पर ही बल देने से कलह, विवाद, विभाजन, अंतहीन संघर्ष तथा मानवीय उत्तरदायित्वों की उपेक्षा होने से निरंकुशता व कलह को बढ़ावा मिलता है।

काननू व मानव अधिकारों का प्रचार इस बात पर निर्भर करता है कि स्त्री और पुरुष न्यायपूर्वक पेश आएँ।

जबकि वैश्विक समस्याएँ अपने लिए वैश्विक समाधान चाहती हैं, जिसे मूल्यों, आदर्शों व सभी संस्कृतियों व समाजों द्वारा पाए जाने वाले नियमों से ही पाया जा सकता है।

जबकि सभी व्यक्ति, अपनी योग्यता व ज्ञान के अनुसार, एक बेहतर सामाजिक व्यवस्था का उत्तरदायित्व रखते हैं, वैश्विक व घरेलू स्तर पर इस लक्ष्य को केवल नियमों, कानूनों या सिद्धांतों द्वारा ही नहीं पाया जा सकता।

जबकि प्रगति व सुधार के लिए मानव आकांक्षा को तयशुदा मूल्यों व सभी व्यक्तियों तथा संस्थाओं पर लागू होने वाले मापदंडों द्वारा ही पाया जा सकता है।

इस प्रकार

महा सभा यह उद्धोषणा करती है कि सभी देशों तथा लोगों के लिए मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा यह आशा प्रकट करती है कि समाज के सभी व्यक्ति, अपने मन में निरंतर इस घोषणा को स्मरण रखते हुए, समुदायों की प्रगति में अपना योगदान देंगे और अपने सभी सदस्यों को प्रबुद्ध होने में सहायक होंगे। हम विश्व के नागरिक, उन सभी वचनबद्धताओं पर नए सिरे से बल देते हैं, जिन्हें पहले ही मानव अधिकारों की सार्वभौम उद्धोषणा में कहा गया है, जैसे सभी व्यक्तियों की गरिमा व मर्यादा की स्वीकृति, उनकी स्वतंत्रता तथा समानता और उनकी आपसी अखंडता। पूरे विश्व में इन उत्तरदायित्वों के प्रति स्वीकृति तथा सजगता का प्रचार और शिक्षण किया जाना चाहिए।

मानवता के आधारभूत नियम

पहला अनुच्छेद

प्रत्येक व्यक्ति पर अपने लिंग, सजातीय मूल, सामाजिक स्तर, सार्वजनिक मत, भाषा, आयु, राष्ट्रीयता या धर्म के बावजूद, सभी व्यक्तियों के साथ मानवता से पेश आने का दायित्व है।

दूसरा अनुच्छेद

किसी भी व्यक्ति को किसी भी अमानवीय व्यवहार को अपना समर्थन नहीं देना चाहिए, परंतु प्रत्येक व्यक्ति का यह दायित्व बनता है कि वह दूसरों की मर्यादा व स्वाभिमान के लिए प्रयत्न करे।

तीसरा अनुच्छेद

कोई भी व्यक्ति, समूह, संस्था, देश, सेना या पुलिस अच्छाई या बुराई से ऊपर नहीं है; सभी नीतिगत स्तरों से संबंध रखते हैं। सभी का दायित्व बनता है कि वे बुराई को निरुत्साहित करते हुए, अच्छाई का प्रचार करें।

अनुच्छेद चार

विवेक तथा अंतःकरण युक्त सभी व्यक्तियों को सभी व्यक्तियों, परिवारों, समुदायों, राष्ट्रों व धर्मों की एकता के प्रति दायित्व लेना चाहिए। दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार कभी न करें, जैसा आप अपने लिए नहीं चाहते।

अहिंसा तथा जीवन के प्रति सम्मान

अनुच्छेद पाँच

प्रत्येक व्यक्ति जीवन के प्रति सम्मान का दायित्व भाव रखता है। किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं दिया जा सकता कि वह दूसरे व्यक्ति को सताए या उसे मारे। इसमें व्यक्तियों या समुदायों द्वारा आत्म–बचाव का अधिकार भी बाहर नहीं है।

अनुच्छेद छह

देशों, समूहों व व्यक्तियों के बीच के विवाद हिंसा के बिना हल किए जाने चाहिए। किसी भी सरकार को आतंकवाद, महिलाओं या बच्चों के शोषण या युद्ध का कोई माध्यम नहीं बनना चाहिए। प्रत्येक नागरिक व सार्वजनिक अधिकारी का दायित्व बनता है कि वह शांतिपूर्वक और अहिंसक तरीक़े से पेश आए।

अनुच्छेद सात

प्रत्येक व्यक्ति अनंत रूप से अनमोल है और उसे बिना किसी शर्त के सरंक्षण मिलना चाहिए। पशु तथा प्राकृतिक परिवेश भी संरक्षण की माँग रखता है। सभी व्यक्तियों का यह दायित्व बनता है कि वे वायु, जल तथा धरती की माटी का सरंक्षण करे ताकि वर्तमान वासियों के साथ–साथ आने वाली पीढ़ियों का भी कल्याण हो सके।

न्याय व एकता

अनुच्छेद आठ

प्रत्येक व्यक्ति का यह दायित्व बनता है कि वह अखंडता, ईमानदारी और निष्पक्षता के साथ पेश आए। कोई भी व्यक्ति या समूह, दूसरे व्यक्ति या समूह को उसकी संपत्ति से वंचित न करे।

अनुच्छेद नौ

सभी व्यक्तियों का यह दायित्व बनता है कि वे उचित साधनों के माध्यम से निर्धनता, कुपोषण, अज्ञानता और असमानता से उबरने का प्रयत्न करें। उन्हें पूरे संसार में वहनीय विकास का प्रचार करना चाहिए ताकि सभी लोगों के लिए समानता, न्याय, स्वतंत्रता, सुरक्षा व गरिमा को सुनिश्चित किया जा सके।

अनुच्छेद 10

सभी व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व बनता है कि वे अपने प्रयत्नों के फलस्वरूप प्रतिभा का विकास करें, उन्हें शिक्षा तथा सार्थक कार्य को पाने का समान अधिकार मिला चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को ज़रूरतमंद, निर्धन, अपाहिज तथा भेदभाव के शिकार लोगों की मदद करनी चाहिए।

अनुच्छेद 11

सारी संपत्ति तथा धन संपदा को न्याय के अनुसार, मानव जाति के उत्थान के लिए प्रयोग में लाया जाना चाहिए। आर्थिक व राजनीतिक सत्ता को दूसरों पर प्रभाव जमाने के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए, इसे सामाजिक व्यवस्था तथा आर्थिक न्याय के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

सत्यता व असहिष्णुता

अनुच्छेद 12

प्रत्येक व्यक्ति का यह उत्तरदायित्व बनता है कि वह सत्य आचरण करे। भले ही कोई कितना भी बलशाली क्यों न हो, उसे असत्य का आश्रय नहीं लेना चाहिए। गोपनीयता के अधिकार तथा निजी व व्यावसायिक विश्वसनीयता का सम्मान किया जाना चाहिए। कोई भी बाध्य नहीं कि वह सदा सबको सब कुछ बता दे।

अनुच्छेद 13

कोई भी नेता, सार्वजनिक अधिकारी, नेता, वैज्ञानिक, लेखक या कलाकार आम नीतिगत स्तरों से परे नहीं है और ग्राहकों के प्रति विशेष कर्तव्य रखने वाले डॉक्टरों, वकीलों या अन्य व्यवसायियों को भी इससे दूर नहीं रखा जा सकता। व्यावसायिक व अन्य आचार संहिता से सत्यता व निष्पक्षता को इन नीतियों की प्राथमिक सूची में होना चाहिए।

अनुच्छेद 14

मीडिया को, जनता को सूचना देने तथा समाज व सरकारी कामों से जुड़ी निंदा आदि के लिए आजादी दी जानी चाहिए, जो कि एक न्यायी समाज के लिए अनिवार्य है, इसका प्रयोग पूरे उत्तरदायित्व तथा विवेक के साथ किया जाना चाहिए। मीडिया की आजादी अपने साथ सटीक व सच्ची रिपोर्टिंग का दायित्व भी लाती है। मानवीय मर्यादा का हनन करने वाली सनसनीख़ेज़ रिर्पोटिंग को सदा उपेक्षित किया जाना चाहिए।

अनुच्छेद 15

सबको निश्चित रूप से धार्मिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, परंतु सभी धर्मों के प्रतिनिधियों का दायित्व बनता है कि दूसरे धर्मों व पंथों के विरुद्ध भेदभाव का विरोध करें। उन्हें आपस में घृणा, धर्मांधता तथा धार्मिक संघर्षों से बचाव करना चाहिए, और सभी लोगों के बीच आपसी सहिष्णुता तथा आपसी सम्मान को विकसित करना चाहिए।

परस्पर सम्मान व साझेदारी

अनुच्छेद 16

सभी स्त्री और पुरुषों का दायित्व बनता है कि वे एक–दूसरे के प्रति सम्मान का प्रदर्शन करें और साझेदारी को समझें। कोई भी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का काम संबंधी शोषण न करे। आपस में काम संबंध रखने वाले साथियों को एक–दूसरे की देखरेख का दायित्व निभाना चाहिए।

अनुच्छेद 17

अपनी सारी धार्मिक व सांस्कृतिक विविधताओं के साथ विवाह, अपने लिए प्रेम, निष्ठा तथा क्षमाशीलता चाहता है और इसे सुरक्षा तथा परस्पर समर्थन का आश्वासन देना चाहिए।

अनुच्छेद 18

प्रत्येक जोड़े का दायित्व बनता है कि वह परिवार नियोजन पर ध्यान दे। माता–पिता और बच्चों की आपसी दोस्ती उनके परस्पर प्रेम, सम्मान, प्रशंसा और परवाह को दर्शाती है। किसी भी माता–पिता या वयस्क को बच्चों का शोषण या उनके साथ बुरा बर्ताव नहीं करना चाहिए।

निष्कर्ष

इस उद्धोषणा में दिए गए किसी भी वाक्य को किसी भी व्यक्ति, देश, समूह द्वारा प्रयुक्त करते हुए, अधिकारों, दायित्वों तथा स्वतंतत्रा के विनाश के लिए प्रयोग में नहीं लाना चाहिए। इसी नियम में हम 1948 की मानव अधिकार घोषणा को भी शामिल कर सकते हैं।

मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम उद्घोषणा

निष्कर्षों व अनुशंसाओं पर रिपोर्ट, उच्च स्तरीय विशेषज्ञ दल सभा,

हेल्मुट श्मिट के सभापतित्व में

20–22 अप्रैल 1997

विएना, ऑस्ट्रिया

अब मानवीय उत्तरदायित्वों के विषय में बात करने का समय आ गया है।

इंटर एक्शन कौंसिल ने उपयुक्त समय पर मानव उत्तरदायित्वों के सार्वभौम उद्घोषणा का मसला उठाया है। हालाँकि हम पारंपरिक तौर पर हमने मानव अधिकारों के बारे में बात की है और वास्तव में विश्व, 1948 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा की गई मानव अधिकारों की सार्वभौम उद्घोषणा के बाद से बहुत आगे आ गया है और उसने इन्हें अंतर्राष्ट्रीय पहचान और संरक्षण भी प्रदान किया है, उसी प्रकार अब मानवीय दायित्वों को पहचान और स्वीकृति देने का समय आ गया है।

मानवीय दायित्वों पर बल देना कई कारणों से अनिवार्य हो गया है। निःसंदेह, यह उपाय विश्व के केवल कुछ ही देशों के लिए नया है; अनेक समाज पारंपरिक रूप से मानव संबंधों में, अधिकारों के स्थान पर दायित्वों को प्रश्रय देती आई हैं। यह सत्य है, उदाहरण के लिए, पूर्व में इसका अधिक प्रभाव देखा जा सकता है। जबकि पश्चिम में, पारंपरिक तौर पर, कम से कम सत्रहवीं सदी के प्रबुद्ध युग से, स्वतंत्रता व समानता की अवधारणा पर ध्यान दिया जाने लगा, पूर्व में उत्तरदायित्व और समुदाय का परस्पर संबंध रहा है। मानव कर्तव्यों के स्थान पर, मानव अधिकारों की घोषणा का प्रारूप तैयार किया गया, जो निःसंदेह रूप से, प्रारूप तैयार करने वालों की दार्शनिक और सांस्कृति पृष्ठभूमि की झलक देता है, जिन्होंने पश्चिमी सत्ताओं का प्रतिनिधित्व किया, जो कि दूसरे विश्व युद्ध से विजयी रहीं।

मानव दायित्वों व कर्तव्य की धारणा, स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व की सोच को संतुलित करती है। जहाँ अधिकार स्वतंत्रता से संबंध रखते हैं, वहीं दायित्व या कर्तव्य, उत्तरदायित्वों से जुड़े हैं। इन सभी भेदभावों के बावजूद स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व अंतःनिर्भर हैं। उत्तरदायित्व एक नैतिक योग्यता के रूप में, स्वाभाविक तौर पर स्वतंत्रता की निगरानी करती है। किसी भी समाज में, आजादी को सीमाओं के बिना अभ्यास में नहीं लाया जा सकता। इस प्रकार, हमारी आजादी जितनी ज़्यादा होती है, ज़िम्मेदारी उतनी ही बढ़ती जाती है, जो कि हमारे अपने तथा दूसरों के प्रति होती है। हमें उदासीनता की आजादी से, जुड़ाव की आजादी की ओर आना चाहिए।

इसका विपरीत भी उतना ही सत्य है ; उत्तरदायित्व की भावना विकसित होने से, नैतिक चरित्र में वृद्धि होती है और हमारी आंतरिक आजादी भी बढ़ती है। जब आजादी हमें कार्य करने की अलग–अलग संभावनाएँ देती है, जिनमें उचित या अनुचित करने का चुनाव भी शामिल होता है तो एक उत्तरदायी नैतिक चरित्र सदा उचित को ही प्रश्रय देता है।

खेद की बात यह है कि उत्तरदायित्व और स्वतंत्रता के इस संबंध को सदा स्पष्ट भाव से नहीं समझा गया। कुछ आदर्श विचारधाराएँ व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर बल देती हैं, जबकि कुछ सामाजिक समूह के प्रति अटूट वचनबद्ता को प्रोत्साहित करती हैं।

उचित संतुलन के अभाव में, अबाधित स्वतंत्रता भी थोपी गई सामाजिक ज़िम्मेदारी की तरह ख़तरनाक हो सकती है। अत्यधिक आर्थिक आजादी तथा पूँजीवादी लोभ से ही महान सामाजिक अन्याय उपजता है, जबकि इसके साथ ही समाज या साम्यवादी आदर्शों के नाम पर लोगों की बुनियादी आजादी को भी बुरी तरह से कुचला जाता है।

किसी भी प्रकार की अति अवांछनीय है। वर्तमान में, पूर्व–पश्चिम संघर्ष के ओझल होने तथा शीत युद्ध का अंत होने से, मानवजाति आजादी और ज़िम्मेदारी के बीच वांछित संतुलन पाने के बहुत निकट आ गई है। हमने आजादी और अधिकारों के लिए संघर्ष किया है। अब उत्तरदायित्व और मानव कर्तव्यों को पोषित करने का समय आ गया है।

इंटर एक्शन कौंसिल का मानना है कि विश्व अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण का, विश्व की समस्याओं के वैश्वीकरण के साथ मेल किया जा सकता है। वैश्विक अंतःनिर्भरता चाहती है कि हमें एक–दूसरे के साथ परस्पर सामंजस्य के बीच जीना चाहिए, मनुष्य को अपने लिए नियम और संयम चाहिए। आचार संहिता या नीति ऐसे निम्नतम स्तर हैं जो सामूहिक जीवन को संभव बनाते हैं। आत्म–संयम तथा नीति के अभाव में, मानव जाति को उत्तरजीविता के लिए उपयुक्त की मानसिकता की ओर आना होगा। विश्व को इस समय एक नीतिपरक आधार की आवश्यकता है जिस पर यह खड़ा हो सके।

इसी माँग को पहचान देते हुए, इंटर एक्शन कौंसिल ने, इटली के रोम में, मार्च 1987 को ला सिविलटा कैथोलिका में, आध्यात्मिक नेताओं व राजनीतिक नेताओं की एक सभा आयोजित की जिसमें सार्वभौम नीति परक स्तरों की खोज का कार्य आरंभ किया गया। ये पहले, जापान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री ताकेओ फुकुदा द्वारा की गई, जिन्होंने 1983 में इंटर एक्शन कौंसिल की स्थापना की थी। इसके बाद, 1996 में, परिषद ने वैश्विक नीति परक स्तरों के विषय पर, उच्च स्तरीय विशेषज्ञों द्वारा एक रिपोर्ट को प्रस्तुत करने आग्रह किया। मई 1996 में, वैंकूवर प्लीनरी सभा के दौरान, इस समूह की रिपोर्ट का स्वागत किया गया, जिसमें अनेक धर्मों के धार्मिक नेताओं के अतिरिक्त, सारे विश्व से आए विशेषज्ञ भी शामिल थे। इस रिपोर्ट से पता चलता है कि विश्व के सभी धर्मों में बहुत कुछ सामान्य पाया जाता है। कौंसिल ने अनुशंसा

की कि 1998 में, संयुक्त राष्ट्र की मानव अधिकार घोषणा की पचासवीं वर्षगांठ के अवसर पर, संयुक्त राष्ट्र को एक सम्मेलन आयोजित करना चाहिए जिसमें मानव उत्तरदायित्वों की भी घोषणा की जा सके, जो कि उनके पिछले 'अधिकारों' से जुड़े काम की पूरक होगी।

मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम घोषणा का प्रारूप तैयार करने की पहल न केवल स्वतंत्रता व उत्तरदायित्व को संतुलित करेगी बल्कि उन विचारधाराओं व राजनीतिक दृष्टिकोणों का भी समाधान करेगी, जिन्हें अतीत में विरोधी क़रार दिया गया था। बुनियादी तथ्य यही है कि मनुष्य जिस तरह संभावित स्वतंत्रता पाने का अधिकारी है, उसी प्रकार उसके भीतर उत्तरदायित्व का भाव भी विकसित होना चाहिए ताकि वह अपनी स्वतंत्रता को उचित रूप से संचालित कर सके।

यह कोई नया विचार नहीं है।

सारी सहस्राब्दी के दौरान संत, महात्मा और पैगंबर मनुष्य जाति को उसके उत्तरदायित्वों को गंभीरता से लेने का उपदेश देते आए हैं। हमारी सदी में, उदाहरण के लिए महात्मा गाँधी ने सात सामाजिक पाप गिनाए:

1. नियमों के बिना राजनीति
2. नैतिकता के बिना वाणिज्य
3. कार्य के बिना संपदा
4. चरित्र के बिना शिक्षा
5. मानवता के बिना विज्ञान
6. विवेक के बिना आनंद
7. बलिदान के बिना पूजा

हालाँकि वैश्वीकरण ने गाँधी और ऐसे अन्य नेताओं की शिक्षा को नए आपातकाल में ला खड़ा किया है। हमारे टी.वी. की हिंसा सैटेलाइट के माध्यम से पूरे ग्रह में प्रचारित हो गई है। सुदूर वित्तीय बाज़ारों की सट्टेबाज़ी स्थानीय समुदायों को प्रभावित कर सकती है। अब निजी उद्योगपतियों के आगे सरकार का दायित्व और भी बढ़ जाता है। निजी सत्ता को स्वयं ही अपने लिए दायित्व और कर्तव्य चुनने होंगे और संसार के लिए मानव उत्तरदायित्वों के चुनाव का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो गया है।

अधिकारों से दायित्वों की ओर

अधिकार और कर्तव्य आपस में जुड़े हैं इसलिए मानव अधिकार का विचार तभी महत्व रखता है, जब सभी लोगों को इसे सम्मान देने के कर्तव्य का भान करा सकें। किसी भी समाज के नियमों से परे, मानव संबंध सौवभौम रूप से, अधिकारों व दायित्वों के अस्तित्व से ही संबंध रखते हैं।

मानवीय क्रियाशीलता को निर्देशित करने के लिए किसी जटिल तंत्र की आवश्यकता नहीं है। यदि केवल एक ही प्राचीन नियम का, सही मायनों में पालन किया जाए तो मानवीय संबंधों को मान दिया जा सकता है : सुनहरा नियम। अपने नकारात्मक रूप में यह कहता है कि हम दूसरों के साथ वैसा नहीं करते, जो हम अपने साथ नहीं होने देना चाहते। सकारात्मक अर्थ कहीं अधिक सक्रिय भूमिका निभात है, उसके अनुसार : दूसरों के साथ वैसा ही करें जैसा आप अपने लिए चाहते हों।

इस सुनहरे नियम को ध्यान में रखते हुए, मानव अधिकारों की सार्वभौम उद्घोषणा एक ऐसा आरंभिक बिंदु है जहाँ से हम उन कुछ दायित्वों की बात कर सकते हैं जो उन अधिकारों के अनिवार्य पूरक हो सकते हैं।

–यदि हमारे पास जीवन का अधिकार है, हम जीवन के प्रति सम्मान का दायित्व रखते हैं।

– यदि हमारे पास आजादी पाने का अधिकार है तो हम दूसरों की आजादी का सम्मान करने का अधिकार भी रखते हैं।

– अगर हमारे पास सुरक्षा का अधिकार है तो हमारा दायित्व बनता है कि ऐसी दशाएँ सुनिश्चित करें कि मानवीय सुरक्षा का आनंद लिया जा सके।

–यदि हमें देश की राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेते हुए नेता चुनने का अधिकार है, तो हमारा दायित्व बनता है कि हम अपने लिए सुयोग्य नेताओं का चुनाव करें।

– अगर हमारे पास एक अच्छा जीवन स्तर पाने के लिए उचित कार्य दशाओं को पाने का अधिकार है, तो हमारा कर्तव्य और दायित्व भी बनता है कि हम अपनी पूरी क्षमता के साथ कार्य करें।

– अगर हमारे पास विचार, धर्म तथा विवेक की स्वतंत्रता का अधिकार है, तो हमारा दायित्व या कर्तव्य बनता है कि हम दूसरों के धर्मों का भी आदर करें।

–यदि हमारे पास शिक्षा पाने का अधिकार है तो हमारा कर्तव्य बनता है कि हम जितना संभव हो सके शिक्षा को ग्रहण करें और उसे दूसरों को सिखाते हुए, उनके साथ अपने अनुभव बाँटें।

– अगर हम धरती से उसकी संपदा लेने का अधिकार रखते हैं तो उसकी रक्षा करने का दायित्व भी हमारा ही बनता है। हमें इसके प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करते हुए, यह देखना होगा कि धरती के संसाधनों का दोहन न हो।

मनुष्य के रूप में, हमारे पास आत्म–संतुष्टि के लिए पूरी संभावना है। इस प्रकार हमें अपनी भौतिक, भावात्मक तथा आध्यात्मिक क्षमताओं का भरपूर प्रयोग करना चाहिए और साथ ही अपने से जुड़े उत्तरदायित्वों को भी उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए।

सहभागियों की सूची

इंटरएक्शन परिषद सदस्य

एच. इ. श्री हेल्मुट श्मिट

एच. इ. श्री एंड्रीज़

एच. इ. श्री मिगुअल डि ला मैड्रिड हरटाडो

शैक्षिक सलाहकार

प्रोफ़ेसर हान्स कुंग, टुबिन्जेन विश्वविद्यालय

प्रोफ़ेसर थॉमस एस एक्सवर्दी, सार्वजनिक नीति संकाय, हार्वर्ड विश्वविद्यालय

प्रोफ़ेसर किम क्यौंग –डौंग, सियोल नेशनल यूनीवर्सिटी

उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ

कार्डिनल फ्रांज कोनिग, विएना, ऑस्ट्रिया

प्रोफ़ेसर हसन हनाफ़ी, कैरो विश्वविद्यालय

डॉक्टर अरियारत्ने, श्रीलंका के सर्वोदय आंदोलन अध्यक्ष

सेनानिवृत्त आदरणीय जेम्स एच. ओटली, संयुक्त राष्ट्र में एंग्लिकन निरीक्षणकर्ता

डॉक्टर एम. अरम, प्रेजीडेंट, धर्म व शांति विश्व सम्मेलन, अध्यक्ष (एम पी, भारत)

डॉक्टर जुलिया चिंग (कंफ्यूशियसवाद प्रतिनिधि)

डॉक्टर एना–मारी–अगार्ड, वर्ल्ड कौंसिल ऑफ चर्च

डॉक्टर टेरी मैकलुहान, लेखक

प्रोफ़ेसर यरसु किम, यूनेस्को में दर्शन व आचार नीति विभाग निदेशक

प्रोफ़ेसर रिचर्ड रोटरी, स्टेनफोर्ड ह्यूमेनिटी सेंटर

प्रोफ़ेसर पीटर्स लैड्समैन, यूरोपियन एकेडमी ऑफ साईंस, साल्ज़बर्ग

कोज़ी वातानबे राजदूत, रशिया के भूतपर्वू जापानी राजदूत

पत्रकार

सुश्री फ्लोरा लुईस, इंटरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून

श्री वू सुंग यांग, मुन्हवा इल्बो

परियोजना संयोजक

कीको आटसुमी, आईएसी टोक्यो सचिवालय

————————

जकार्ता उद्घोषणा (2003)

धार्मिक व राजनीतिक नेताओं की इंटरएक्शन परिषद सभा का वक्तव्य

विभाजित का सेतुबंधन

11–12 मार्च 2003

हबीबी सेंटर, जकार्ता इंडोनेशिया

इंटरएक्शन परिषद अपनी स्थापना के साथ ही नैतिक मूल्यों व आचार नीति मापदंडों व स्तरों और विशेष रूप से राजनीतिक व व्यावसायिक नेतृत्व में इनके प्रयोग के लिए चिंतित रही है।

1987 में, परिषद ने रोम में आध्यात्मिक नेताओं के साथ परामर्शक सभा का आयोजन किया जिसमें शांति, विकास, जनसंख्या व पर्यावरण जैसे मसलों पर बात की गई। 1996 में विएना में हुई सभा में परिषद ने वैश्विक आचार नीति स्तरों की खोज पर बल दिया, जिन्हें सभी धर्म स्वीकृत कर सकें। जिसके फलस्वरूप मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौमिक उद्घोषणा प्रस्तावित की गई, यदि वह स्वीकृत होगी तो वह कौंसिल के अनुसार मानव अधिकारों की सार्वभौमिक उद्घोषण को बल प्रदान करेगी। 1999 में, कैरो में मिडिल ईस्ट संघर्ष पर चर्चा की गई।

न्यू यॉर्क व वाशिंगटन पर हुए भयंकर हमलों के बाद से परिषद के लिए यह भी चिंता का विषय रहा है कि यह आंतकी युद्ध दो धर्मों के बीच संघर्ष उत्पन्न कर सकता है।

कीनिया, रशिया, भारत व इंडोनेशिया में हुए आतंकी हमलों ने इन मसलों को और भी बल दिया है।

इस प्रकार, निम्नलिखित बिंदओं को ध्यान में रखना और भी महत्वपूर्ण हो जाता हैः

1. संसार की वर्तमान स्थिति, आतंकी युद्ध तथा हथियरों का प्रयोग व जनसंहार और अधिक अस्थिरता का कारण बन सकता है, जिससे सारे संसार की कार्यविधि में बाधा आ सकती है।

2. हो सकता है कि कुछ आतंकी घृणा व जलन का शिकार हों परंतु उनमें से कुछ ऐसे भी हैं, जो अपने साथ कुछ निश्चित उद्देश्य और लक्ष्य रखते हैं, जो उनके अनुसार सार्वभौमिक नहीं स्थानीय महत्व के हैं।

3. एक और अप्रसन्नतादायक यथार्थ यह है कि पश्चिमी देशों की कुछ विशेष नीतियाँ आतंकवाद का कारण बन रही हैं। ऐसे रवैए, विशेष प्रांतों में पक्षपात के बोध, धनी व निर्धन के बीच बढ़ती असमानता आदि के कारण हो सकते हैं और साथ ही तथ्य भी शामिल है कि निर्धनों के पास इतने साधन नहीं कि वे वैश्वीकृत संसार के संसाधनों में हिस्सा ले सकें। संयुक्त राष्ट्र के मिलेनियम डेवलपमेंट लक्ष्य निर्देश देते हैं कि वित्तीय, राजनीतिक, नैतिक तथा संस्थागत साधनों को इस तरह विभाजित किया जाए कि वे सभी लोगों के लिए उचित जीवन स्तर बना सकें, इन लक्ष्यों को क्रियान्वित करना ही होगा।

4. विश्व के राष्ट्रों के बीच रणनीतिपरक तथा आर्थिक न्याय व समानता एक सामान्य उद्देश्य होना चाहिए जिसे आपसी सहयोग, समझ तथा भरोसे के बल पर पाया जा सकता है। यह नीति ऐसे ही साधनों के लिए होनी चाहिए।

5. संयुक्त राष्ट्र द्वारा 'आउटलाइंग ऑफ वार' तथा सुरक्षा परिषद का सातवाँ अध्याय, अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा व शांति के लिए ख़तरे को देखते हुए, शांति के प्रचार में महत्वपूर्ण रहा है। अगर देश अब एकांगी पूर्व–क्रय सिद्धांत को अपना लेते हैं तो पिछले पचास वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय काननू पर किए गए सारे प्रयासों पर पानी फिर जाएगा।

   इसलिए :

   1. हम सभी धामिर्क नेताओं से आग्रह करते हैं कि वे हिंसा या आतंकवाद को किसी प्रकार की धार्मिक स्वीकृति प्रदान न करें।

   2. हम विश्व के नेताओं से आग्रह करते हैं वे विभिन्न धर्मों व जातियों से आए व्यक्तियों के बीच मतभेद को समाप्त करने के लिए सकारात्मक क़दम उठाएँ ; ताकि एक ऐसे सहयोगी जगत की स्थापना हो सके, जहाँ आपसी परिचर्चा और सहमति से ही नतीजों पर विचार हो और विश्व के देशों के बीच न्याय के लिए काम हो सके।

   3. हम सभी छोटे और बड़े देशों से अपील करते हैं कि वे संयुक्त राष्ट्र के लिए और उसके साथ काम करें, और विशेष रूप से सुरक्षा परिषद का साथ दें क्योंकि वे न्याय, समानता तथा शांति अर्जित करने के सबसे उपयुक्त साधन हैं। हम सभी राष्ट्रों से आग्रह करते हैं कि संयुक्त राष्ट्र के कार्यों को सराहें और अंतर्राष्ट्रीय विवादों के निपटारे में इसकी भूमिका को स्वीकारें।

   4. हम सभी देशों से अपील करते हैं कि वे सार्वभौम मानवीय मूल्यों तथा बुनियादी आचार संबंधी नीतियों को मान्यता दें, जिसे सभी धर्मों व मानवतावादी दर्शनों में साझा माना जाता है, ताकि अहिंसा, जीवन के प्रति सम्मान और एकता, न्यायी आर्थिक व्यवस्था, सहिष्णुता, जीवन के प्रति सत्यता, स्त्री–पुरुषों के बीच समान अधिकारों व साझेदारी की संस्कृति विकसित की जा सके।

   5. हम सभी धर्मों तथा देशों से आग्रह करते हैं कि वे इस बात को जानें कि अतिवाद किसी भी प्रकार की धार्मिक या राजनीतिक विचारधारा में पाया जा सकता है, और भले ही यह उनकी सीमाओं में क्यों न पाया जाए, इसका विरोध करते हुए, निंदा की जानी चाहिए।

6. इस प्रकार हम सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक तथा सार्वजनिक मत रखने वाले नेताओं से आग्रह करते हैं कि वे आत्म–संयम तथा आपसी समझ का अभ्यास करें, ताकि उनके अपने कार्यों में अतिवाद को रोका जा सके और उन सामान्य मूल्यों, स्तरों व रवैयों को पहचान दी जा सके, जिनके बिना एक सभ्य मानव समाज की स्थापना नहीं हो सकती।

7. इस प्रकार हम सभी देशों से आग्रह करते हैं कि वे अपनी ही सीमाओं तथा उससे परे होने वाले मतभेदों को दूर करें और आपसी विवादों, दोहरे मापदंडों और भेदभाव का पूरा विरोध करें।

हम इस तथ्य पर बल देते हैं कि यह उद्देश्य तथा मूल्य सार्वभौम तथा देश की सीमाओं से परे हैं। अब 'मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम उद्घोषणा' की भावना को क्रियान्वित करने का समय आ गया है। हमें सह–अस्तित्व, सहयोग, मानव जाति के लिए आर्थिक न्याय, वैश्विक नीति के बुनियादी नियमों की स्मृति ; मानवता के नियम को याद करना होगा, 'प्रत्येक मनुष्य के साथ मनुष्यता का ही व्यवहार होना चाहिए' और सुनहरा नियम : 'दूसरों साथ वैसा न करें, जैसा आप अपने लिए नहीं चाहते।'।

———————————

सहभागियों की सूचीः

इंटरएक्श्न परिषद के सदस्य

1.एच.इ. प्रधान मंत्री मंत्री मेल्कम फ्रेज़र, ऑस्ट्रेलिया

2.एच.इ. प्रधानमंत्री वान आख़्त

3..एच.इ. राष्ट्रपति बकरूद्दीन जुसूफ़ हबीबी, इंडोनेशिया

4..एच.इ. राष्ट्रपति जीमल मौहाद, शिक्षक

धार्मिक नेता

5.आदरणीय स्वामी अग्निवेश, भारत, हिंदू

6.डॉ. कामिल–अल शरीफ़, इंटरनेशनल इस्लामिक कौंसिल, सैक्रेट्री जनरल, मुस्लिम

7.डॉ. ए.टी. आरियारत्ने, प्रेजीडेंट, सर्वोदय श्रमदान आंदोलन, श्रीलंका, बौद्ध

8.आर्कबिशप, फ्रांसिस पी कैरोल, प्रेजीडेंट, ऑस्ट्रेलियन कैथोलिक विशप कांफ्रेंस, कैनबरा व गोलबर्न ऑस्ट्रेलिया के प्रधान पादरी, कैथोलिक

9.आदरणीय टिम कौस्टेलो, बैपटिस्ट चर्च, ऑस्ट्रेलिया, बैपटिस्ट

10. मि. जेम्स जॉर्डन, आर्कडिकोसीजन कौंसिल के सदस्य, ऑस्ट्रेलिया, ग्रीक आर्थोडॉक्स

11.प्रो. ली सूंग हवान, दर्शन के प्रो. कोरिया यूनीवर्सिटी, कंफ्यूशियस

12.प्रो. डॉ ए सयाफी मारिफ, सभापति, मुहम्मिदया, इंडोनेशिया, मुस्लिम

13.श्री रोज़ी मुनीर सभापति, नाहदलतुल उलमा, इंडोनेशिया, मुस्लिम

14.के.एच.हासिम मुदाती, जनरल चेयरमैन, नाहदलतुल उलमा, इंडोनेशिया, मुस्लिम

15.आदरणीय कानोर्ड रेज़र, सैक्रेट्री जनरल, वर्ल्ड कौंसिल ऑफ चर्चिस, स्विटजरलैंड, प्रोटेस्टेंट

16.डॉ. डेविड रोसन, अमेरिकन यहूदी कमेटी के अंतःधार्मिक मामलों के अंतर्राष्ट्रीय निदेशक, यूए.स.ए, यहूदी

17.डॉ. रूसिल, एस.एच. एमएम, इंडोनेशियन बुद्धिस्ट कम्यूनिटी एसोसिएशन, इंडोनेशिया, बौद्ध

18.डॉ नातन सेतियाबुदि, सभापति, द कम्यूनियन ऑफ चर्च इन इंडोनेशिया, इंडोनेशिया, प्रोटेस्टेंट

19.आदरणीय आई.एन.सुवंधा एसएच, सभापति, इंडोनेशियन हिंदूज़ कम्युनिटी ऐसोएिसशन, इंडोनेशिया, हिंदू

20. प्रो. डॉ दीन सयामसुदीन, सैक्रेट्री जनरल, द इंडोनेशियन कौंसिल ऑफ उलेमा, इंडोनेशिया, मुस्लिम

21.पैस्टर एलेक्स वीडोजोजो एसजे, रोमन कैथोलिक चर्च ऑफ जकार्ता, इंडोनेशिया, कैथोलिक

अन्य

22.सुश्री कैथरीन मार्शल डायरेक्टर, डेवलपमेंट डायलॉग ऑन वेल्यूज़ एंड एथिक्स, वर्ल्ड बैंक, यू.एस.ए.

23. डॉ. एस. एम. फरीद मीरबाघेरी, द डायरेक्टर ऑफ रिसर्च, द सेंटर फॉर वर्ल्ड डायलॉग, साइप्रस

24.श्री सीकन सुगिरा, सदस्य, हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव, जापान

2 सीकन सुगिरा, सदस्य, हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव, जापान

25.श्री झांग यी–जुन, चाइनीज़ पीपल्स पोलिटिकल कंसल्टेटिव कांफ्रेंस की नवीं नेशनल कमेटी में, विदेशी मामलों की कमेटी के उप सभापति, जापान

शैक्षिक सलाहकार

26. प्रो. थॉमस एस एक्सवर्दी, कार्यकारी निदेशक, हिस्टोरिका फाउंडेशन, कनाडा

27. प्रो. नगाओ हयोदो, टोक्यो केज़ल यूनीवर्सिटी, जापान (आईएसी के डिप्टी जनरल सैक्रेट्री)

28. प्रो. अमीन सैकल, डायरेक्टर, सेंटर फॉर अरब एंड इस्लामिक स्टडीज़, मिडिल ईस्ट व सेंट्रल एशिया, ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनीवर्सिटी, ऑस्ट्रेलिया

————————————————,

टुबिन्जेन रिपोर्ट (2007)

उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ दल सभा पर सभापति की रिपोर्ट

विश्व राजनीति के कारक के रूप में, विश्व धर्म

सभापति, इंग्वार कैरिसन, सह–सभापति

7–8 मई, 2007, जर्मनी

इंटरएक्शन परिषद 1987 से, धार्मिक और राजनीतिक नेताओं के बीच संवाद आयोजित करवाती रही है, जिनमें शांति, विकास तथा पर्यावरण ही मूल विषय रहे हैं। पिछले दशक में, सभी विश्वासों, दर्शनों व संप्रदायों के चिंतकों ने सार्वभौम नीतिपरक स्तरों को पहचानने पर बल दिया, जिसके कारण 'मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम उद्घोषणा' का प्रस्ताव सामने आया।

सहस्राब्दी के साथ ही विश्व की कुछ समस्याएँ और भी जटिल रूप में सामने आई हैं : धार्मिक मतभेदों ने विवादों को जन्म दिया, ग्लोबल वार्मिंग ने पर्यावरण के लिए संकट पैदा किया और बढ़ते हुए आतंकवाद ने सारी दुनिया को दहला कर रख दिया है। क्या धर्म शांति, न्याय व नीतिपरक मूल्यों के लिए बल बन सकता है? क्या लोगों को सहिष्णुता का पाठ पढ़ाया जा सकता है – ऐसी सहिष्णुता, जो उपेक्षा से नहीं, सम्मान से उपजे? क्या समाज अन्य राष्ट्रों व व्यक्तियों की सांस्कृतिक व धार्मिक पहचान को सम्मान देने की चुनौती को पूरा कर सकते हैं? क्या विश्व एक नए वैश्विक पड़ोस को मान्यता दे सकता है? क्या नेतागण ठोस सकारात्मक विचारों को स्थापित करने की आशा रख सकते हैं?

हो सकता है कि विश्व धर्म की इस आधुनिक उथल–पुथल के बीच दूसरे अक्षीय युग में प्रवेश कर जाए। जर्मनी में, टुबिन्जेन में, 7–9 मई 2007 को उच्च स्तरीय विशेषज्ञों की यह सभा, जाने–माने ग्लोबल एथिक फाउंडेशन में आयोजित की गई, इंटर एक्शन परिषद ने धार्मिक नेताओं से आग्रह किया कि वे मिल कर, अस्तित्व में सार्थकता तथा राजनीति में शांति के उपायों पर विचार करें।

1. सामान्य आधार

कोई एक यहूदी, ईसाई या एक इस्लाम धर्म नहीं है ; कोई एक बौद्ध या हिंदू धर्म नहीं है। बहुत सारी मान्यताओं के मेल से चीनी धर्म बने हैं। प्रत्येक धर्म के पास विविध विश्वास, धार्मिक आस्था तथा मान्यताएँ हैं।

हालाँकि धर्मों के बीच पाई जाने वाली विविधता को पहचान दी गई है, इसके साथ ही धर्मों में सामान्य रूप से पाए जाने वाले आधारों को भी मान्यता दी जानी चाहिए। तीन एकेश्वरवादी आपस में एक–दूसरे के विरुद्ध देखे जा रहे हैं, परंतु अब हमें पहले से भी कहीं अधिक, इन धर्मों को आपसी संबंधों के बीच परिभाषित करना होगा। इंटर–फेथ शिक्षा के माध्यम से इन लक्ष्यों को साकार किया जा सकता है। दरअसल, इंटर–फेथ या अंतः–धर्म संबंधी परिचर्चा में सिखाने की बजाए सीखने की अपेक्षा की जानी चाहिए।

गंभीर संवाद अपने–आप में एक कला है, जिसे बहुत सावधानी से पोषित करना चाहिए, और स्थानीय, निजी, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर इन संवादात्मक संबंधों के लाभों को कम नहीं आँक सकते। संवाद के माध्यम से हम न तो किसी को लुभा रहे हैं और यह न ही किसी के धर्मांतरण की रणनीति है। यह आपस में साझा मूल्यों की गहरी समझ है। दूसरों के धर्म और संस्कृति के बारे में जानकारी बढ़ाने को सदा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और उसके साधारणीकरण से बचना चाहिए।

संवाद के माध्यम से दूसरों से सीखने के मोल को आदर दिया जा सकता है। यदि बृहत्तर अर्थ में लिया जाए, हमारा लक्ष्य यही होना चाहिए कि हम 'सिखाने वाले समाज' के स्थान पर 'सीखने वाले समाज' बने रहें और अपने बच्चों को विश्व के सभी धर्मों के मतभेदों की बजाए सामान्य तथ्यों का ज्ञान दे सकें।

इस प्रकार, 'मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम उद्घोषणा', का महत्व और भी अधिक हो जाता है। राजनेता, धार्मिक विद्वान, नास्तिक तथा अनीश्वरवादी सामान्य वैश्विक आचार नीतियों को पहचान देने में सफल रहे हैं। धार्मिक स्वतंत्रता में यह अधिकार भी शामिल है कि आप किसी को धर्म विशेष को मानने के लिए शारीरिक या नैतिक रूप से विवश न करें। यह सार्वभौमिक नीति परक स्तर आपसी मान्यताओं तथा दूसरों के विवेक को सम्मान देना सिखाते हैं। इस प्रकार हम विश्व के धार्मिक और राजनीतिक नेताओं द्वारा तैयार किए गए मानव उत्तरदायित्वों की सार्वभौम उद्घोषणा' को पुनः अपनी स्वीकृति प्रदान करते हैं, जो सभी धर्मों मे व्याप्त सामान्य नीति संबंधी मूल्यों की स्थापना कर सकती है।

2. राजनीति व धर्म का परस्पर संबंध

उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ सभा ने आपस में सामान्य आधारों पर चर्चा करते हुए, राजनीति में धर्म के प्रभाव पर भी चर्चा की। विपरीत दिशाओं में जा रहे, वैश्विक आंदोलनों के कारण राजनीतिक व धार्मिक तनाव भी बढ़ता जा रहा है। कुछ हिस्सों में संप्रदायवाद और कुछ हिस्सों में धर्मांधत को बढ़ावा मिल रहा है। यूरोपियन वेस्ट में, चर्च जाने वालों की संख्या में बीस प्रतिशत तक गिरावट आई है। वहीं, यूएस में धर्म का प्रभाव अधिक हो रहा है और वर्तमान में लगभग, 65 प्रतिशत अमेरिकी प्रति सप्ताह चर्च जाते हैं। अरब देशों तथा कुछ एशियाई देशों में भी धर्म का प्रभाव अधिक हुआ है।

वैसे तो धार्मिक आंदोलन राष्ट्रीय राजनीति पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं किंतु प्रायः ऐसी स्थिति भी आ जाती है, जहाँ राजनेता धर्म का शोषण करते हैं, वे दूसरों की अज्ञानता का लाभ उठाते हुए, अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए असुरक्षा के बीच बोते हैं। अज्ञान, धर्म तथा राष्ट्रवाद का मेल युद्ध की ख़तरनाक

संभावना पैदा करता है। धर्म तथा राजनीति के इस मेल ने, कई अंतर्राष्ट्रीय विवादों को जन्म देते हुए अत्याचारी शासनों को अपना समर्थन दिया है, जिनमें इराक और अफगानिस्तान के युद्ध, इज़रायल/फिलीस्तीन संघर्ष, श्रीलंका का गृह युद्ध तथा थाईलैंड की नई हिंसा शामिल है।

वास्तव में, कई बार राजनीतिक निर्णय धार्मिक सिद्धांतों से पूरी तरह से विपरीत हो सकते हैं। रुढ़िवाद किसी भी धर्म का अनिवार्य लक्षण नहीं होता, परंतु यह कईयों का एक लक्षण हो सकता है। हमारा काम यही है कि हम धार्मिक नेताओं को चुनौती दें कि वे अपने धर्म का दुरुपयोग होने से बचाएँ, धार्मिक अतिवाद को राजनीतिक शोषण का खिलौना न बनने दें और संयमित धार्मिक आंदोलनों को मजबूती और समर्थन प्रदान करें।

3. अग्रसर होने के लिए :

इन सभी जटिल मसलों के बावजूद, उच्च स्तरीय विशेषज्ञ सभा में अनेक नेता अब भी आगे की राह को प्रशस्त पा रहे हैं। उन्हें लगता है कि उन्हें आशा की एक किरण दिख सकती है। मानवीय गरिमा, मानव अधिकारों व दायित्वों के मानवशास्त्रीय अधिकार, इस संसार को सार्वभौम मान्यता के साथ साझी आचारनीति प्रदान करते हैं।

इस नए वैश्विक पड़ोस के युग में, हमें उत्तरदायी वैश्विक नागरिक चाहिए। भविष्य में, धार्मिक नेता और भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगे। उन्हें दो भाषाओं में प्रवीणता हासिल करनी चाहिए : उनके अपने धर्म व संप्रदाय की भाषा तथा दूसरी वैश्विक नागरिकता की भाषा। इस प्रकार जातियों, वंशों व लिंगों के बीच राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक समानता के लिए वैश्विक आचार नीति को स्वीकार करने का अवसर प्राप्त होगा।

हमारी बड़ी समस्याओं में से एक बड़ी समस्या यह भी है कि हमें भावी पीढ़ी के लिए पर्यावरण की रक्षा करनी है। इस धरती पर हर प्रजाति अपना महत्व रखती है परंतु प्रतिदिन सौ से अधिक प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं। धार्मिक नेता यहाँ अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, वे लोगों को वैश्विक चुनौतियों का सामना करने की कला सिखा सकते हैं, वे इस ग्रह को बचाए रखने के लिए पारिस्थितिक संवेदनशीलता को पोषित कर सकते हैं। हमें धरती के शोषक बनने की बजाए इसके अंगरक्षकों की भूमिका में आना होगा।

पिछले पच्चीस वर्षों के दौरान, धर्मों व संप्रदायों के आपसी संवादों में अंतर आया है। इस बात पर बल दिया जाने लगा है धार्मिक मतभेदों से मानवता को हानि नहीं होनी चाहिए,

इसकी बजाए धर्मों को, लोगों को प्रेरित करना चाहिए कि वे मानवता में अपने आदर्शों की तलाश करें किंतु अभी ऐसा होना आरंभ ही हुआ है।

3. अनुशंसाएँ :

अग्रसर होने के लिए ; उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ दल के सभापति निम्नलिखित की अनुशंसा करते हैं:

– मनुष्य के उत्तरदायित्वों को हमारे समय के संदर्भ में समझते हुए, मानवीय उत्तरदायित्वों की सार्वभौमिक उद्घोषणा को नए सिरे से पुष्टि व बल प्रदान करना तथा आंतरिक मूल्यों की स्थापना करना जैसे – न्याय, करुणा, सभ्यता व सामंजस्य – ताकि मानव अधिकार समर्थकों के साथ एक सार्थक संवाद संभव हो सके।

– इस समझ का प्रचार करना कि सभी धर्म एक समान आचार नीति रखते हैं – एकरूपता के बिना सामंजस्य –साथ ही वैश्विक आचार नीति स्तरों के साथ वैश्विक नागरिकता की चेतना व एक समान मानवता की चेतना में निखार।

– वैश्विक नागरिकता के विचार का समर्थन व अभ्यास ताकि आत्म–बोध के आकांक्षी एक सार्थक संवाद कर सकें और वैश्विक पड़ोस में अपने दायित्वों का निर्वहन करें।

– अंतः विश्वासों पर आधरित शिक्षा को लागू करने की कार्य योजना पर बल देना ताकि सहिष्णुता, सम्मान, आपसी संदर्भों तथा धार्मिक मान्यताओं, मूल्यों व अभ्यासों को सराहा जा सके।

– धार्मिक स्वतंत्रता को समर्थन : मुक्तमना तथा शांतिपूर्ण धार्मिक आंदोलनों को बढ़ावा; और समाज के सभी नेताओं को प्रोत्साहित करना कि वे धार्मिक नेताओं के साथ मिल कर, धर्म के दुरूपयोग व राजनीतिकरण को रोकें व उस पर अपनी अस्वीकृति की मुहर लगाएँ।

–मनुष्य जाति की व्यावहारिकता पर आए संकट को पहचानना, धार्मिक आंदोलनों की शक्ति में निखार लाना ताकि जीवन के प्रति सम्मान से जुड़े पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना किया जा सके और भावी पीढ़ी के लिए धरती की सुरक्षा की जा सके ; और

– धार्मिक समुदायों की बहुलता तथा सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित रखते हुए, शांति व एकता के प्रचार के उपाय किए जा सकें।

————————————

सहभागियों की सूची

इंटरएक्शन परिषद सदस्य

1.एच. इ. श्री हेल्मुट श्मिट, जर्मनी के भूतपूर्व चांसलर

2.सेवानिवृत्त आदरणीय श्री मेल्कम फ्रेज़र, आदरणीय सभापति, ऑस्ट्रेलिया के भूतपूर्व प्रधानमंत्री

3.एच. इ. श्री इंग्वार कैरीसन, सह–सभापति, स्वीडन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री

4.एच.इ. श्री अबदल सलाम मजाली, जॉर्डन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री

5.एच. इ. श्री फ्रांज़ वरानतिज़्की, ऑस्ट्रिया के भूतपूर्व चांसलर

उच्च–स्तरीय विशेषज्ञ

6.डॉ ए. कमाल अबोलमगद, इस्लाम, सुन्नी, एटॉर्नी एट लॉ, मिस्र

7.डॉ केज़ेवीनो अरम, हिंदू, निदेशक, शांति आश्रम, भारत

8.आदरणीय डॉ मेट्टानंदो भिक्खु, थेरावद बौद्ध, शांति के लिए विश्व धर्म सभा में बौद्ध मामलों के सलाहकार (थाईलैंड)

9.प्रोफ़ेसर हान्स कुंग, टुबिन्जेन विश्वविद्यालय

10.प्रो. कार्ल जोसेफ कुशेल, ईसाई, जर्मनी के ग्लोबल एथिक फाउंडेशन के उप–अध्यक्ष

11.रब्बी जोनाथन मैगोनेट, यहूदी, लियो बीक कॉलेज, यू.के.

12. कीनिय के आर्कबिशप माकारियोस, ग्रीक आर्थोडॉक्स, साइप्रस

13.डॉ स्टीफन श्लेनसॉग, हिंदू विशेषज्ञ, जर्मनी के ग्लोबल एथिक फाउंडेशन के सैक्रट्री–जनरल

14.डॉ अब्दुल करीम सोरूश (इस्लाम, शिया), इरान

15. डॉ. तू वेल्मिंग चीनी धर्म व दर्शन, हार्वर्ड यूनीवर्सिटी, चीन

16. डॉ ओसामु योशीदा, महायान बौद्ध, प्रो., टोयो विश्वविद्यालय, जापान

सलाहकार

17. प्रोफ़ेसर थॉमस एस एक्सवर्दी, प्रो. क्वीन यूनीवर्सिटी, कनाडा

18.डॉ. गुंथर गेबहार्ड, ग्लोबल एथिक फाउंडेशन, जर्मनी

19 प्रो. नागाओ हयोदो, बेल्जियम के भूतपूर्व राजदूत, जापान

सैक्रेट्री जनरल

20.प्रो. इसामु मियाज़ाक़ी, आर्थिक नियोजन के भूतपूर्व मंत्री, जापान

संपादक की ओर से

नीतिशास्त्र जैसे कल्याणकारी और विशद विषय के लिए कोई न्याय कैसे कर सकता है? जहाँ ये एक ओर एक भला काज है, वहीं दूसरी ओर निराशा व कुंठा का कारण भी बनता है। मनुष्यों के पास ऐसी क्षमता है कि वे अपने संपर्क में आने वाली हर वस्तु को विनष्ट कर सकते हैं, भले ही वह धरती ग्रह ही क्यों न हो। तो ऐसे में धर्म व संस्कृति के आधार पर तैयार किए गए अनुबंध के पालन के लिए कितनी आशा की जा सकती है?

2014 में, इंटरएक्शन परिषद की विएना कांफ्रेंस का हिस्सा बनने से पहले, मेरे मन में ऐसे ही सवाल आते थे। मैं वहाँ उपस्थित भागीदारों की आपसी मंशा और सद्भावना को देख सुखद आश्चर्य से भर उठा, जो चुनौतियों का सामना करने के लिए पूरी तरह से तैयार थे। यह उन हिस्सेदारों के लिए एक तरह की निजी श्रद्धांजलि ही है, कि मैंने कारवाईयों और पहले के कुछ महत्वपूर्ण प्रपत्रों के संपादन कर काम अपने हाथों में लिया, ताकि विएना में हमारे कार्यों तथा परिषद के पिछले कामों और इस काम के लिए हुई सभाओं का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ तैयार हो जाए।

मेरी सद्भावना में कमी नहीं थी परंतु मुझे भय था कि कहीं मौखिक वक्तव्यों को लिखित रूप देते समय, मैं कहीं वक्ता के भावों के साथ अन्याय न कर बैठूँ। ठीक इसी प्रकार, अप्रचलित वाक्यों और प्रपत्रों में लिखे विषय को और अधिक बोधगम्य बनाने के प्रयास में, हो सकता है कि मैं उन वक्तव्यों को उस रूप में प्रस्तुत न कर सका होऊँ, जिस रूप में वे उन्हें प्रस्तुत करना चाहते थे।

मैं इन सभी भूलों या असफलताओं के लिए हार्दिक रूप से क्षमा चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण किसी को भी हार्दिक कष्ट हो। मेरा प्रयास यही रहा कि वक्ता का मूल संदेश तथा उसकी बातों का पूरा सार, सही मायनों में श्रोताओं व पाठकों तक पहुँचे। मेरा मानना है कि सबके संदेशों में एक ही स्वर मूल रूप से मुखरित हुआ है, 'शांति से प्रेम करो, शांति की स्थापना करो, मानवजाति से प्रेम करो और उन्हें सत्य के निकट लाओ।' – हिलेल द एल्डर

दिसंबर 2014

जर्मी रोसन

———————

इंटरएक्शन परिषद सचिवालय

टोक्यो कार्यालय

3—16—13—706

रोपोंगी

मिनातो—कू, टोक्यो

106—0032 जापान

दूरभाष : 813—5549—2950

फैक्स : 813—5549—2955

टोरंटो कार्यालय

30 गोल्फक्रेस्ट रोड, टोरंटो,

ओंटेरियो, एम 9एआई एल 4

कनाडा

दूरभाष — 1—416—551—0159

फैक्स — 1—416—551—0365

विएना कार्यालय

ए. बामगर्टनस्टर

44बी / 8 / 011

ए—1230, विएना,

ऑस्ट्रिया

दूरभाष—फैक्स : 43—1—667—3101